Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111298

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न की पत्रिका 'भारती' से संबन्धित

नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट

दिसंबर १९८३

सि-0957

चन्दे से प्राप्त संख्या 43

प्राप्ति दिनांक 30-12-8

मूल्य रु. २.७५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

१११२९८
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
111298

भारतीय विद्या भवन

पुस्तक बिक्री विभाग

भवन के चुने हुए हिन्दी प्रकाशन

शीर्षक	लेखक	पृष्ठ	मूल्य
१–कृष्णं वन्दे जगद् गुरुम् (कलात्मक सज्जा, सचित्र : प्लास्टिक आवरण के साथ : रियायती मूल्य)	घनश्यामदास बिरला	१२३	रु. १०-००
२–बापू की प्रेम प्रसादी (चार खंडों में : कड़े कपड़े की जिल्द : रियायती मूल्य) (प्रथम खंड अप्राप्य)	"	१-५१५ २-४१८ ३-४०८ ४-४९२	रु. १०-०० प्रत्येक खंड
३–भगवान स्वामिनारायण के वचनामृत	अनुवाद : रामवल्लभ शास्त्री	६४२	६०-००
४–श्रीवेणुगीतम्	आर. कलाधर भट्ट	२८७	३५-००
५–योग और विद्यार्थी	योगाचार्य हंसराज यादव	२०४	१२-५०
६–राष्ट्रनिर्माता सरदार पटेल	आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री	२६०	१०-००
७–विश्वनागरी	रामेश्वर कन्हैयालाल लोहिया	८२	१५-००
८–भारतीय विद्या	डा. श्रीधर भास्कर वर्णेकर	१२६	६-००
९–विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर	इलाचन्द्र जोशी	२८२	४-००
१०–प्राचीन भारतीय मनोरंजन	मन्मथ राय	३३९	५-२५
११–भारतीय संस्कृत और इतिहास	डा. बैजनाथ पुरी	२५२	५-००
१२–भारतीय संविधान के सिद्धान्त	चन्द्रभान अग्रवाल	३५७	१०-००
१३–रवीन्द्र रत्नाकर	रघुवंशलाल गुप्त	१८४	५-००
१४–बद्रीनाथ की ओर	क. मा. मुन्शी	६६	१-००
१५–गीता का प्रेरक तत्व जीवन योग	काका साहेब कालेलकर	३८	१-००
१६–महानता के दृष्टान्त	योगाचार्य हंसराज यादव	१३२	३-००

प्राप्ति स्थान :

भारतीय विद्या भवन, कुलपति मुन्शी मार्ग, बम्बई–४०० ००७

तथा उसके सभी केन्द्रों पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवनीत

संस्थापक
कन्हैयालाल मुंशी श्रीगोपाल नेवटिया
भारती : स्था. १९५६ नवनीत : स्था. १९५२

*

संपादक
वीरेन्द्रकुमार जैन

सह-संपादक
गिरिजाशंकर त्रिवेदी

उप-संपादक
रामलाल शुक्ल

*

संयोजक
शान्तिलाल तोलाट

*

प्रकाशक
सु. रामकृष्णन्

*

आवरण-चित्र :
ठाकोरभाई राणा

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन

वर्ष : ३२; अंक : १२

नवनीत : आपकी निगाह में ४
ऐतिहासिक नगर जैसलमेर . . . मोहनलाल पुरोहित ६
योगिराज श्यामाचरण लाहिड़ी भगवानशरण भारद्वाज १५
एक भारत-प्रेमी ईसाई . . . हरि २१
अद्‌भुत कर्मयोगी दीनानाथ दुबे २५
लहसुन अतुल गोस्वामी २९
प्रार्थना . . . ३३
ऋग्वेद और अवेस्ता राधाकुमुद मुकर्जी ३४
काव्य-यज्ञ का साक्षात्कार नरेश मेहता ३६
अपनी खोज : ध्यान के माध्यम से पेराला रत्नम् ४५
पतझड़ के पत्ते (अंग्रेजी कहानी) एन्थेनी ग्रे ४८
अफगानिस्तान : ऋग्वैदिक काल में एस. वी. रॉय ५३
'उन्होंने कुछ किया नहीं. . . . . .' पॉल ब्रंटन ६०
ईश्वर का न्याय (अंग्रेजी कहानी) सामरसेट मॉम ६५
जब ईसा भारत आये थे आदित्य ६८
भुक्तशेष (हिंदी कहानी) श्रीमती सुधा ७२
जहां राजमुकुट गेंद की तरह उछाला गया था डा. देशराज पाण्डेय ७६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुलपति मुन्शी मार्ग, बम्बई-४०० ००७

दिसंबर १९८३

प्रेमचंद : दृष्टि की तलाश में बेचैन
लेखक डा. प्रभाकर श्रोत्रिय ८४

चित्रकार रवि वर्मा की प्रपौत्री रुक्मिणी वर्मा से एक भेंटवार्ता
विजय शंकर ९२

पहला बड़ा दिन : क्रिसमस
भारती शर्मा ९६

मरने के लिए बहुत समय पड़ा है
मुहम्मद हजाजी ९७

उजली चादर : अंधकार के धब्बे
डा. सुधा जैन १०३

महादेवी वर्मा : हमारी आलोकजीवी संस्कृति १०४

ज्योति की जय (कविता)
आत्म प्रकाश शुक्ल १११

मृतात्माओं से संदेश-प्राप्ति
कीर्तिस्वरूप रावत ११२

मृत्युंजयी प्रेम (सार-संक्षेप)
जेम्स जॉयस १२०

अमावस की रात में... (बालकथा)
शिवनारायण सिंह १३४

चित्र-सज्जा : ओके, शेणै, रुक्मिणी देवी, जगदीश गुप्त, डा. विष्णु भटनागर, राणा, पवनकुमार जैन

अमृतं तु विद्या

भारतीय विद्या भवन

१९३८ में संस्थापित पूर्णतया शिक्षा, कला और संस्कृति के प्रति समर्पित, जनसेवी धर्मादा न्यास, संस्थापक : कुलपति क. मा. मुन्शी, अध्यक्ष : श्री धरमसी म. खटाऊ, उपाध्यक्ष : श्री गिरधारीलाल मेहता

सहयोगी प्रतिष्ठान

१- मुम्बादेवी संस्कृत महाविद्यालय २-शास्त्रीय संस्कृत परीक्षा विभाग ३-सरल संस्कृत परीक्षा विभाग ४-गीता विद्यालय ५-मुंगालाल गोयनका स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध प्रतिष्ठान ६-मुन्शी सरस्वती मंदिर (पुस्तकालय) ७- वल्लभजी रामजी बाल पुस्तकालय ८-भारतीय संगीत शिक्षापीठ ९- भारतीय नर्तन शिक्षापीठ १०-भारतीय इतिहास विभाग ११-प्रकाशन मंदिर, पुस्तक युनिवर्सिटी, मुन्शी साहित्य, भारतीय विद्या (भारतीय विद्या त्रैमासिक), भवन्स जर्नल (अंग्रेजी पाक्षिक), संविद (संस्कृत त्रैमासिक), नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट (हिन्दी मासिक), नवनीत समर्पण (गुजराती मासिक) १२-प्राचीन अंतर्दृष्टियाँ और आधुनिक आविष्कार योजना १३-औपनिषदिक योजना १४-राजाजी शतवार्षिकी समिति १५-म. म. कला कालेज और म. म. विज्ञान [illegible] संस्थान (अंधेरी) १६-वल्लभराम मेहता पब्लिक स्कूल (नयी दिल्ली) १७-हजारीमल सोमानी कालेज, कला एवं विज्ञान (चौपाटी, बम्बई) १८- सरदार पटेल अभियांत्रिकी कालेज (अंधेरी) १९- रणछोड़लाल अचरतलाल विज्ञान कालेज (अहमदाबाद) २०- रणछोड़लाल अचरतलाल कला एवं वाणिज्य कालेज (अहमदाबाद) २१-जमोदावेश वाणिज्य कालेज, (डाकोर) २२- कला एवं विज्ञान कालेज (डाकोर) २३- स्वामीनारायण पालिटेकनिक (डाकोर) २४- श्री [illegible] कालिदास जोशी महिला कालेज (जामनगर) २५- व. म. मेहता विज्ञान कालेज (भरवारी) २६- राजेन्द्र प्रसाद संप्रेषण एवं प्रबंध विद्या प्रतिष्ठान (यूनिटें : प्राणलाल देवकरन नानजी संप्रेषण एवं प्रबंध-विद्या, कालेज, बम्बई, सरदार पटेल जनसंप्रेषण कालेज, नयी दिल्ली; हरिलाल भगवती जनसंप्रेषण कालेज अहमदाबाद तथा बंगलौर; सोमानी जनसंप्रेषण कालेज, एरनाकुलम्; बड़ौदा, चंडीगढ़, गुंटूर, हैदराबाद, मंगलौर तथा त्रिचूर में स्थित जनसंप्रेषण कालेज) २७- [illegible] नेहरू भाषा अकादमी, नयी दिल्ली २८-ब. ह. वाडिया स्कूल (अंधेरी) २९- वल्लभराम मेहता पब्लिक स्कूल (विद्याश्रम) बड़ौदा तथा भरवारी ३०-भवन का विद्या मंदिर, एलामक्कर, एरनाकुलम ३१- कोचीनयार्ड पर भवन का स्कूल, कोचीन ३२- वल्लभराम मेहता पब्लिक स्कूल (विद्याश्रम) भरवारी, इलाहाबाद के पास ३३- भवन का पब्लिक स्कूल, भेल, रामचन्द्रपुरम्, हैदराबाद ३४- संयुक्त संस्थाएँ : संस्कृत विश्व परिषद; भारतीय स्त्री सेवा संघ; ज्योतिष परिषद् (बम्बई) ३५- संस्कृति पाठ्यक्रम पुस्तकें।

केन्द्र और कार्यालय

अहमदाबाद, बंगलौर, बड़ौदा, भोपाल, भुवनेश्वर, कलकत्ता, चंडीगढ़, कोयम्बतूर, डाकोर, दिल्ली, एरनाकुलम, गुंटूर, हैदराबाद, [illegible], जामनगर, काकीनाडा, कानपुर, मद्रास, मदुरै, मंगलौर, [illegible], नागपुर, त्रिवेन्द्रम, श्रीनगर, त्रिचूर, विशाखापट्टनम्, लंदन (संयुक्त राज्य)।

भारतीय विद्या भवन
के.एम.मुन्शी मार्ग, चौपाटी, बम्बई-४०० ००७

फोन : ३५१४६१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवनीत : आपकी निगाह में

□

सूरदास की सौंदर्य साधना का ऋजु शैली में निरूपण करने के लिए डॉ. विद्यानिवास मिश्र धन्यवाद के पात्र हैं। विशिष्ट विद्वान के लंबे लेख 'सूर की भाव-भाषा' को लगातार दो अंकों के अंतर्गत ललित रूप में प्रकाशित देखकर मेरे जैसे सूर-प्रेमी का **नवनीत** के प्रति नेह नृत्यरत हो गया है।

—क्षितिकंठ, चंपारन, बिहार

०००

अगस्त ८३ का **नवनीत** परातत्व-विषयक लेख की बाहुल्यता के कारण उबाऊ लगा। मैं **नवनीत** का नियमित पाठक हूं। चेष्टा करने पर भी यह अंक नहीं पढ़ सका। ऐसा एक लेख ही एक अंक के लिए पर्याप्त होता है। 'बुढ़ापा और आंखें' के लिए साधुवाद!

—डा. भोलाप्रसाद गुप्त, मनिहारी, कटिहार, बिहार

०००

नवनीत का पाठक हूं। वास्तव में यह उच्च कोटि की पत्रिका है, परंतु इसके लिए महीने भर तक अगले अंक की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। अतः इसे पाक्षिक क्यों न कर दें। सार-संक्षेप हिंदी लेखकों की रचनाओं का ही दें, तो अच्छा हो। हां, कभी-कभी अन्य भाषाओं से भी देते रहें, तो हर्ज नहीं है।

—दुर्गादास अग्रवाल, दरभंगा, बिहार

०००

भाषा का सही प्रयोग भी विद्वता का सूचक है, जिसमें **नवनीत** पत्रिका खरी उतरती है।

नवनीत में कभी-कभी लेख के अंत में रोचक प्रसंग भी छपते हैं, उनसे मैं अत्यंत प्रभावित होता हूं।

—फूलचंद शर्मा, रायपुर, म. प्र.

०००

नवनीत का वर्षों से नियमित पाठक हूं। अगस्त'८३ का अंक भी पढ़ा। इस युग में **नवनीत** के सहारे ही शायद प्रबुद्ध पीढ़ी कुछ संतोष कर रही है। इस अंक में नरेशचंद्र नरेश की कहानी 'रिश्ते' सोचने की दृष्टि से नयी तरह की लगी और संजय खाती का वैज्ञानिक लेख ज्ञान की नयी दिशा प्रदान करने वाला। 'सूर की भाव भाषा' में डॉ. विद्यानिवास मिश्र सुधी पाठक को अपने साथ भावभाषा में बहाकर सूर से साक्षात्कार कराने में सफल रहे हैं। **—अशोक जैन, छिंदवाड़ा**

०००

अगस्त'८३ का अंक बड़ा ही रोचक और ज्ञानवर्धक रहा। इसे हम अद्भुत संयोग कहें या सौभाग्य कि इस अंक में एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही साथ महाकवि तुलसी और सूर दोनों से संबंधित लेख छापे गये हैं। यह केवल हमारे लिए ही नहीं, वरन् पटना विश्व-विद्यालय के हिंदी स्नातकोत्तर कक्षा के लिए विशेष लाभदायक और उपयोगी हुआ, क्योंकि यहां का विशेष पत्र सूर और तुलसी से संबंधित है।

—श्यामलता, पटना, बिहार

०००

अगस्त '८३ का **नवनीत** आद्योपांत पढ़ गया हूं। इसमें सन्निहित सामग्री न केवल श्रेष्ठ संपादन-कला का उत्कृष्ट नमूना है, अपितु भारतीय संस्कृति और आध्यात्मिक चेतना के विकास की दिशा में एक स्तुत्य प्रयास है। शायद ही किसी भारतीय मासिक पत्रिका में इतनी श्रेष्ठ सामग्री मिले। चाहे 'महाकवि विल्हण का देश-दर्शन' हो या 'रामचरित मानस का गुजराती पद्यानुवाद'; 'कैलास पर्वत की महिमा' हो या 'तीर्थाटन और सांस्कृतिक परंपरा'; 'भारतीय अस्मिता के वैतालिक तुलसीदास' हो अथवा 'सूर की भाव-भाषा', 'एक झांकी आसाम की हो' या 'लोकसंगीत में मैत्री भावना'; 'सलीबों पर मौत का गवाह' हो या 'ब्रह्मचिताग्रंथ की गूढ़विद्या' सभी रचनाएं स्तरीय और सत्प्रेरणादायक हैं।

—प्रो. रामाश्रय प्रसाद सिंह,
मोतिहारी, बिहार

०००

नवनीत अक्टूबर '८३ का अंक मुझे बहुत पसंद आया। इस अंक में 'भारत में सूर्योपासना की प्राचीनता', 'प्रेम की प्रांजल प्रतिमा : राधा', 'शक्ति पूजा की परम्परा : विजयादशमी'—हमारी संस्कृति पर प्रकाश डालनेवाले उत्तम लेख हैं। 'डायमंड की दुनिया' एवं 'प्रभु के आधीन' कहानी तो वास्तव में जीवन की अनुभूति के यथार्थ हस्ताक्षर हैं। अतः साधुवाद स्वीकार कीजिये।

—लक्ष्मण विश्वनाथ दुबे, देवास, म. प्र.

०००

उत्तमोत्तम रचनाओं से भरपूर **नवनीत** का सितम्बर १९८३ का अंक बहुत ही रोचक, मनोरंजक, शिक्षाप्रद, प्रेरणादायक एवं उपयोगी रहा। ऐसे तो सम्पूर्ण अंक ही पठनीय रहा, परन्तु 'भारत की चमत्कारिक विजय', 'महान विभूति घनश्यामदास बिरला', 'काव्य-तपस्विनी महादेवी वर्मा' तथा 'हिन्दी : महापुरुषों की दृष्टि में' आदि रचनाएं विशेष अच्छी लगीं।

'भारत की चमत्कारिक विजय' लेख में प्रूडैन्शियल विश्व कप प्रतियोगिता में भारतीय टीम की विजय का वृतांत हृदयस्पर्शी रहा। निस्संदेह विश्व कप प्रतियोगिता में भारतीय क्रिकेट टीम की महान विजय भारतीय क्रिकेट-इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण स्वर्णाक्षरों में अंकित करने योग्य घटना है।

—शकुनचन्द गुप्त विशारद, लालगंज,
रायबरेली, उ. प्र.

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐतिहासिक नगर जैसलमेर और जैन ग्रंथागार

□

मोहनलाल पुरोहित

जैसलमेर राजस्थान के पश्चिम में स्थित एक बहुत ही प्राचीन नगर है। अपनी उत्कृष्ट स्थापत्यकला, बेजोड़ मूर्ति-कला, गौरवमय इतिहास और प्राचीन हस्तलिखित साहित्य को लेकर जहां इसकी ख्याति किंवा लोक-प्रसिद्धि रही है—वहां यह अपनी प्राचीन सभ्यता व संस्कृति को लेकर भी देश-विदेश के पर्यटकों के लिए आज भी आकर्षण का केंद्र बना हुआ है। इतिहास इस बात का साक्षी है—आज से करीब ५००-६०० वर्ष पूर्व, जैसलमेर अपनी समृद्धि की, पराकाष्ठा पर था। पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में एवं सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही जैसलमेर की स्थापत्य-कला का आविर्भाव हुआ। उस समय जैसलमेर भारत का एक बहुत बड़ा व्यावसायिक केंद्र माना जाता था। रूस, अफगानिस्तान, चीन, सिंध, भावलपुर, कराची आदि प्रमुख नगरों और स्थानों से आयात होने वाला माल-असबाब जैसलमेर में से गुज़र कर ही भारत के अन्य प्रदेशों में पहुंचाया जाता था।

जैसलमेर के विगत राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास के पृष्ठों पर जब एक दृष्टिपात करते हैं, तो ऐसा भान होता है कि इस अर्से में, इस काल-विशेष में जैसलमेर का जैन-समाज अपने व्यवसाय द्वारा उन्नति के शिखर पर और प्रगति के पथ पर था। जैन बंधुओं ने जैसलमेर में इस समय बड़े-बड़े भवन बनवाये, बड़े-बड़े सुंदर मंदिर बनवाये और इस प्रकार हम देखते हैं कि उन्होंने यहां की वास्तु-कला व स्थापत्य-कला को बड़ा भारी प्रोत्साहन और आश्रय दिया। जैसलमेर दुर्ग में निर्मित तथा स्थित जैन-मंदिर, पटुवों की हवेलियां, अमर-सागर के जैन-मंदिर, लुद्रवा के जैन-मंदिर आदि कला की दृष्टि से बड़े ही अद्वितीय एवं अपनी एक मिसाल हैं। श्रम तथा पूंजी के योग से बने ये विशाल जैन-मंदिर वास्तव में ज्ञान, भक्ति और कर्म के दर्शनीय स्थल रहे हैं। अपने सत्य-पथ से भूले-भटके मानव को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का संदेश ये तब से लेकर आज तक भी उसी प्रकार से देते आ रहे हैं।

बताया जाता है कि रावल जैतसिंह (संवत १३३२-१३५०) तथा उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

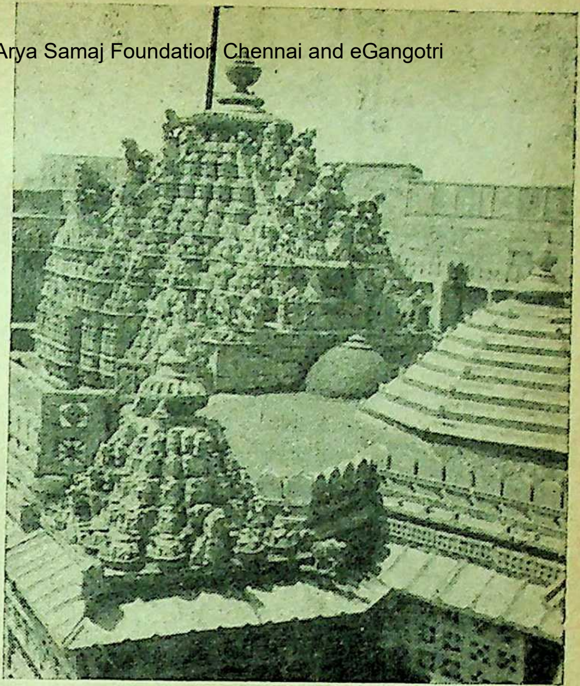

पुत्र लक्ष्मणसिंह के शासन काल में (संवत १४३२-१४९६) जैसलमेर में जैन-मंदिरों का बड़ी संख्या में निर्माण रहा। वह एक ऐसा समय था, जबकि हमारे देश की स्थिति बड़ी दयनीय एवं शोचनीय थी। देश में धर्म के नाम पर खून-खराबी और रक्तपात होता था; कहीं मंदिर जलाये जाते थे, तो कहीं धार्मिक-स्थान जलाकर राख कर दिये जाते थे। ऐसी विकट और विषम परिस्थितियों में प्राचीन धर्म-ग्रंथों को सुरक्षित रख पाना देशवासियों के लिए एक समस्या बनी हुई थी। ऐसे में ग्रंथालयों और बड़े-बड़े ज्ञान-भंडारों एवं संग्रहालयों को संभालने वालों को सदा यह भय खाये रहता कि कहीं उन पर कोई आक्रमण न कर बैठे और इस अमूल्य निधि को कोई जलाकर राख का ढेर न कर दे। अतः ऐसी डांवाडोल स्थिति में भारत के जैन-समाज ने यही उचित समझा कि इस अलभ्य ज्ञान-निधि को, इस प्राचीन हस्तलिखित साहित्य को किसी सुरक्षित स्थान पर रखा जाये, पहुंचाया जाये। और

जैसलमेर के मंदिरों का वैभव

तब आचार्य श्री जिन सूरिजी महाराज के अमूल्य सुझाव से, छिपे-रूप से, यह सब यहां लाया गया।

फलस्वरूप जैसलमेर दुर्ग में स्थित श्री संभवनाथजी के जिनालय के भूमिगत भंडार में सैकड़ों हस्तलिखित ताड़पत्रिय पाण्डुलिपियां एवं कागज़ पर लिखे प्राचीन अमूल्य ग्रंथ संकलन करके सुरक्षित रखे गये, जो आज भी 'श्री जिनभद्र सूरि ज्ञान-भण्डार' के नाम से प्रसिद्ध है। इस भण्डार में ऐसे भी कई ग्रंथ उपलब्ध हैं, जिन्हें अन्यत्र ढूंढ़ना-खोजना व्यर्थ रहा है। जैसलमेर का यह ज्ञान-भण्डार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

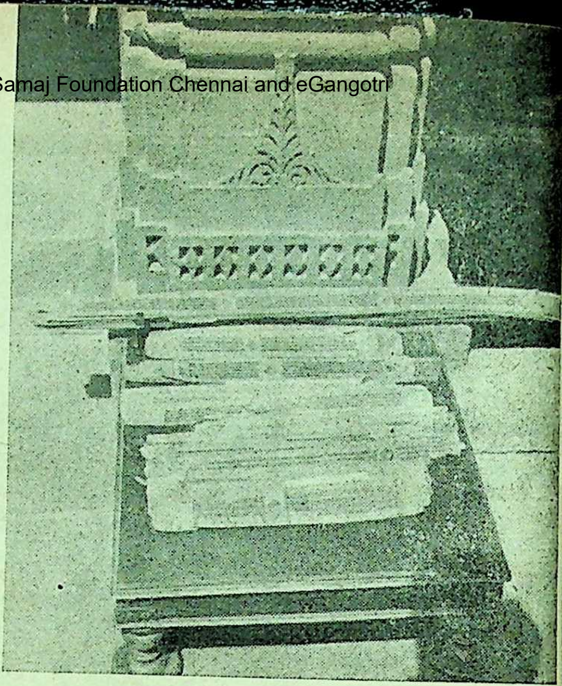

प्राचीन भोजपत्र पर लिखित ग्रंथ

अपना एक विशेष स्थान रखता है। इस भण्डार को यदि पाटन के ज्ञान-भण्डार से भी श्रेष्ठ कहा जाये, तो हम समझते हैं कि कोई अतिशयोक्ति जैसी बात नहीं हो सकती।

इतिहास इस बात को स्वीकारता है कि इस देश में मुगल शासन का अंतिम समय और अंग्रेज शासन का आगमन का समय काफी कुछ गड़बड़ी लिये हुए, अनिश्चित सा रहा है। कई प्रकार के उतार-चढ़ाव और धार्मिक कट्टरता का सामना उस समय देश को करना पड़ा था। समाज और देशवासियों के लिए यह बड़ा कठिन हो गया था कि ग्रंथागार किस प्रकार से सुरक्षित रह सकते हैं। और हम देखते हैं कि ज्ञान-भण्डार की इस स्थापना के पश्चात् निरंतर तीन सौ वर्ष तक जैन-बंधुओं ने इन ग्रंथों की रक्षा करना अपने जीवन का सबसे बड़ा और गौरव गरिमा का लक्ष्य बना रखा था। उन्होंने इन ग्रंथालयों की देव-स्थानों की तरह पूजा की। इन तलगत भण्डारों में जहां ग्रंथ सुरक्षित रखे हुए थे, उन्होंने उस समय इसका न तो किसी को भान ही होने दिया और न किसी को प्रविष्ट। और यह गोपनीयता हमारे देश तथा राष्ट्र के लिए महान गौरव की वस्तु मानी जाती है। इस संदर्भ में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा. राजेंद्रप्रसाद ने उचित ही कहा था—'सारा राष्ट्र जैन-समाज के प्रति बड़ा ही ऋणी है, क्योंकि इन्होंने इन ग्रंथों को बहुत बड़ी राष्ट्रीय-थाती के रूप में संभाल कर आज के ज्ञान-प्रेमियों व साहित्यानुरागियों को इस साहित्य का रसपान करने का अवसर प्रदान किया है। उनकी इस प्रकार की कट्टरता का ही फल है कि ये ग्रंथालय ज्यों के त्यों वैज्ञानिक युग में भी हमें प्रेरणा देने के लिए आज भी विद्यमान हैं।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वानों का आगमन

जैसा कि हम पूर्व उल्लेख कर आये हैं–निरंतर तीन सौ वर्ष तक ये भण्डार अज्ञातवास में पड़े रहे। लेकिन सबसे पहला अंग्रेज व्यक्ति जो इन्हें देख पाया वे कर्नल टॉड थे; वे सन १८१८ से १८२२ तक पश्चिमी राजपूताना (उस समय राजस्थान प्रदेश राजपूताना के नाम से पुकारा जाता था) के पोलिटिकल एजेण्ट के पद पर थे। आपने पूरे राजस्थान का उस समय भ्रमण किया और इसी अर्से में आप जैसलमेर में भी आये। कर्नल टॉड को राजपूताने के इतिहास का जनक माना जाता है। आपने जैसलमेर आकर जैन-मंदिरों का निरीक्षण किया और सर्वप्रथम जैसलमेर के 'जिन भद्रसूरि ज्ञान-भण्डार' का निरीक्षण किया। इन ग्रंथों के विषय में अपनी राय देते हुए आपने लिखा है कि 'इनमें से कई ऐसी पुस्तकें हैं ,जिनका अभी तक निरीक्षण नहीं हुआ है; निश्चय ही इनके द्वारा प्राचीन भारत के इतिहास पर एक नया प्रकाश पड़ सकता है।' टॉड ने इस संग्रहालय को पाटन के संग्रहालय से कहीं बढ़कर बताया।

कर्नल टॉड की लिखी उक्त टिप्पणी के आधार पर इन पुस्तकों के संग्रह की खोज में सबसे पहले आनेवाले यूरोपियन (जर्मन) विद्वान् डाक्टर बूल्हर थे। अपने एक विद्वान् साथी हरमन जैकोबी को लेकर सन १८७४ में आप जैसलमेर आये। हरमन जैकोबी ने राजस्थान की प्राचीन देशीय भाषा, अपभ्रंश के साहित्य का सर्व प्रथम वैज्ञानिक-संशोधन और प्रकाशन प्रारंभ किया। डा. बूल्हर करीब एक सप्ताह तक यहां रहे। यहां वे जैसलमेर के वातावरण से घबराकर शीघ्र ही बिना पूरा निरीक्षण किये चल दिये।

और यह ठीक भी था–मरुधर जैसे विकट उजाड़-प्रदेश में जहां का पानी खराब और खारा हो और नहारू रोग की जहां प्रचुरता हो, यहां किसी विदेशी का पहुंच पाना और अल्पकाल के लिए ठहरना भी कम कष्टदायक नहीं हो सकता। डा. बूल्हर ने जैन समाज द्वारा निर्मित मंदिर व भण्डारों के विषय में लिखा है कि इन मंदिरों में जैन-समाज की समृद्धि द्वारा जैसलमेर को जैन-धर्मावलंबियों की दृष्टि से मुख्य स्थान प्राप्त करने का गौरव मिला है। खासकर ज्ञान-भण्डार ने संसार में यहां के नाम को उज्ज्वल किया है।

डा. बूल्हर के यहां से जाने के तीस वर्ष पश्चात् सरकार की ओर से प्रो. श्रीधर रामकृष्ण भण्डारकर को राजस्थान के प्राचीन पुस्तकों के संग्राहलयों का निरीक्षण करने के लिए १९०५ में भेजा गया। भण्डारकर जब यहां आये, तो उन्हें यहां आने से पहले ही यहां के अंग्रेज अधिकारियों ने इस प्रदेश की कठिनाइयों से भली-भांति अवगत करवा दिया था। लेकिन वे बड़े उच्चकोटि के शोध-कर्त्ता और प्रकाण्ड विद्वान थे। यों तो बूल्हर की टिप्पणी उनके लिए प्रेरणा और उत्सुकता की केंद्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

35 वर्ष का होने से पहले ही अपनी पेन्शन कैसे प्राप्त करें!

स्टेट बैंक तो यही मानता है कि पेन्शन प्राप्त करने के लिए जरूरी नहीं कि आप बुढ़ापे की हद तक पहुंचें. दर असल आप अपनी आय की शुरुवात के साथ ही इस दिशा में अपना पहला कदम बढ़ा सकते हैं.

बस, आप स्टेट बैंक में पेरेनियल पेन्शन योजना खाता खोल लीजिए और अगले दस वर्षों तक, हर महीने 100 रूपये (या चाहें तो उससे ज्यादा) अपने इस खाते में जमा करते रहिए. 122 वें महीने से स्टेट बैंक आपको पेन्शन देने लगेगा और हर महीने आपको मिलने लगेंगे रु.197.50 (या आपने अधिक जमा किया है तो इससे ज्यादा), वह भी हमेशा ही. सबसे बड़ी बात तो यह है कि दस वर्ष तक जमा की गयी आपकी बचत और उस अवधि में प्राप्त ब्याज, यानी कुल मिलाकर रु.21,772.00 (या इससे अधिक, अगर आपने जमा किया है तो) ज्यों के त्यों बने रहते हैं. 122 वें महीने के बाद आप जब भी चाहें, पेन्शन लेना बंद कर अपनी यह पूरी रकम वापस ले सकते हैं.

इसलिए आप डॉक्टर हों या वकील, आर्किटेक्ट हों या उद्यमी, व्यवसायी हों या वेतन भोगी कर्मचारी, अभी से पेन्शन पाने की अपनी योजना बना डालिए.

स्टेट बैंक में हर सपने को साकार करने की योजना है. आप पुनर्निवेश योजना, वार्षिक जमा, स्टेट बैंक शिक्षा योजना, नकद प्रमाण पत्र योजना, आवर्ती जमा योजना, बचत खाता और मीयादी जमा योजना में से अपनी पसन्द के अनुकूल चुन लीजिए.

स्टेट बैंक

सुरक्षा : एक सुखद अनुभूति

CHAITRA-SBI-1133 HIN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बनी हुई थी।

श्री भण्डारकर जब यहां आये, तो उन्हें ज्ञात हुआ कि यहां एक स्थान पर ही नहीं, दस स्थानों पर पुस्तक-संग्रह हैं। पुस्तकें फटी हुई देखकर और उनकी दुर्व्यवस्था देखकर आपको बड़ा ही खेद हुआ। आपने एक स्थल पर लिखा है कि 'इधर-उधर ताड़पत्रों के ढेर व फटे कागज-पत्रों के ढेर को देखकर यही कहा जा सकता है कि समय और असावधानता इन दोनों ने ही अपने आधिपत्य से यहां पर विनाश का कार्य आरंभ कर दिया है। चाहे यह साहित्य-संपत्ति अधिक सावधानता की अधिकारिणी थी, परंतु निरंतर वर्षों बाद पड़ी रहने का एक अच्छा परिणाम यह भी निकला कि यह बची रह गयी।'

आपकी देख-रेख में कई पुस्तकों की प्रतिलिपियां, नकलें भी करवायी गयीं। इस प्रकार हम देखते हैं कि जैसलमेर के भण्डार को प्रकाश में लाने का श्रेय भण्डारकर को ही रहा है।

इन्हीं दिनों १९०४–५ में जैन-श्वेताम्बर कान्फ्रेंस ने एक ग्रंथावली तैयार करके १९०९ में प्रकाशित करवाई थी। उस ग्रंथावली में अवश्य ही त्रुटियां रह गयी थीं। और यह ठीक भी है—शोधकार्य जरा कष्ट-साध्य होता है और उसे हाथ में लेने वाले को कई कठिनाइयों का समान करना पड़ता है। उक्त जैन कान्फ्रेंस का कार्य यहां पर पंडित हीरालाल हंसराज ने किया था।

और इसी बीच बड़ौदा सरकार की ओर से योग्य विद्वान श्री चमनलाल दलाल यहां १९१६ में आये। आपने जैसलमेर पहुंचकर प्राय: सभी ताड़-पत्रित ग्रंथों की सूची बनवाई। खेद है कि यह श्री दलाल की मृत्यु के बाद प्रकाशित हो सकी। श्री दलाल 'बड़ौदा सेंट्रल लाइब्रेरी' के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे। आप पूर्ण साधन-सहित जैलमेर पधारे थे। अतिरिक्त इसके आप इस अवधि में पाटन, बड़ौदा, कम्बे, अहमदाबाद और छानी आदि भण्डारों का भी निरीक्षण करने गये थे। उन्हें अपने इस मिशन में यहां के अंग्रेज अधिकारी वर्ग, जैसलमेर दरबार, जैन-पंचों तथा अन्य व्यक्तियों का पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त हो सका।

अब तक की शोध-खोज का परिणाम यह रहा कि ये अलभ्य, दुर्लभ ग्रंथ बस्तों आदि में अलग-अलग बांधे गये थे लेकिन आचार्य कृपाचन्द्र सूरि की कार्य-पद्धति ने इसे अपनी चरम सीमा पर लाकर रख दिया। आपने १९२४-२७ तक इन सभी भण्डारों का निरीक्षण किया। आपने सर्वप्रथम दीवार में अलमारियां बनवाकर, अलग-अलग 'बीटन' बनवाकर ग्रंथों को संजोकर रखवाया। आपने यदि ऐसी सुव्यवस्था न की होती, तो ये सारे ग्रंथ इधर-उधर बिखरकर आज तक समाप्त ही हो गये होते।

कलकत्ते के प्रसिद्ध विद्वान स्व. पूर्णचन्द्र नाहर को भी नहीं भुलाया जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

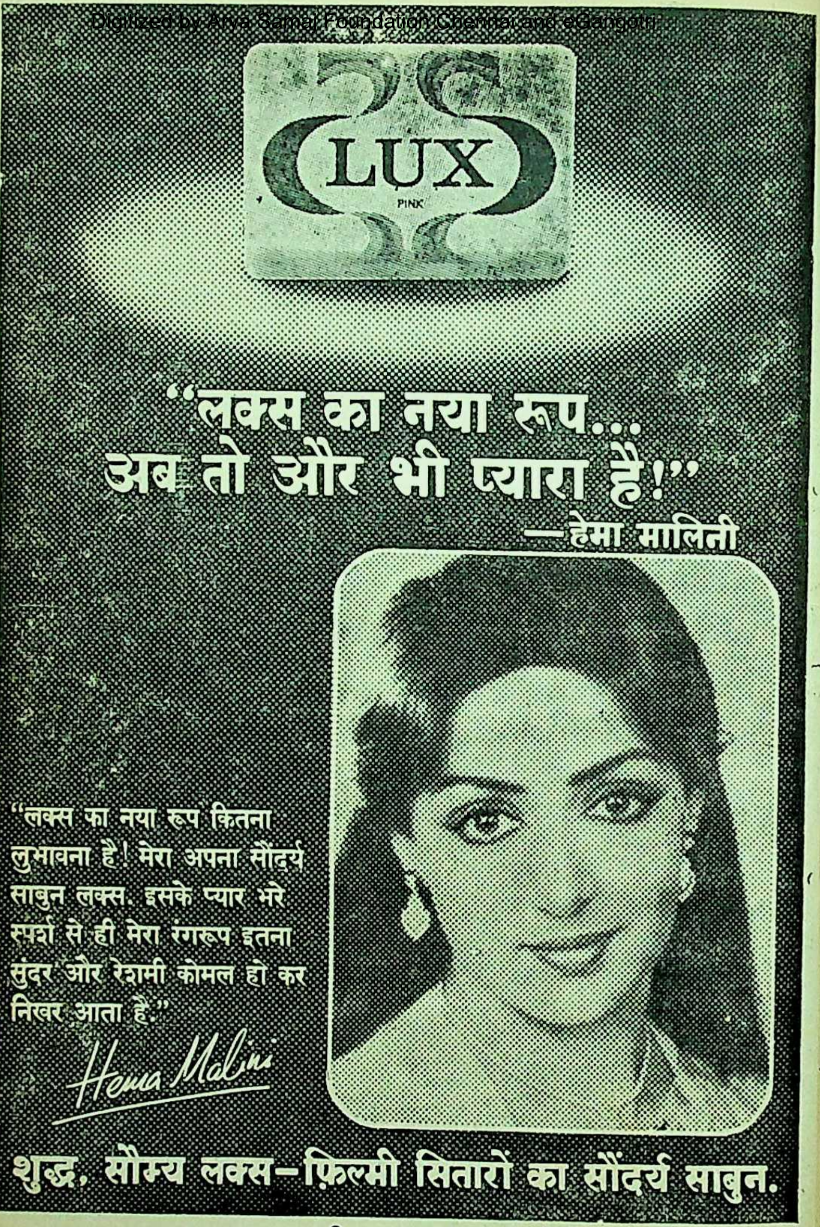

HTB-HLL-9260 हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड का एक उत्कृष्ट उत्पादन.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपने भी जैसलमेर के ज्ञान-भण्डारों के विषय में विस्तृत विवरणी लिखी है।

आचार्य श्री मुनि जिनविजय जी भी १९४२ में जैलमेर पधारे। आप यहां करीब ५–६ महीनों तक रहे। आपने १०–१२ विद्वानों और लेखकों के साथ यहां के भण्डारों का निरीक्षण किया। कई अलभ्य ग्रंथों की आपने नकलें भी करवायीं और कई ग्रंथों का आपने स्वयं सम्पादन कार्य भी किया।

आपने मुख्य भण्डार के अतिरिक्त और कई पुस्तकालय भी देखे, जिनमें 'लोकागच्छी उपासरे' का ज्ञान-भण्डार विशेष उल्लेखनीय रहा। इस भण्डार का निरीक्षण आपसे पहले किसी भी विद्वान् ने आज तक नहीं किया था।

श्री मुनिजी के अतिरिक्त इसी अर्से में पूरे चतुर्मास की अवधि में आचार्य श्री हरिसागरजी महाराज तथा श्री कांति सागरजी ने भी जैसलमेर के ज्ञान-भण्डारों का शोध-कार्य बड़ा श्रम उठाकर संपन्न किया।

राजस्थानी भाषा के मर्मज्ञ शोध-शास्त्री श्री अगरचंद नाहटा ने भी जैन-ग्रंथालयों का समय-समय पर जैसलमेर आकर निरीक्षण और शोध कार्य किया है। आपके लेख भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित होते रहे हैं।

यहां यह बात विशेष महत्व की है– इन जैन-ग्रंथालयों में, इन जैन-भण्डारों में केवल जैन-साहित्य ही रहा हो, ऐसा नहीं है। यहां इन भण्डारों में जैनेत्तर अभूतपूर्व रचनाएं भी हैं। जिनमें भरत, भोज (श्रृंगार मंजरी), पाणिनि, कौटिल्य, कालिदास, शंकराचार्य (गीता भाष्यम्), पातंजलि (योगानुशासनम्), जयदेव (जयदेवच्छाद शास्त्रम्), गौडपाद (सांख्य सप्तति भाष्यम्), त्रिलोचन दास (कातत्र-वृत्ति पंजिका) रामचंद्र (द्रव्य प्रकाश, द्रव्य प्रच्छक), विमुक्तात्माचार्य आदि की रचनाएं उल्लेखनीय हैं।

इन ज्ञान-भण्डारों में कई ऐसी रचनायें भी उपलब्ध रही हैं, जिन्हें कहीं अन्यत्र देखा सुना नहीं गया है। प्रसिद्ध लीलावती कथा के विषय में ऐसा बताया जाता है कि यह ग्रंथ केवल जैसलमेर व पाटन में ही उपलब्ध है। ताड़-पत्रों पर रघुवंश, प्रमाण-मीमांसा, योगशास्त्र, कल्पसूत्र, नैषधम् आदि ग्रंथों की सूचनायें निश्चय ही देखने योग्य हैं।

जहां ये जैन-भण्डार हमारे लिए सांस्कृतिक थाती रहे हैं, इस साहित्यिक निधि पर हर देशवासी को गौरव अनुभव होता है। कितना सुंदर और समीचीन रहे, यदि शोध-कार्य में रुचि रखनेवाले हमारे विद्वान इस ओर अपना ध्यान सक्रिय रूप से जुटा सकें।

–भठड़ों का चौक, बीकानेर, राजस्थान

□

विज्ञान धर्म के बिना लंगड़ा है; धर्म विज्ञान के बिना अंधा है।

–आइंस्टाइन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

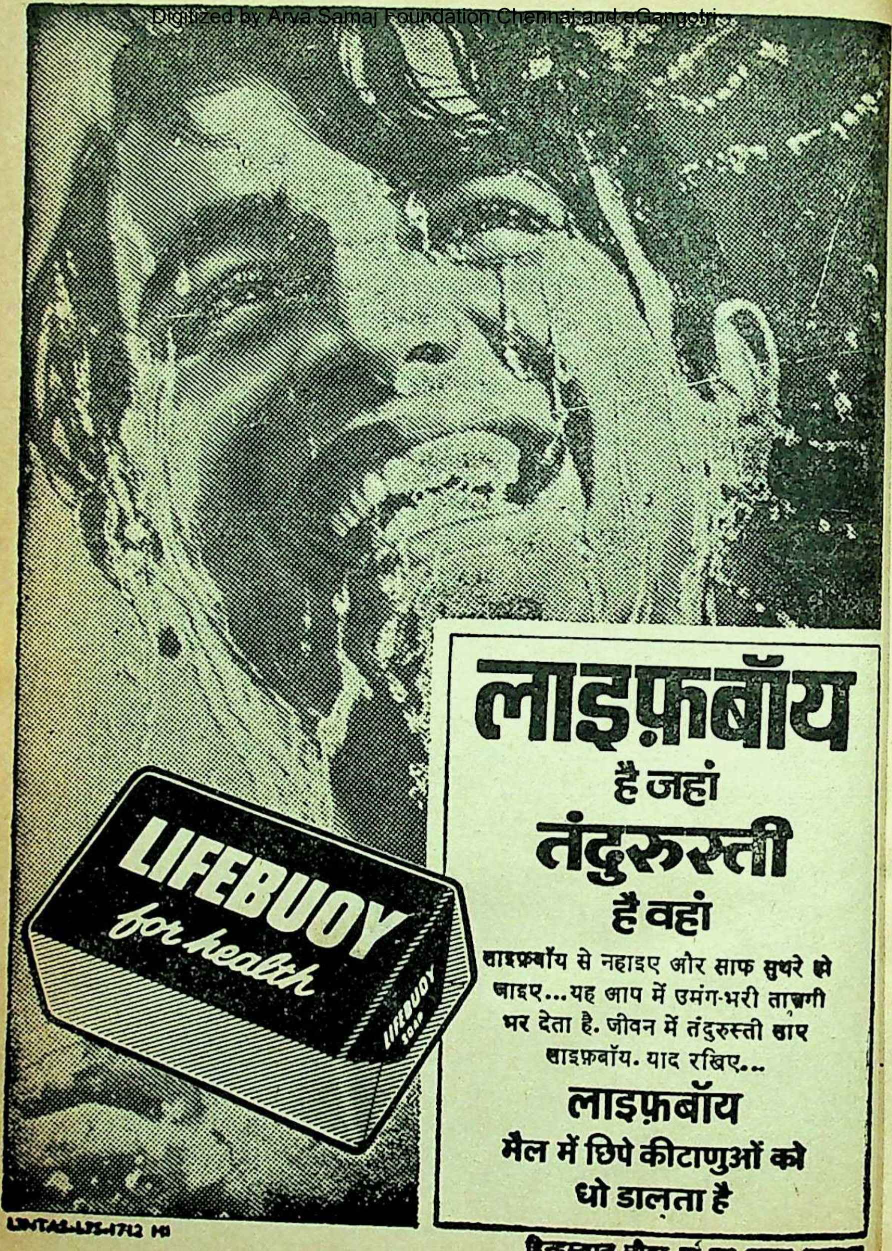

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगिराज श्यामाचरण लाहिड़ी

□

भगवानशरण भारद्वाज

कृष्णनगर में गौरमोहन लाहिड़ी और मुक्तकेशी देवी के धर्मनिष्ट परिवार में १८२८ ई० में योगपुरुष श्यामाचरण लाहिड़ी का आविर्भाव हुआ। शैशव में मातृ-अंचल की सुखद छाया से वंचित हो जाने के कारण पिता गौरमोहन भूतभावन शंकर के त्रिशूल पर बसी काशी में आ बसे। साधु-समागम और देव-मंदिरों के दर्शन के फलस्वरूप इस परिवार की धर्मनिष्ठा उत्तरोत्तर परिपुष्ट होती गयी

बालक को संस्कृत, फारसी और अंग्रेजी की अच्छी शिक्षा दी गयी। श्यामाचरण ने नागभट्ट से वेदपाठ का अभ्यास भी किया। हिंदी में भी उन्होंने दक्षता प्राप्त कर ली। अठारह वर्ष की आयु में काशीमणि के साथ वे परिणय-सूत्र में बंध गये। जीवन-सहचरी ने योग-साधना की पगडंडियों पर चलते समय सहधर्मिणी के सच्चे स्वरूप का परिचय दिया। श्यामाचरण ने सरकारी इंजीनियरिंग-ऑफिस में तेरह वर्ष की अवस्था से काम करना आरंभ कर दिया। दो वर्ष बाद परिवार का सारा दायित्व उन्हीं के कंधों पर आ पड़ा क्योंकि विधाता ने उन्हें पितृ-सुख से भी वंचित कर दिया।

इस विभाग में कार्य करते समय अनेक जगहों पर उनका स्थानांतरण हुआ। तैंतीस वर्ष की वय में उन्हें सरकारी काम से रानीखेत आना पड़ा जहां पूर्वजन्म के गुरु महावतार बाबाजी ने प्रकट होकर उन्हें भगवत्कृपा से सराबोर कर दिया। बाबा की अवस्था कई सौ वर्ष की थी, फिर भी वे तरुण प्रतीत होते थे। युवक श्यामाचरण कार्यालय का काम संपन्न कर देवदारु और चीड़ से घिरे दुर्गम पहाड़ी मार्ग पर चले जा रहे थे। सामने नंदादेवी का पर्वत-शिखर सांध्य अंधकार में निमग्न होता जा रहा था। अकस्मात किसी ने नाम लेकर श्यामाचरण को पुकारा। जिस दिशा से पुकार आ रही थी उस ओर एक गिरि-गुहा के द्वार पर तेजोमय योगी दिखायी दिये। उन्होंने प्रीति-स्निग्ध स्वर में कहा—'मैं ही तुम्हें पुकार रहा था।' तब तो श्यामाचरण मानों अवाक् ही रह गये जब योगी ने उनके पिता-पितामह का सविशेष परिचय दिया। ज्योतिर्धर योगी ने कहा—'यह सारे स्थान तुम्हारे चिर-परिचित हैं, मगर तुम इन्हें कदाचित् याद नहीं कर पा रहे हो। पूर्व जन्म में तुम मेरे शिष्य थे। जब तुम साधना के ऊंचे सोपान पर अवस्थित थे कि तुम्हारा यकायक देहावसान हो गया। ईश्वर निर्दिष्ट कार्य को पूरा करने के लिए ही तुम्हें फिर से जन्म लेना पड़ा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँ आप महसूस करेंगे एक स्वच्छन्द भावना। लगेगा, जैसे अचानक आप के कंधों पर पड़ा बोझ हट गया। आपको आश्चर्य होगा कि इतनी कम प्रीमियम दर पर अपनी प्रिय संपत्ति की सुरक्षा की बात आपने पहले क्यों नहीं सोची।

साधारण बीमा उद्योग की संपत्ति एवं व्यक्तिगत सुरक्षा संबंधी अनेक बीमा पालिसियां समाज को समर्पित हैं। इनका चयन आप अपनी ज़रूरत के आधार पर कर सकते हैं। संपूर्ण जानकारी के लिए हमारी निम्नलिखित कंपनियों से संपर्क कीजिए जिनके कार्यालय सभी शहरों एवं कस्बों में आपकी सेवार्थ कार्यरत हैं।

- नेशनल इन्श्योरेंस कम्पनी लिमिटेड, कलकत्ता.
- न्यू इंडिया एश्युरेंस कंपनी लिमिटेड, बम्बई
- ओरिएन्टल फ़ायर एण्ड जनरल इ. कं. लि, नई दिल्ली.
- यूनाइटेड इंडिया इन्श्योरेंस कंपनी लि., मद्रास

आपकी हर ज़रूरत के लिए कोई न कोई बीमा योजना मौजूद है। विशेष ज़रूरत के लिए विशेष योजना का प्रावधान भी है।

हमारी सेवाओं में है नम्रता। और योजनाओं में नम्यता।।

साधारण बीमा उद्योग: अनिश्चित दुनिया में एक मात्र निश्चित साथी

जनरल इन्श्योरेंस कॉर्पोरेशन आफ इंडिया

Interpub/GIC/I/83 HIN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है तथा तुम्हें दीक्षा-दान करने के लिए ही मेरा यहां आगमन हुआ है । दानापुर से यहां आने के लिए जो तार भेजा गया, वह उच्च अधिकारी की भूल से ही । एक स्थान के नाम पर उसने भूल से दूसरा स्थान लिख दिया । यह भूल मैंने ही करायी । सात दिन बाद तुम्हें फिर दानापुर लौटना पड़ेगा । इतने दिनों में मेरा काम पूरा हो जायेगा ।'

श्यामाचरण सांसारिक जीवन से उपराम होना चाहते थे, उन्होंने योगी गुरु से संसार-त्याग का बहुत अनुरोध किया किंतु बाबाजी ने किसी तरह भी इस प्रस्ताव की स्वीकृति नहीं दी । उन्होंने कहा कि 'योग्य व्यक्तियों को इस योग-साधन की दीक्षा देने का महत् दायित्व तुम्हें ग्रहण करना होगा । जब तक तुम यहां हो, नित्य मुझसे मिलते रहना ।'

दूसरे दिन लाहिड़ी महाशय ने उस पहाड़ के समीप ही डेरा डाल लिया । कार्यालय का काम पूरा करके वे प्रतिदिन उसी गुफा में आकर उपस्थित होते और गुरु के निर्देश के अनुरूप आहार करते । दीक्षा से एक दिन पूर्व बाबाजी ने एक बर्तन में रखी हुई वस्तु को पी डालने के लिए कहा । पहले तो श्यामाचरण यह समझे कि इस पात्र में खाने की वस्तु की जगह भूल से तेल रखा गया, पर जब बाबा ने आग्रह किया तो बिना हिचकिचाहट के वे सारा द्रव पी गये । पास में गगास नदी थी, जिसकी बालू पर लेटे रहने का आदेश गुरु ने उन्हें

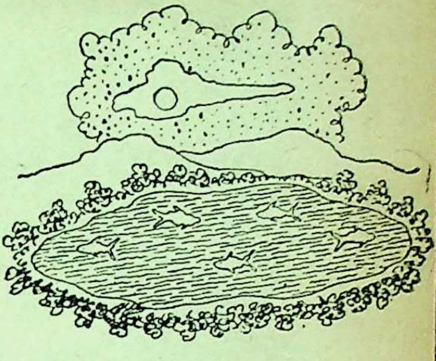

दिया । उन्हें लगातार क़ै-दस्त हुए और वे बहुत अधिक दुर्बल हो गये । उस पहाड़ी नदी में अचानक बाढ़ आ गयी जिसमें लाहिड़ीजी काफी दूर तक बहते हुए चले गये । वे लगभग मरणासन्न हो गये । दूसरे दिन प्रभात में बाबाजी के दर्शन हुए। उन्होंने उत्साह दिलाते हुए कहा—'बहुत अच्छा हुआ । पेट में जो कुछ मल पदार्थ था, सब दूर हो गया ।' बाबा ने उन्हें हलुआ-पूड़ी खिलाया और प्रदोषकाल में दीक्षा दी । लाहिड़ीजी ने आश्चर्यजनक गति से सारे रहस्यों को आत्मसात् कर लिया और दुर्लभ अनुभूतियां प्राप्त कीं ।

बाबाजी ने द्रोणगिरि से पांच मील दूर उन्हें एक योगी के दर्शन कराये जिनकी दृष्टिमात्र से असाध्य रोग दूर हो जाते थे ।

एक सप्ताह बीत गया । शीघ्र ही लाहिड़ी महाशय को दानापुर लौटने का आदेश मिला । गुरु की चरण-वंदना कर शिष्य ने विदा ली । लौटते समय वे मुरादनगर में दो-तीन दिन ठहरे । वार्ता-प्रसंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

MUCH-AWAITED BOOK NOW ON SALE !

TO BE READ, RE-READ AND PRESERVED !

Srimad Bhagavatam

By

KAMALA SUBRAMANIAM

With A Foreword

By

GHANSHYAMDAS BIRLA

(Printed on Superior Map Litho Paper, Royal Octavo Size, pp. 672, Full cloth bound with an attractive jacket.)

Price Rs. 110.00

The *Bhagavatam* has been aptly described as the spiritual butter churned out of the ocean of the Veda Milk for the benefit of those "who are pure in heart, free from malice and envy, and are keen to hear it." Dry philosophy seldom appeals to the human mind. But in the *Bhagavatam* even the most abstruse philosophic truths are put across by means of stories and legends. This is the secret of its popularity among all classes of people.

Available from :

Bharatiya Vidya Bhavan

Kulapati K. M. Munshi Marg,

Bombay-400 007

And its Kendras.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में उन्होंने अपने एक मित्र से कहा कि अब भी अनेक योगी विद्यमान हैं जिनका दर्शन होना असंभव बात नहीं । मित्र ने प्रश्न किया—क्या तुम दिखा सकते हो ? लाहिड़ी जी ने एकांत कक्ष के सारे दरवाज़े और खिड़कियां बंद कर दीं और बाबाजी महाराज का ध्यान करने लगे । महाराजश्री कक्ष में आविर्भूत हुए, गंभीर स्वर में बोले—'तुम्हारे बुलाने पर मैं आ पहुंचा । मैंने तुम्हारे भीतर शक्ति का संचार इसलिये नहीं किया है कि तुम इस तरह उसका उपयोग करो । भविष्य में जब मैं आवश्यक समझूंगा तभी स्वेच्छा से प्रकट हो जाऊंगा, तुम्हारे चाहने मात्र पर नहीं ।'

डरते-डरते श्यामाचरण ने निवेदन किया कि अविश्वासियों में विश्वास जगाने के लिए सब लोगों को एक बार दर्शन देने की कृपा करें । महावतार बाबाजी ने स्वीकृति दे दी । सबने बाबाश्री के दर्शन किये । लाहिड़ी महाशय ने हलुआ-पूड़ी तैयार करके बाबा का भोग लगाया और सभी लोगों ने प्रसाद ग्रहण किया ।

लाहिड़ीजी कार्यालय का काम शीघ्र निपटाकर चुपचाप योगसाधन में डूब जाते थे । अपनी योग-विभूतियों को वे दूसरों की दृष्टि से छिपाये रखते थे किंतु एक बार यह गोपनीयता भंग हो गयी । उनके एक अधिकारी की पत्नी इंग्लैंड में किसी गंभीर रोग से पीड़ित थी, फलतः साहब का मन बहुत उद्विग्न रहता था । श्यामाचरण ने साहब की चिंता से द्रवित होकर कहा—मैं आज ही आपकी पत्नी का समाचार मंगा दूंगा । समीप के एकांत कक्ष में लाहिड़ी महाशय ध्यानमग्न हो गये । ध्यान से उठने पर उन्होंने साहब को बताया कि उनकी पत्नी स्वस्थ है और शीघ्र ही इस आशय का पत्र उन्हें लिखने वाली है । पत्र आने पर साहब यह देख कर दंग रह गये कि उनके कार्यालय के बाबू ने पत्र की जो भाषा और वर्ण्य वस्तु बतायी थी, वह अक्षरशः ऐसी ही थी । कई महीनों बाद जब वह महिला भारत आयी तो उसने कहा—'मैं जब रोग शय्या-ग्रस्त थी तब मैंने इन महात्मा को अपनी शय्या के पास खड़ा देखा था । इन्हीं की कृपा से मुझे पुनर्जीवन प्राप्त हुआ ।'

एक दिन जब लाहिड़ी महाशय अपने घर के समीप टहल रहे थे, उन्हें एक वट वृक्ष के नीचे फटे-गंदे वस्त्र पहने गांजा पीनेवाला एक साधु दृष्टिगत हुआ । पास पहुंचकर जब उन्होंने देखा तो वे यह देख कर हैरान रह गये कि उनके गुरुदेव उस गंजेड़ी साधु का लोटा मांज रहे हैं । लाहिड़ीजी बोल उठे—'बाबा, आप यह क्या कर रहे हैं ?' बाबाजी ने शांत स्वर में कहा—'साधु-सेवा कर रहा हूं । सब घटों में नारायण विराजमान हैं । तुम भगवान के इस सर्वव्यापी चैतन्य रूप को उपलब्ध करने का प्रयास क्यों नहीं करते ?' लाहिड़ीजी बाबाजी महाराज को घर ले गये । उस दिन से दुष्ट प्राणियों के भीतर भी वे नारायण का दर्शन करने लगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाहिड़ी महाशय १८८५ ई. में सेवा-निवृत्त हुए । वे मुख्यत: गृहस्थों को ही दीक्षा दिया करते थे । उन्हें संन्यास लेने के लिए भी हतोत्साह करते थे, फिर भी अनेक संन्यासी उनके शिष्य थे । निरक्षर सिपाही वृंदा भगत और अब्दुल गफूर खां ने साधना की दृष्टि से बड़ी प्रगति की । परमहंस योगानंद के गुरु युक्तेश्वर भगवान उनके अंतरंग शिष्य थे । अब लाहिड़ी महाशय आकर विश्वनाथपुरी काशी में रहने लगे थे । शिष्यों के कुशल-क्षेम के विषय में वे सदैव सजग रहते थे । उन्होंने युक्तेश्वर के एक घनिष्ठ मित्र राम का प्राणांत हो जाने पर मुंह में अरंडी का तेल डालकर उसे पुनर्जीवन दिया । अलौकिक ढंग से प्रसूति-गृह में प्रकट होकर उन्होंने अभया नामक शिष्या की नवीं संतान की प्राण-रक्षा की ।

तैलंग स्वामी, बालानंद ब्रह्मचारी और भास्करानंद सरस्वती जैसे परमयोगीजन उनके बहुत प्रशंसक थे । एक रात की बात है कि काशीमणि देवी की निद्रा हठात् टूट गयी । जगने पर उन्होंने देखा कि सारा कमरा उज्ज्वल आलोक से भरा हुआ है और योगी श्यामाचरण का आसन भूमि से बहुत ऊपर शून्य में है ।

लाहिड़ी महाशय कभी सोते नहीं देखे गये । कालीकुमार राय उनके घर पर सप्ताहों ठहरते थे । उन्होंने अपनी आंखों देखा था कि निशीथ में अनेक साधु-संत उनके चरणों में उपस्थित होते और ज्ञान-चर्चा करने के बाद तड़के ही अदृश्य हो जाते थे ।

एक दिन उनके पड़ोस का युवक चंद्र-मोहन डे डॉक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण कर उनके पास आशीर्वाद लेने आया। बातों-बातों में योगिराज ने पूछा—'चिकित्सा-विज्ञान में मृतक किसे कहते हैं ? ज़रा, मेरी परीक्षा करके बताओ कि क्या मैं जीवित हूं?' चंद्र-मोहन ने उनकी देह की परीक्षा की और देखा कि न तो सांस चल रही है और न हृदय-गति ही। कुछ देर बाद आंखें खोलने पर उन्होंने डॉक्टर से कहा—'तुम्हारा आधुनिक विज्ञान अपना सीमित ज्ञान लेकर अतींद्रिय सूक्ष्म लोक तक नहीं पहुंच सकता। किंतु भारतीय साधकों की योगशक्ति सहज ही वहां पहुंच सकती है ।'

वे लोक-कल्याण के सारे कार्यों को प्रोत्साहित करते थे और किसी भी दशा में लौकिक कर्म की उपेक्षा नहीं करने देते थे। स्वधर्म में उनकी गहन निष्ठा थी और वे सामाजिक आचार-विचार का बहुत खयाल रखते थे । अपने तिरोभाव के छह मास पूर्व ही उन्होंने अंतरंग शिष्यों और पत्नी को महाप्रस्थान की पूर्व सूचना दे दी थी ।

२६ सितंबर, १८९५ को वे अपने भक्तों से घिरे बैठे थे । एकाएक उन्होंने पद्मासन लगाया और नश्वर काया त्यागकर परम धाम की यात्रा पर चले गये ।

—कामायनी, इनायतगंज, पो. श्यामगंज, बरेली, उ. प्र.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११२९८

एक भारत-प्रेमी ईसाई जो 'वसुधैव कुटुम्ब-कम्' का जीता-जागता उदाहरण था

□ हरि

इस सदी के आरंभ में एक मिशनरी के रूप में भारत आने वाले दीनबंधु एंड्रयूज सब धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन से इस निश्चित निर्णय पर पहुंचे थे कि ईसा, कृष्ण, बुद्ध अन्ततोगत्वा उसी एक परमात्मा के विभिन्न रूप हैं। 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' के महान सत्य का भान होने के कारण धर्म के नाम पर होने वाला संघर्ष उन्हें बड़ा ही खोखला मालूम पड़ता था, खासकर, भारत में वंशभेद और वर्णभेद से लाभ उठाने की योरोपीय मिशनरियों की, ईसा के तथाकथित अनुयायियों की, नीतियों को देखकर उनके हृदय को बड़ी ठेस पहुंचती थी।

२० मार्च, १९०४ के दिन कैम्ब्रिज क्रिश्चियन मिशन के एक मिशनरी के रूप में सी. एफ. एंड्रयूज नामक एक अंग्रेज भारत आया—और यहीं का होकर रह गया। यह है, संक्षेप में गांधीजी, रवींद्रनाथ, गोखले, प्रभृति गण्यमान्य भारतीयों के स्नेह-पात्र 'दीनबंधु' एंड्रयूज की जीवन-कथा। गांधीजी ने उनके बारे में ठीक ही लिखा था : 'वे शत प्रतिशत 'दीनबंधु' हैं।'

भारत आते ही, एंड्रयूज ने, शासक-वर्ग का एक सदस्य होते हुए भी, भारत के वास्तविक रूप को पहचानने का प्रयास किया। इस उद्देश्य से उन्होंने प्रतिनिधि भारतीय संस्थाओं तथा व्यक्तियों से गहरा संपर्क स्थापित करने के साथ-साथ, एशिया के प्रमुख धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन भी आरंभ किया। इस अध्ययन के आधार पर वे इस निश्चित निर्णय पर पहुंचे कि ईसा, कृष्ण, बुद्ध अन्ततोगत्वा उसी एक परमात्मा के भिन्न रूप हैं।

'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' के महान सत्य का भान होने के कारण उन्हें धर्म के नाम पर होने वाले लड़ाई-झगड़े बड़े ही खोखले और अर्थहीन मालूम पड़ने लगे। विशेष रूप से, भारत में व्याप्त वंशभेद और वर्णभेद से लाभ उठाकर निर्धन, असहाय भारतीयों का धर्मांतरण करने की योरोपीय मिशनरियों की, ईसा के तथाकथित अनुयायियों की नीतियों से उनके हृदय को बड़ी ठेस पहुंची। उन्होंने अपनी ओर से इस नीति को अनीति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घोषित करते हुए, उसे रोकने का भरसक प्रयास किया, किंतु सर्वसाधन संपन्न, धूर्त तथा ब्रिटिश शासकों के कृपा-पात्र ईसाई मिशनरियों के सामने उनकी एक न चली। अंत में, उन्होंने स्वयं को मिशन के बंधन से मुक्त कर लिया, और भारत में घुलने-मिलने लगे।

'गीतांजलि' का प्रभाव

सी. एफ. एंड्रूज 'गीतांजलि' से अत्यधिक प्रभावित हुए थे, और उसी के कारण वे रवींद्रनाथ के निकट संपर्क में आये। 'गीतांजलि' का जो गीत उन्हें सबसे अधिक प्रिय था, और जिसने उन्हें अनंत विश्वों के सागर-तीर पर पहुंचा दिया था, वह था 'जगत-पारावारेर तीरे छेलेरा करे मेला' शीर्षक वाला गीत। इस गीत में कवि ने विश्व के सभी मानवों को एकता के सूत्र में पिरोने का प्रयास करते हुए कहा था, 'विश्व के मानवों के कार्यकलाप, क्रीड़ाएं एवं रुचियां भले ही भिन्न हों, सभी के अंतःकरणों में उठने वाले भाव मूलतः एक ही हैं। फिर, सागर-तीर पर जमा होकर अठखेलियां करने वाले विभिन्न भाषा भाषी बालकों की भांति हम भी मेलजोल को बढ़ाते हुए, इस जीवन के आनंद का अनुभव क्यों न करें? आखिर, हम सभी उसी 'सिरजन-हार' की संतान ही तो हैं!'

इस गीत की भावधारा से अभिभूत होकर, एंड्रूज ने 'माडर्न रिव्यू' (जनवरी, १९१३) में लिखा था :

'हैम्पस्टेड हीथ से सटे हुए मार्ग से लौट रहा था मैं। साथ में नेव्हिसन थे सही, किंतु मैंने उनसे कोई बात नहीं की। मैं एकांत चाहता था, मूक भाव से उस गीत से उत्पन्न विस्मय एवं वैभव के संबंध में मन ही मन ध्यान करने की इच्छा हो रही थी। नेव्हिसन को छोड़कर मैंने हीथ को पार कर डाला। उस निशीथ में आकाश के बादल नहीं थे; भारतीय वायुमंडल के समान नीलिमा मानों उस पर छायी थी। वहीं एकांत में मैं गीत से उत्पन्न विस्मय-भावना की थाह पा सका। सार्वदेशीय मानव-हृदय के स्पंदनों से समूची मानव-जाति के रहस्य से अभिभूत हो गया।

'अनंत विश्वों के सागर तीर पर, हम सभी संतान एकत्रित हैं। अनंत विश्वों के सागर तीर पर, मिली हैं सभी संतान।'

'इस गीत में मुझे वह समग्र संगीत गूंजता सा लगा, जिसे मैंने बचपन में सुने हुए मधुर शब्दों में पाया था। उसने मुझे मोहित कर दिया था। रात बढ़ती गयी, किंतु मैं वहीं आकाश के नीचे निस्पंद खड़ा था।'

इंग्लैंड में रवींद्रनाथ के साथ अपने परिचय को प्रगाढ़ करके, एंड्रूज सन १९१३ में, जब रवींद्रनाथ अमरीका में थे, शांतिनिकेतन आये। वहां उन्हें जो 'असीम शांति' प्राप्त हुई, उसका वर्णन उन्होंने 'द पॉम्स एट शांतिनिकेतन' नाम की अपनी कविता में इन शब्दों में किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, 'मैं अब तक इधर-उधर घूमता रहा; मुझे कहीं राहत न मिली । मेरी जीवन-नौका को अब तक थपेड़े ही लगते रहे । किंतु, शांतिनिकेतन के वायुमंडल में पहुंचकर, यहां के आकाश के नीचे, खजूर के वृक्षों के निकट मेरी आत्मा को वह असीम शांति प्राप्त हुई, जिसे प्राप्त करने का मैं निरंतर अभिलाषी रहा था ।'

प्रार्थना के उत्तर में मिला आदेश

इस असीम शांति को पाने के बाद, एंड्रयूज ने ईसा से 'LEAD KINDLY LIGHT' (तमसो मा ज्योतिर्गमय) नामक वह भावपूर्ण प्रार्थना की, जो बाइबिल में वर्णित है । इस प्रार्थना के बाद, उन्हें स्पष्ट अनुभूति हुई कि उनकी आर्त पुकार सुनकर, ईसा मसीह उन्हें संप्रदायों की सीमाओं को लांघकर, मानव-जाति की सेवा में जुट जाने की प्रेरणा प्रदान कर रहे हैं । उन्होंने जीवन भर, इस प्रेरणा के अनुसार, चलने का निश्चय किया । कुछ समय बाद, उन्हें अलबर्ट वाइंसर की पुस्तक 'द क्वैस्ट ऑफ दॅ हिस्टारिकल जीसस' नामक पुस्तक पढ़ने को मिली, जिसने ईसा की ऐतिहासिक सत्यता के प्रति उनके सभी संशयों को दूर कर दिया । 'ईसा के प्रति अविचल भक्ति की ज्योति मेरे हृदय में जाग उठी, और उसी के बल पर मुझे प्रभु का आदेश प्राप्त हुआ । मेरा जीवन-पुष्प अब अंतर्यामी प्रभु के चरणों पर ही समर्पित है' उन्होंने लिखा ।

उन दिनों दक्षिण अफ्रीका में वर्णविद्वेष चरम सीमा तक पहुंच चुका था । वहां की सरकार ने जो 'इमिग्रेशन एक्ट' पारित किया था, उसके अनुसार, दक्षिण अफ्रीका में रहने वाले भारतीयों के विवाह ग़ैर-कानूनी घोषित किये जा रहे थे और हर भारतीय को ३ पौंड का कर देना पड़ रहा था । गांधी ने इस कानून के विरुद्ध सत्याग्रह आरंभ कर दिया था, और भारत में गोपालकृष्ण गोखले इस सत्याग्रह की आर्थिक सहायता के लिए चंदा जमा करने में जुट गये थे । उन्होंने गोखले के पास जाकर कहा, 'ईसाई धर्म के पालन का दावा करने वाली दक्षिण अफ्रीका की सरकार की अन्यायपूर्ण नीति के साथ-साथ, वहां बसे भारतीयों को सदा के लिए निष्कासित करने के उसके कुप्रयासों को देखकर, मैं लज्जा के साथ उद्वेग भी अनुभव करता हूं । मेरे पास इस समय मात्र ३०० पौंड हैं । मैं इस राशि को सत्याग्रह-निधि के लिए समर्पित करना चाहता हूं ।'

गोखले ने विस्मित स्वर में कहा, 'मैं आपकी मानवीयता तथा उदारता से बहुत अधिक प्रभावित हुआ हूं, किंतु आपसे मात्र १००० रुपये ही लूंगा । मुझे धन से अधिक आप जैसे उदाराशय व्यक्तियों के सक्रिय सहयोग की अधिक आवश्यकता है ।'

'कैसा सहयोग चाहते हैं आप मुझसे ?' एंड्रयूज ने विनम्रता से पूछा ।

'आप सत्याग्रह-निधि के लिए धनराशि जमा करने में मेरी सहायता करें, तथा दक्षिण अफ्रीका में रहने वाले भारतीयों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर जो जुल्म हो रहा है, उसे दूर करने के लिए आप स्वयं अग्रसर होकर जो कुछ भी करेंगे, उससे हमें संतोष और हर्ष होगा,' गोखले ने उनसे कहा।

एंड्रयूज ने यह सुनकर, स्वयं दक्षिण अफ्रीका जाने का विचार किया। सर्वप्रथम उन्होंने भारत के तत्कालीन वायसराय लार्ड हार्डिन्ज तथा मेट्रोपोलिटन बिशप से भेंट कर इस सत्याग्रह के लिए दोनों की सहानुभूति प्राप्त की, और अनेक अंग्रेजों से उसकी निधि के लिए चंदा लिया। फिर, वे रवींद्रनाथ का शुभाशीष प्राप्त करने के उद्देश्य से शांतिनिकेतन पहुंचे।

प्रायः छह महीने पूर्व, उन्होंने लार्ड हार्डिन्ज के निवासस्थान पर, अनेक वरिष्ठ अंग्रेज अधिकारियों की उपस्थिति में 'रवींद्रनाथ, व्यक्तित्व एवं कृतित्व' नाम का निबंध पढ़ा था, जिसे सुनकर वायसराय ने रवींद्रनाथ को 'पोएट लारियेट ऑफ एशिया' कहकर सम्मानित किया था। विदेशी शासकों से रवींद्रनाथ को सर्वप्रथम ऐसा सम्मान प्राप्त कराने का श्रेय एंड्रयूज को ही जाता है।

जब वे शांतिनिकेतन पहुंचे, तो वहां नोबेल पुरस्कार की प्राप्ति के उपलक्ष्य में रवींद्रनाथ का सम्मान हो रहा था। एंड्रयूज को सम्मान-समारोह में किये जाने वाले भाषणों में प्रशंसा के साथ कवि की आलोचना भी सुनने को मिली, रवींद्रनाथ जिस निर्विकार भाव से दोनों को स्वीकार कर रहे थे, उसे देखकर कवि के प्रति उनका समादर और भी बढ़ गया। बाद में, वे रवींद्रनाथ से मिले, और उनके चरणों में सर नवाकर, उन्हें दक्षिण अफ्रीका जाने के अपने निश्चय से अवगत कराया। रवींद्रनाथ ने उन्हें गले से लगाकर, शुभाशीष दिया। विदा लेने से पूर्व, रवींद्रनाथ को एक पत्र लिखकर, उन्होंने अपने अंतिम निर्णय को इन शब्दों में व्यक्त किया, 'अब शांतिनिकेतन ही मेरा निवास-स्थान होगा। अफ्रीका से लौटकर मैं आपके कार्य में पूरा सहयोग देने का अभिलाषी हूं।'

दक्षिण अफ्रीका पहुंच कर एंड्रयूज ने गांधीजी के सत्याग्रह संग्राम में भरपूर सहायता की। जब गांधीजी और जनरल स्मट्स में समाधानकारक समझौता हो गया, तो वे इंग्लैंड होकर वापस भारत लौटे, और १७ अप्रैल, १९१४ को अपने निवास स्थान शांतिनिकेतन पहुंचे। वहां उनके आगमन के हर्ष में एक समारोह आयोजित हुआ, जिसमें रवींद्रनाथ ने इन भावभीने शब्दों के साथ उनका हार्दिक स्वागत किया : 'प्रतीचीर तीर्थ हते प्राणरस धार, हे बंधु एनेछो, तुमि, करि नमस्कार।'

आर्थिक उत्सर्ग एवं लौकिक सम्मान और पुरस्कारों के प्रलोभनों को छोड़कर, शांतिनिकेतन के सीधे-सादे रहन-सहन को अंगीकार कर, उन्होंने आने वाले वर्षों में रवींद्रनाथ के कार्यों के प्रति अपनी असाधारण निष्ठा का यथार्थ परिचय दिया, और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के जीते-जागते उदाहरण बन गये।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवनी - प्रसंग :

अद्‌भुत कर्मयोगी

☐ दीनानाथ दुबे

जो नाम विश्व में आदर के साथ लिये जाते है और जिनकी लगन की भूरि-भूरि प्रशंसा की जाती है वे अकस्मात प्रसिद्ध के शिखर पर नहीं पहुंच गये थे। इस कीर्ति को प्राप्त करने में उन्होंने अपना सर्वस्व होम कर दिया था। लक्ष्य की प्राप्ति में वह किस तरह अधीर थे कि उन्हें अपने तन की परवाह भी नहीं थी। ऐसी ही कहानी है रबड़ उद्योग के आविष्कारक चार्ल्स गुडइयर की है, जिनके नाम पर गुडइयर टायरों की अंतर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि है। यद्यपि इस कंपनी का उनके परिवार से कोई संबंध नहीं रहा वह उनके नाम को सम्मान-सूचक समझकर धारण किये हुए है।

आज रबड़ उद्योग का जो विकास हुआ है और विविध उद्योगों—भीमकाय जेटों से लेकर सर्वसाधारण जूते, चप्पलों तक जिस प्रकार धड़ल्ले से उपयोग होने लगा है उसको ऋतुसह (वेदर प्रूफ) बनाने का श्रेय चार्ल्स गुडइयर को है और उनकी वल्कनीकरण प्रणाली के कारण ही सारी दुनिया उन्हें रबड़ उद्योग का जन्मदाता मानती है। अमरीका में उन दिनों रबड़ नामक उत्पादन ने लोगों का ध्यान आकर्षित किया। न्यूयार्क की रक्सबरी रबड़ कंपनी में चार्ल्स ने रबड़ की बनी कुछ वस्तुएं—दस्ताने, कोट, जूते, लाइफ बेल्ट देखी। इन सामानों में चार्ल्स को कुछ दोष मालूम पड़ा। इस दोष को दूर करने की बात चार्ल्स के दिमाग में आयी और उसने लाइफ बेल्ट खरीद लिया।

अपनी आत्मकथा में चार्ल्स गुडइयर ने लिखा—'मुझे देखकर यह आश्चर्य हुआ कि तपते हुए स्टोव पर रबड़, गंधक को मिलाकर रखने से रबड़ भी चमड़े की तरह झुलसने लगता था और मुझे ऐसा आभास हुआ कि इस प्रक्रिया को विशेष अवधि तक चलाने से रबड़ का चिपचिपापन समाप्त हो जायेगा। बाद में मैंने यह बात कई बार जांची और मुझे विश्वास हो गया कि मेरा अनुमान ठीक ही है।' चार्ल्स गुडइयर की इस खोज के पीछे उसकी प्रतिभा और अंतरात्मा की आवाज़ थी। क्योंकि उस ज़माने में रबड़ पर उष्मा का प्रयोग उस समय की प्रचलित प्रविधियों के प्रतिकूल था। चार्ल्स गुडइयर खुद मानता है कि उसकी खोज किसी वैज्ञानिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोज की बजाय निरंतर प्रयोगों और सूक्ष्म निरीक्षण पर आधारित थी। चार्ल्स को इन निरंतर प्रयोगों की भीषण कीमत चुकानी पड़ी। परिवार अक्सर फांके करता। जो कुछ पास में था वह नीलामी बोली पर चढ़ गया था। कर्ज़ न चुका पाने के कारण उसे सात बार जेल जाना पड़ा था। आखिरी बार जब चार्ल्स जेल में थे तो फ्रांस के सम्राट लुई नैपोलियन ने उनकी प्रशंसा करते हुए कहा था कि फ्रैंक्लिन के बाद अमेरिका के दूसरे महान् व्यक्ति चार्ल्स गुडइयर थे उन्हें 'लीजन आफ आनर' प्रतिष्ठा-पद दिया था। जेल में ही चार्ल्स के लड़के चार्ल्स जूनियर ने उन्हें फ्रांस का महान सम्मान भेंट किया।

अपनी मंजिल की तलाश में चार्ल्स ने जी जान से काम किया। यह बात अलग रही कि उसे सफलता बहुत बाद में मिली। इस सिलसिले में अपनी आत्मकथा में उन्होंने लिखा—'मनुष्य तो यही सोचता रहता है वह अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए योजना के अनुसार कार्य कर रहा है परंतु वह ईश्वर द्वारा सुझाये गये उद्देश्य की पूर्ति में ही रहता है।' इस उद्देश्य की गहराई तक भले हम न पहुंचे लेकिन ऐसा विश्वास है इसी उद्देश्य में मनुष्य के पूर्ण विकास की भावना निहित रहती है।

चार्ल्स गुडइयर के समर्पित उद्देश्यों ने ही उसे अंततः मंज़िल पर पहुंचाया। भले ही इस काम में उसे लोगों की अवहेलना और अपमान की पीड़ा सहनी पड़ी, पर पता नहीं उसके अज्ञात मन में कौन-सी ऐसी बलवती लालसा थी जो उसको सदैव प्रेरित किये रहती थी। कुछ महीनों बाद चार्ल्स दुबारा न्यूयार्क पहुंचा। इस बीच उसने बेल्ट में सुधार करके उत्पादन को कुछ दोषरहित बना दिया था। उसे विश्वास था कि उसकी इस खोज पर काम्सबरी कंपनी से कुछ आर्थिक सहायता मिलेगी। पर हुआ उलटा। कंपनी का प्रबंधक उसकी खोज को दाद देने के बजाय चार्ल्स को गोदाम की ओर ले गया जहां रबड़ की बनी चीज़ें गर्मी के कारण परस्पर चिपक गयी थीं और उनका कोई इस्तेमाल नहीं दीख रहा था।

चार्ल्स को अपनी मेहनत बेकार जाने का दु:ख नहीं हुआ। न वह प्रबंधक की बातों से हतोत्साहित हुआ। गोदाम में रबड़ के ढेर देखकर उसके दिमाग में एक विचार कौंधा कि क्या रबड़ को ऋतुसह (वेदर प्रूफ) नहीं बनाया जा सकता? वह इसी धुन में घर लौट आया। घरवाले आशा कर रहे थे चार्ल्स कुछ धन लायेगा पर हुआ उल्टा और उधार देनेवालों के तकादे पर तकादे आ रहे थे। घर का सारा सामान नीलामी में चढ़ चुका था। परिवार के भूखों मरने की नौबत आ चुकी थी। उधार न चुका पाने के कारण उसे सज़ा भी हो गयी। चार्ल्स जेल के सींकचों के भीतर अपनी कोठरी में रबड़ की चीज़ों को निरंतर परखता। जेल से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छूटने के बाद एक मित्र की सहायता से रबड़ के जूते बनाने का काम शुरू किया। जूते तो बनने लगे, परंतु गर्मी आते ही बने-बनाये जूतों में चिपचिपापन आना शुरू हो गया। भला कौन खरीदता? चार्ल्स के सामने बड़ी मुसीबत थी। उसका परिवार निरंतर की कठिनाइयों से धीरज छोड़ चुका था, परंतु चार्ल्स तो ऐसी मिट्टी का बना था जिसने झुकना नहीं जाना था। जैसे-जैसे कठिनाइयां बढ़ती गयीं चार्ल्स की हिम्मत भी दुगुनी होती गयी। अंत में चार्ल्स ने मैग्निशिया के अलावा थोड़ा चूना भी मिलाया। कुछ चिपचिपापन कम हुआ। उसे इनाम भी मिला। परंतु इस नये प्रयोग के बावजूद एक कमी थी कि एसिड के कारण रबड़ की बनी चीजें तुरंत खराब हो जाती थीं। चार्ल्स ने प्रयोग कर नाइट्रिक एसिड का प्रयोग कर मज़बूती के सवाल का हल प्राप्त कर लिया था। अपने इस नये प्रयोग के आधार पर उसने बोस्टन शहर में डाक के थैले बनाने का कारखाना लगाया। परंतु दुर्भाग्य ने अभी साथ नहीं छोड़ा था और यह कारखाना भी बंद हो गया। उसका परिवार कई दिनों तक भूखा रहने लगा। परंतु इस बीच उसकी जीवटता और संकल्प की कहानी काफी प्रकाश में आ चुकी थी। बोस्टन शहर के लोगों ने चंदे करके उसके परिवार को खाद्यान्न पहुंचाया।

'सब दिन जात न एक समान'। १८३९ के वर्ष में फरवरी महीने की शीत की एक अंधियारी रात। सारा परिवार शीत के प्रकोप से बचने के लिए आग के सहारे रात बिता रहा था। चार्ल्स भी आग के पास बैठा उधेड़बुन में अपने प्रयोग के परिणाम में खोया था। आग में उसने गंधक और रबड़ को रखा था। दोनों की महक निकलने पर उसने इस चिपचिपे पदार्थ को अनायास मकान के बाहर फेंक दिया। दूसरे दिन उसने देखा कि सर्दी में दोनों पदार्थ एक दूसरे में कसकर लचकदार पदार्थ बन गये थे। सदा मुरझाया और उदास रहने वाला चेहरा चमक उठा। उसे लगने लगा कि कोई बहुमूल्य निधि मिल गयी। चार्ल्स के लिए यह काफी था; वर्षों की उसकी साधना के सफल होने के सूत्र उसके हाथ लग गये। अब वह जान गया कि अलग-अलग अनुपातों में रबड़ व गंधक को मिलाकर विविध तापमानों पर गरम करके इच्छित वस्तु तैयार की जा सकती है। उसकी यही विधि आज वल्कनाइज्ड़ रबड़ की जननी बनी।

रबड़ को इंसानी सुख का एक अमोघ साधन बनाने के लिए चार्ल्स ने अपने जीवन को लक्ष्य के प्रति होम कर दिया। ऐसी बात नहीं थी कि परिवार के दुर्दिन और गरीबी से उन्हें पीड़ा नहीं पहुंचती थी, परंतु उन्हें विश्वास था कि उन्हें अपने लक्ष्य में सफलता जरूर मिलेगी। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उनमें मोह भर गया था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वह बिरले ही लोगों में होता है। खुद के आत्मसुख के बजाय वे मानवता के सुख को ज़्यादा अहमियत देते रहे।

चार्ल्स को अपने जीवन के आखिरी दिनों में अपार सफलताएं और शोहरत मिली। प्रचुर मात्रा में धन भी मिला। लोगों का ख्याल था कि वह लाखों डालरों के स्वामी थे। परंतु मृत्यु के समय २०००,००० डालर का कर्ज़ उन पर था। यही कारण था कि कांग्रेस ने चार्ल्स की मानवता के हित में उनकी सेवाओं को देखते हुए पेटेंट का अधिकार चार्ल्स के परिवार को वापस कर दिया था और ऋण की माफी भी। अमेरिका की सर्वोच्च संस्था कांग्रेस द्वारा किया गया निर्णय सर्वथा उचित ही था।

२९ दिसम्बर १८०० को जन्मे और २ जुलाई १८६० को मरे चार्ल्स गुडइयर की मौत भी शानदार ढंग से हुई थी। वाशिंगटन में उन्हें समाचार मिला कि उनकी लड़की की हालत खराब है और वे जहाज़ से न्युहैवेन की ओर चल पड़े। वह किनारे पर पहुंचे ही थे कि उन्हें लड़की की मौत का समाचार मिला। समाचार सुनकर उन्होंने अपने थके हुए हाथ जोड़े और वहीं हमेशा के लिए चिरनिद्रा में सो गये। ऐसे अद्‌भुत कर्मयोगी को सारे राष्ट्र ने श्रद्धा के साथ नमन किया।

—७ बस्तीराम पलैट,
छावनी चौराहा, कोटा, राजस्थान

□

"उठो, जागो और तब तक न रुको
जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो।"

—स्वामी विवेकानन्द

न्यू बैंक
का
लक्ष्य है

सम्पूर्ण राष्ट्र का कल्याण एवं समृद्धि

न्यू बैंक ऑफ इंडिया

[भारत सरकार का उपक्रम]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लहसुन : लाख रोगों की एक दवा

□ अतुल गोस्वामी

लहसुन की उपयोगिता का लोहा अब तो वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं। वैसे लहसुन अपनी तीखी गंध के कारण बहुत बदनाम है और बहुत से लोग लहसुन की गंध के कारण ही नाक बंद कर लेते हैं, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि इससे लाभान्वित होने से वंचित रहें। और अब तो वैज्ञानिकों ने भी सर्वसम्मत राय बना ली है–'गंध से मत डरो–लहसुन खाओ। दिल की सेहत बनाओ।'

यों तो चिकित्सक एक अरसे से लहसुन को हमारे गले के नीचे उतारने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन लगता है इस काम में बहुत बड़ी सफलता हासिल होगी कोलोन विश्वविद्यालय के प्रो. हैंस रायटर को। उन्होंने एक लंबे अर्से तक अनुसंधान करके बताया है कि लहसुन एक विवादास्पद खाद्य तो है ही, एक ऐसी दवा भी है जिसका मूल्य लोगों ने कम आंका है।

रक्त में कालेस्टरोल नामक एक पदार्थ होता है। अगर इसकी मात्रा बढ़ जाये तो दिल के दौरे का खतरा भी बढ़ जाता है। प्रो. साहब के अनुसार लहसुन कालेस्टरोल को कम करता है। इसे सिद्ध करने के लिए प्रो. साहब ने कुछ स्वयंसेवियों पर प्रयोग किये। इन सबको मक्खनवाले छोटे जिलेटिन कैप्सूल खिलाये गये। कुछ कैप्सूलों में लहसुन था और कुछ में नहीं। बाद में देखा गया कि जो लहसुनवाले कैप्सूल ले रहे थे उनके रक्त में कालेस्टरोल अपेक्षाकृत बहुत कम था। कई मरीज़ों को उन्होंने प्रतिदिन तीन ग्राम कच्चा लहसुन खिलाया। उनके रक्त में भी कालेस्टरोल की मात्रा काफी घट गयी।

डा. रायटर का कथन है कि लहसुन अनेक खतरनाक जीवाणुओं को मौत के घाट उतार देता है। क्षय रोग और डिप्थीरिया के जीवाणुओं को उन्होंने स्वयं मरते देखा है। कई मामलों में तो लहसुन पेंसिलिन से भी बाज़ी मार ले गया।

लीबिया के बेंगाजी विश्वविद्यालय के रक्त परीक्षण विशेषज्ञ डा. आर. सी. जैन ने बताया कि लहसुन से निस्संदेह कालेस्टरोल का स्तर कम किया जा सकता है। उन्होंने खरगोशों पर किये गये परीक्षणों के दौरान पाया कि जब खरगोशों को कालेस्टरोल से युक्त भोजन सोलह सप्ताह तक खिलाया गया तो उनकी मुख्य रक्त-नली (ओरटा) और जिगर में भारी मात्रा में कालेस्टरोल जमा हो गया। परंतु इसके बाद उन्हें लहसुन खिलाया गया तो वसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गायब हो गया और कालेस्टरोल का स्तर भी नीचे गिर गया।

लहसुन की उपयोगिता को देखते हुए इस पर नयी नयी खोजें जारी हैं। मेडिकल पत्रिका—'द लांसेट' में प्रकाशित एक लेख में चिकित्सक द्वय डा. अरुण बोरडिया तथा डा. एच. सी. बंसल का कहना है कि भारत में किये गये उनके अनुसंधान से पता चला है कि लहसुन के प्रयोग से दस हृदयरोगियों को चिकनाई वाला भोजन दिये जाने पर भी हृदय को रक्त पहुंचाने वाले स्नायुओं में रक्त अपेक्षाकृत धीमी गति से जमा।

इन चिकित्सक द्वय ने लिखा है कि कुछ और ऐसे पदार्थ हैं, जो हृदय को रक्त पहुंचानेवाले स्नायुओं पर चिकनाई के जमाव को रोकते हैं किंतु एक तो वे बहुत महंगे हैं तथा दूसरे उनका असर थोड़ी देर तक ही रहता है। इसके विपरीत लहसुन आसानी से हर जगह प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है और उसके सेवन के बाद में कोई दुष्प्रभाव भी नहीं पड़ता है।

ऐसी बात नहीं कि लहसुन की दुर्गंध और न खाने को लेकर सिर्फ भारत में ही गलत धारणाएं हैं। जिन देशों में विज्ञान काफी तरक्की पर है उनके यहां भी ऐसे धर्मभीरु और परंपरागत लोग हैं जो इसी प्रकार सोचते हैं। प्राचीन काल में विभिन्न धर्मों के पुरोहित इसका सेवन नहीं करते थे। प्राचीन मिस्र में लहसुन को अपवित्र और अस्वच्छ माना जाता था। जो लोग लहसुन खाते थे उन्हें 'सीबेलें' के मंदिर में प्रवेश नहीं करने दिया जाता था।

हर काल में हर तरह के लोग होते हैं। लहसुन को लेने, न लेने के तर्क में दोनों तरह के लोग थे। उस युग में भी जो इसकी महत्ता को जानते थे लहसुन खुद खाते थे और दूसरों को भी खाने की सलाह देते थे। मध्ययुग यद्यपि अंधविश्वासों एवं पुरोहितों का माना जाता था फिर भी लोगों ने इसकी उपयोगिता समझी। प्रेत-पिशाचों से रक्षा के लिए कवच, तावीज़, तथा तिलस्म के रूप में लहसुन को लोग हमेशा अपने पास रखते थे। किसी भी प्रकार के अनिष्ट से बचने के लिए भी लहसुन रखने का प्रचलन था। बोलीबिया के 'अपमारा इंडियन' आज भी रक्षा-कवच के रूप में लहसुन धारण करते हैं।

रोमन लोग लहसुन को शक्ति का स्रोत मानते थे। उनके साम्राज्य में कोई शक्तिहीन न हो इसके लिए लहसुन खिलाते थे, साम्राज्य निर्माता अपने दासों, मज़दूरों और सैनिकों को। किन्हीं कारणों से जो नहीं खाते थे उन्हें भी लहसुन खाने के लिए हर प्रकार से उत्साहित किया जाता था। १६६५ में इंग्लैंड में जब प्लेग फैला तो इसकी रोकथाम के लिए लहसुन को भारी मात्रा में काम में लाया गया। इससे हुए लाभों को देखकर जड़ी-बूटी के बागों तक में लहसुन की खेती की जाने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लहसुन का इतिहास चाहे जहां से, जब से आरंभ हुआ हो, इसकी उपयोगिता विभिन्न रूपों में महत्वपूर्ण है। इसकी महत्ता के लिए इतना जानना पर्याप्त होगा कि लहसुन एक गांठ है जिसमें अनेक दाने होते हैं। यह प्रकृति से गर्म तो होता है लेकिन इसकी गर्मी नुकसान नहीं पहुंचाती। लहसुन रोग निवारण के लिए 'रामबाण' का काम करता है। इसमें विद्यमान 'एलियम' नामक रासायनिक तत्व शरीर के भीतर के तमाम जीवाणुओं को नष्ट कर देता है।

रोग निरोधक एवं रोग प्रतिबंधक होने के कारण इसका प्रचलन अब तेजी से बढ़ रहा है। अब उन घरों में भी इसका उपयोग होने लगा है जो कभी इसका घोर विरोध किया करते थे। आयुर्वेद में तो इसके गुणों को गाते थका नहीं गया है। नीरोग रहने के लिए प्रातः काल कुल्ला करने के बाद एक दाना या फांक लेने का भी आयुर्वेद में उल्लेख मिलता है। चिकित्सकों ने इसे बहुत उपयोगी और अनुकूल पाया है।

औषधि के रूप में लहसुन का महत्व पहले भी था लेकिन इस समय इसकी महत्ता अधिक बढ़ गयी है। ग्रीक लोग तो चटखारे लेकर लहसुन खाते थे। बेबीलोन में अनेक रोगों के इलाज के लिए लहसुन का प्रयोग किया जाता था। दक्षिणी यूरोप में लहसुन के पत्तों तक का प्रचुरता में उपयोग करने का उल्लेख

मिलता है। इस बीसवीं सदी में भी भारत के बहुत से गांवों एवं शहरी हिस्सों में अब भी लोग लहसुन के पत्तों की चटनी बना कर खाते हैं। कुछ रसायनशालाएं कच्चे लहसुन को निर्गंध बनाकर कैप्सूल के रूप में बेचती भी हैं।

लहसुन की उपयोगिता को ध्यान में रखकर एक जापानी किसान निर्गंध लहसुन उपजाता है। 'तोशियो नाकागावा' नामक इस लहसुन को जापानी औद्योगिक कंपनी मित्सूनिशी कार्पोरेशन ने व्यापार करने का निश्चय किया है।

लहसुन रक्त-शोधक के साथ-साथ रक्तचाप वाले हर व्यक्ति के लिए भी लाभप्रद है। स्थूलकाय व्यक्ति इसका सेवन कर अपना मोटापा आसानी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घटा सकता है। श्वास रोगों के लिए भी यह अति गुणकारी औषधि है।

प्रौढ़ व्यक्ति को लहसुन की चटनी अवश्य खानी चाहिये। यह वात-व्याधि नाशक है। यदि लहसुन का रस एक चम्मच भर कुनकुना कर दिन में तीन बार दिया जाये तो कुक्कुर खांसी तक दूर भाग जाती है। इस बात का ध्यान होना चाहिये कि बच्चों को यही खुराक देते समय उसमें शहद मिला दें ताकि वे इसे शर्बत या कोई मीठी टानिक समझकर आसानी से खा सकें।

कुत्ते के काट लेने पर या हड्डी टूट जाने पर लहसुन के रस में शहद मिलाकर दिन में दो-तीन बार सेवन कराना चाहिये। जोड़ों तथा कमर में दर्द उठने पर दूध में लहसुन को पकाकर उसी दूध को पीना चाहिये।

सरसों के तेल में लहसुन के दाने गरम करके छान लीजिये। सहने योग्य हो जाने पर इसे कान में दो-दो बूंद डालिये। किसी भी प्रकार का कान-दर्द जाता जाता रहेगा।

मिर्गी या अन्य किसी भी प्रकार की मूर्च्छा की अवस्था में लहसुन का रस दो बूंद नाक में डालने अथवा सुंघाने से मूर्च्छा दूर हो जाती है। यदि किसी भी प्रकार का बुखार आये और अचानक बुखार उतर जाने पर शरीर ठंडा पड़ जाये तो लहसुन का रस निकालकर शरीर तथा हाथ-पांवों पर मलने से गर्मी आ जाती है।

मलेरिया बुखार में लहसुन को कूटकर, काढ़ा बनाकर थोड़ा सेंधानमक मिलाकर नित्य प्रातःकाल सेवन करना लाभकारी होता है। पुराने घाव तथा दाद में लहसुन को चटनी की भांति पीसकर लेप लगाना चाहिये। हैजा हो जाने पर लहसुन का रस थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बार-बार सेवन करना नहीं भूलना चाहिये।

पेट-दर्द, वायु की शिकायत, वायु का गोला तथा अन्य वायु संबंधी रोगों में प्रतिदिन लहसुन की चटनी खाने से ये सभी बीमारियां छूमंतर हो जाती हैं। जिन महिलाओं को मासिक धर्म ठीक प्रकार से नहीं आता हो तथा कमर में पीड़ा बनी रहती हो उनके लिए भी लहसुन का पाक लाभकारी होता है।

इसमें कोई शंका नहीं कि लहसुन अमृत के समान है। जहां तक हो सके भोजन में प्रतिदिन लहसुन खाना चाहिये ताकि कई भयंकर रोगों की आशंका से मुक्त हुआ जा सके।

—जनप्रिय पुस्तक मंदिर, हरियाणा रोड-वेज बस अड्डा, बल्लभगढ़-१२१००४

□

आशा परम दुःख है, निराशा का भाव परम सुख है।
पराधीनता दुःखी और जितेन्द्रिय सुखी है। —मनु

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक;
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

प्रार्थना

स नः शकश्चिदाशकत्,
दानवां उत्तराभरः।
इन्द्रो विश्वाभिरूतिथिः।

वह शक्तिमान हमें भी शक्तियुक्त करे, क्योंकि वह दान देने वाला तथा अंतस्तल को सभर करने वाला है। वह परमेश्वर सभी रक्षाओं से हमें समर्थ करे।

—ऋग्वेद ८, ३२, १२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋग्वेद और अवेस्ता

□ राधाकुमुद मुकर्जी

अनेक भाषाविदों का मत है कि संस्कृत सभी इण्डो-यूरोपियन भाषाओं की जननी है। किन्तु, अन्य इण्डो-यूरोपियन भाषाओं, जैसे ग्रीक, लैटिन, फारसी, सैल्टिक आदि की अपेक्षा ऋग्वेद की भाषा संस्कृत तथा उस भाषा में, जिसमें 'अवेस्ता' की रचना हुई है, अधिक साम्य दिखायी देता है।

'ऋग्वेद संहिता' आर्य जाति की प्राचीनतम रचना है। उसके अध्ययन से हमें न केवल भारत में रहने वाले आर्यों के इतिहास की जानकारी होती है, अपितु अन्य देशों में रहने वाले आर्यों के जीवन और इतिहास का ज्ञान भी होता है। भाषा की प्रागैतिहासिक प्रावस्थाओं तथा तत्कालीन आर्य-संस्कृति और धर्म पर भी यह महान ग्रंथ भरपूर प्रकाश डालता है।

भाषाविदों का मत है कि व्याकरण की दृष्टि से ऋग्वेद की भाषा – फारसी, ग्रीक, लैटिन, सैल्टिक तथा स्लॉवोनिक भाषा में काफ़ी साम्य है, जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि इन सब भाषाओं का उद्गम-स्रोत एक ही था। कुछ विशेषज्ञ यह भी मानते हैं कि संस्कृत सभी इण्डो-यूरोपियन भाषाओं की जननी है। सभी इण्डो-यूरोपियन भाषाओं में मूलभूत जीवन संबंधों अथवा जीवन-अनुभवों, जैसे माता, पिता, पुत्र, पुत्री, भाई, हृदय, वृक्ष, गो आदि को व्यक्त करने वाले शब्दों में काफ़ी समानता है।

अतः इन भाषाओं के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वर्तमान पीढ़ी के पूर्वजों द्वारा बोली जाने वाली भाषा एक ही थी, और उसी से वर्तमान भाषाओं की उत्पत्ति हुई। अलग-अलग भाषाओं का जन्म तब हुआ, जब वर्तमान पीढ़ी के पूर्वज, अपने एक निवास-स्थान से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाकर अलग-अलग देशों में बसे।

अन्य इण्डो-यूरोपियन भाषाओं, जैसे ग्रीक, लैटिन आदि की अपेक्षा ऋग्वेद की भाषा संस्कृत तथा उस भाषा में, जिसमें 'जेंद अवेस्ता' की रचना हुई है, अधिक साम्य दिखायी देता है। 'कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया' में उसके लेखक डी. पी. गाइल्स ने कहा है, 'बड़ी आसानी से, बिना वाक्य-रचना या शब्दावली में कोई परिवर्तन किये, आप शब्दों तथा वाक्यांशों को ही नहीं, पूरे पद्यखंडों का लिप्यंतरण कर सकते हैं।' ऋग्वैदिक तथा अवेस्तिक देवताओं के नाम भी समान हैं :

अवेस्तिक	**ऋग्वैदिक**
इन्द्र	इन्द्र
वायु	वायु
मिथ्र	मित्र

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि हिन्दुओं और पारसियों के पूर्वज, पश्चिम की ओर जाने वाले अन्य सगोत्रियों की अपेक्षा, अधिक समय तक एक साथ रहे थे। अपने मूल स्थान से अन्य देशों में जाने वाली आर्य जातियों में वे संभवत: अंतिम आर्य-जातियां थीं, जिन्होंने अपने मूल-स्थान को छोड़ा। यही कारण है कि भारत आने वाले आर्यों और पारसियों की भाषा, दंतकथाओं तथा पुरा-कथाओं में काफ़ी साम्य है।

(भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित 'हिन्दू सिविलिजेशन' से साभार उद्धृत)

रूपांतर : हरि

□

जर्मनी की महान् विचारक रोजा लक्जेम्बर के विरुद्ध किसी ईर्ष्यालु ने समाचार-पत्र में कुछ गलत अफवाहें प्रकाशित करवा दीं; लेकिन वे शांत रहीं। लोगों ने कहा भी कि उन समाचारों का खंडन न करने से जनता में उनके प्रति संदेह उत्पन्न हो रहा है।

'मेरे पिता ने बचपन में एक बात कही थी मुझे,' रोजा ने कहा–'और वह मुझे भूलती नहीं है कि जब हम दूसरे के दोषों को बताने का यत्न करते हैं, तो हमारी एक अंगुली तो उधर की ओर होती है तथा तीन होती हैं अपनी ओर। जिसने भी यह समाचार छपवाया है, उसने मेरी अपेक्षा अपने को तीन गुना दोषी तो पहले ही स्वीकार कर लिया, अब उसका विरोध करने से क्या लाभ?'

– मोतीलाल लंबोरिया

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नरेश मेहता का साहित्य-चिंतन

□

काव्य-यज्ञ का साक्षात्कार

काव्य, मात्र छन्दबद्ध या छन्दमुक्त रचना, अथवा किसी भी प्रकार की कविता से कहीं अधिक, ऐसी सृजनात्मक मानसिकता का न केवल नाम है, बल्कि संस्पर्शी अस्मिता की एक ऐसी भाव-स्थिति है जहां आत्मबोध, विश्वानुभूति तथा परात्पर का ज्ञान तो होता है, लेकिन सर्व-सामान्य के लिए इस स्थिति की कोई विश्वसनीय अथवा यथार्थिक व्याख्या नहीं प्रस्तुत की जा सकती। शब्द तो कहता है—हिम, जो कि ठंडा होता है, परन्तु आप उसे हाथ से ऐसे झटक देते हैं, जैसे अंगारा हो। आप कहना चाहते हैं—प्रकाश, और आपकी आंखों में ही नहीं बल्कि दृष्टि तक में अंधकार छा जाता है। अतः भाषा व्यक्त करते हुए भी क्या वही सम्प्रेषित कर पाती है जिसे अनुभव किया गया? शब्द या भाषा-वस्तु या अनुभव के रूप, गुण और प्रकृति को एक साथ कभी भी व्यक्त नहीं कर सकते। हिम का अग्नि हो जाना या प्रकाश का अंधकार हो जाना, क्या किसी संज्ञात्मक शब्द के द्वारा अभिव्यक्त किया जा सकता है? इसीलिये महान से महान रचना से कहीं अधिक सार्थक, सारवान और तात्विक वह रचनात्मक अनुभव रहा होगा जिसे कवि का स्रष्टा मनसे कभी नहीं लिख सका होगा, परंतु परम प्रशांत मौन रूप में जिसे अपने चारों और नित्य तथा निरंतर उपस्थित एवं घटित होते हुए पाया होगा। सभी काल के कवियों को अपनी इस लीलामयी अनुभूति के विराट परिप्रेक्ष्य में भाषा न केवल अनुपयुक्त या छोटी लगती रही है बल्कि ऐसे एकांतिक उत्सव के क्षणों में अवांछित तृतीय की उपस्थिति जैसी लगती रही है। भाषा या शब्द–वस्तु या अनुभव को केवल यथातथ्य रूप में तो किसी सीमा तक कह पाते हैं परंतु उनके आयामों को नहीं। द्विधा की इस मानसिकता में काव्य, अध्यात्म की तरह न तो निषेध का ही मार्ग ग्रहण कर सकता है और न ही कर्म-काण्ड का जंजाल प्रस्तुत कर सकता है। अध्यात्म में सम्प्रेषण का प्रश्न ही नहीं उठता जबकि काव्य की नियति है—सम्प्रेषण और परिणति है—सृष्टि। और सृष्टि तो 'सबै भूमि गोपाल की' होती है तब काव्य किसे पात्र कहे और किसे अपात्र। यहीं से काव्य से संबंधित समझ और कठिनाई आरंभ होती है। प्रश्न उठता है कि क्या लिखी हुई कविता की देशगतता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के माध्यम से अलिखित कविता के आनुभाविक कालातीत ब्रह्माण्ड में प्रवेश संभव है? क्या भाषा मौन के विराट प्रशान्त मानसरोवर तक ले जा सकती है? क्या कभी यह संभव है कि रचना की भाषा, मात्र शब्द या अर्थ न बोलकर उस अर्थातीत मौन तक हमें पहुंचा सकती है जहां सारी भाषाएं—अपने अर्थ और ध्वनियां उतार कर केवल निर्वेद मौन हो जाती हैं और तब उस विराट मौन में से फिर ध्वनियां, शब्द और भाषा जन्म लेते हैं। अतः काव्य का साक्षात्कार, 'अथात्तो ब्रह्म जिज्ञासा' की भांति ही 'अथात्तो काव्य जिज्ञासा' ही है।

वैसे तो प्रत्येक कविता करने वाला कवि माना जाता है पर हम जिस काव्यात्मक ऊर्ध्वता की ओर बढ़ना चाहते हैं वहां हमें बहुत कुछ को नकारना पड़ सकता है। पूरी धरती को लेकर पहाड़ नहीं बनाया जा सकता। ऊर्ध्वता की प्रकृति एवं तर्क है कि उत्तरोत्तर अनावश्यक को नीचे तथा पीछे छोड़ते जाना। पर ऐसा करने का आधार क्या होगा? इस पार्थक्य का आधार 'कवि' संज्ञा की वह वैदिक परिभाषा होगी जिसमें—'कवयः सत्यश्रुतः' कहा गया है, अर्थात् कवि वह द्रष्टा है जो दिव्य सत्य का श्रवण करता है। काव्य के बारे में जिस जिज्ञासा की बात हमने उठायी वह इस परिभाषा में ध्वनित है। जिसने श्रवण किया उस कवि में वह द्रष्टा भी निहित है। यहां यह प्रश्न उठता है कि जब श्रवण किये को वह सम्प्रेषित

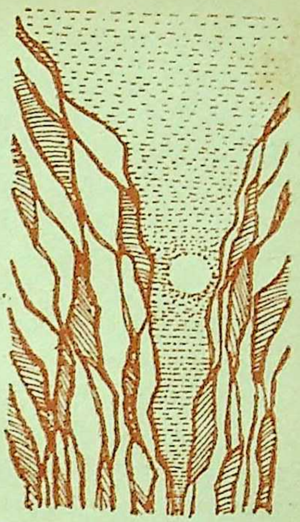

करता है तो दर्शन किये को क्यों नहीं? इसका कारण यह है कि भाषा या अभिव्यक्ति—ध्वनि के स्तर तक तो सम्भव है परन्तु प्रकाश या ज्योति के स्तर पर सब कुछ निःशेष हो जाता है। वह भाव–अभिव्यक्ति की नहीं बल्कि भाव-निपात की देश-कालातीत मानसिकता है। दर्शन के स्तर पर तत्व ही प्रमुख होता है, जो कि सत्य है, ऋत् है जबकि श्रवण के स्तर पर स्रष्टा-मनस् प्रमुख हो जाता है। यह सम्बोधन की भूमि है इसलिये वह दिव्य-सत्य-नाद और ध्वनि के रूप में अपने को कथ्य—सम्भाव्य बनाता है, लेकिन यह भूमि भी मन्त्र की है, न कि काव्य की। चूंकि यह नाद और ध्वनि की भूमि है इसलिये उस विशाल महासागर में मन्त्र, बीज—नौका के समान है। दर्शन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय की भाव-निपात की स्थिति में न अस्मिता थी, न भाव थे, न शब्द थे, न ध्वनि। ऐसी स्थिति में कौन, किसे और क्या अभिव्यक्ति करता? भाव-निपात की मानसिकता मे नीचे आने पर ही यह कामना जगी कि अनुभव किये गये साक्षात् को सम्प्रेषित किया जाये—यह स्तर श्रवण का है। निपात में—विराट प्रकाश था लेकिन सम्प्रेषण के स्तर पर नाद का इतना तीव्र संवेग होगा कि उसे केवल मन्त्र में ही व्यक्त किया जा सकता है इसीलिये मन्त्र, सामान्य अर्थ में कविता नहीं होते। इस श्रुति के आत्म-सम्प्रेषण के स्तर के बाद का ही स्तर काव्य का है कि जहां से किसी अन्य को सम्बोधित किया जा सकता है। इससे अधिक विश्लेषण यहां सम्भव नहीं।

सृजन के सन्दर्भ में ऋषि-व्यक्तित्व के बाद का व्यक्तित्व है—कवि-व्यक्तित्व। सच तो यह है कि दर्शन, श्रवण और काव्य के ये तीनों स्तर काव्य की मानसिकता के ही हैं। यहां उस बहुश्रुत परिभाषा—'कविर्मनीषी परिभू : स्वयंभू'—पर विचार करना समीचीन होगा। जिसमें कवि से तीन विशेषणात्मक अपेक्षाएं की गयी हैं। एक तो यह कि कवि—व्यक्तित्व को प्रज्ञावान या मनीषी होना चाहिये। क्यों? इसलिए कि देश और काल के सम्बोधन के लिए ऐसा होना आवश्यक है। दूसरे—'परि भू:' से तात्पर्य है कि उसे उच्चतम उड़ान भरने वाला भी होना चाहिये। ऐसा क्यों? इसलिये कि दर्शन और श्रवण के बीच अकथनीयता का जो अन्तराल है उसमें उड़ान भरनी होती है। कर्म और साधना के स्तर का आत्मजेता-व्यक्तित्व ही श्रवण के स्तर का ऋषि व्यक्तित्व है जो कि दर्शन के स्तर पर आत्मस्रष्टा या 'स्वयंभू' व्यक्तित्व होता है। कहा जा सकता है कि कवि-व्यक्तित्व से इतनी बड़ी अपेक्षाएं ज्यादती हैं पर हम जिस काव्य के साक्षात्कार को दृष्टि में रखकर विचार कर रहे हैं; जिसमें से कि रामायण महाभारत जैसे आकर-ग्रंथ निसृत होते हैं, वहां यह कसौटी या अपेक्षा सम्भव नहीं है। इस प्रसंग को समाप्त करते हुए यह कहना ावश्यक है कि मन्त्र, श्रुति अवश्य होते हैं परन्तु उनका प्रयोजन उस दर्शन को सम्भव बनाना है जिसे ऋषि-व्यक्तित्व ने निपात की स्थिति में देखा तथा कामना की स्थिति में स्पष्ट सुना। जबकि काव्य, उस श्रुति के उपाख्यान हैं। उपाख्यानों के लिए देशगत तथा कालगत घटनात्मकता आवश्यक होती है। सूर्य—ऋत् या सत्य है। विश्वामित्र ने साक्षात् के बाद जब सूर्य को सुना तो वह गायत्री—मंत्र बना और वाल्मीकि ने जब इस सूर्य श्रुति को सम्बोधित किया तो वह रामायण बनी। अस्तु—

ऐसा कवि-व्यक्तित्व किस प्रकार की सृजनात्मकता का साक्षात् करेगा? लेकिन इसके पूर्व यह जानना भी ज़रूरी है कि कविता क्या है? कविता और कवि के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारस्परिक सम्बन्धों में निर्णायक व्यक्तित्व किसका होता है ? साथ ही हमें मनुष्य पर भी विचार करना चाहिये, जो कि इस सारे प्रणयन और सम्बोधन का विंदु है।

अब तक की चर्चा से यह निष्कर्ष निकला कि सृजनात्मक अस्मिता का नाम कवि है। ऐसी मानसिकता या अस्मिता निश्चय ही ऊर्ध्वमुखी होगी। लेकिन ऊर्ध्वमुखी का तात्पर्य वायवीयता नहीं होता। मनुष्य और उसके जीवन का प्रयोजन क्या अन्य जीवधारियों की भांति ही केवल देहगत और इन्द्रियगत ही है? लेकिन ऐसा मान लेना मनुष्य का तो अपमान होगा ही परंतु प्रकृति के उस विशाल प्रयोजन को भी झुठला देना होगा जिसमें कि उसने मनुष्य के माध्यम से समस्त जैविकता के विकास की परिकल्पना कर रखी है। देहगत विशेषताओं के साथ बुद्धि और संकल्प वाला मन भी मनुष्य को प्रकृति ने दिया है। इन दो शक्तियों ने देश और काल के स्तर पर मनुष्य को कर्त्ता और भोक्ता के रूप में एक स्वतंत्र स्वत्व के रूप में खड़ा कर दिया। केवल जीवन जीना ही उसकी नियति नहीं रह गयी बल्कि शेष जैविकता के लिए भी रचने और निर्माण करने का शुभाशुभ दायित्व भी उस पर आ गया। वैसे तो कर्म बन्धन है पर इस बन्धन से मुक्ति भी—कर्म के द्वारा ही सम्भव है। इस प्रकार के ऊर्ध्वमुखी संकल्प तथा कर्म के लिए वैदिक संज्ञा है—यज्ञ। यज्ञ के बारे में जो आम धारणा है वह भ्रामक है, वस्तुतः यज्ञ व्यक्तित्व की आन्तरिक तीर्थयात्रा, वैचारिक ऊर्ध्वता तथा 'तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु' का ही नाम है। इस वैचारिक तीर्थयात्रा यज्ञ का एक ध्रुव—अग्नि है और दूसरा इन्द्र। अग्नि, ज्ञान से आविष्ट प्रकाश का एक ऐसा ध्रुव-मुहूर्त है जो हमें तथा हमारे संकल्पों को ऊर्ध्वमुखी बनाता है। पृथिवी से द्यौ की ओर जाने के लिए प्रेरित करता है, तो इन्द्र, शक्ति से आविष्ट प्रकाश का ऐसा ध्रुव है जो देवत्व से पूर्ण बनाकर वापस द्यौ से पृथिवी पर दिव्य प्रकाश फैलाने के लिए अभिषेकवत् लौटाता है।

मानवीय वैचारिकता की यह आरोहण तथा अवरोहण यात्रा सृष्टि में आक्षण घटित हो रही है और कवि इस यज्ञ-उत्सव का उद्गाता है। कर्मकाण्ड वाला यज्ञ तो उस यज्ञ का स्थूल रूप है। वास्तविक यज्ञ तो हम में अहोरात्र सम्पन्न हो रहा है। इस सारी यज्ञीयता का इष्ट है कि मनुष्य देश और काल का उल्लंघन करके चाक्षुष-प्रत्यक्ष के स्तर तक जाये और वहां से सूर्य आदि की कुलगोत्रता लेकर पृथिवी पर राम और कृष्ण बनकर पुनः लौटे। लेकिन इस संदर्भ में एक चेतावनी भी आवश्यक है कि प्रकृति ने जहां उसे दो वरदान दिये हैं वहां एक संभाव्य संकट भी जोड़ दिया है कि इन अमोघ शक्तियों के दुरुपयोग होने पर उसे भ्रष्ट होने से भी कोई रोक नहीं सकता। क्षण प्रतिक्षण तथा पग-पग पर प्रकृति अपरोक्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहकर मनुष्य की परीक्षा लेती चलती है। इसे ही देवासुर–संग्राम कहा गया है। यही प्रकृति की लीला है जिसमें इन्द्रिय स्तर पर शेष जैविकता और वैचारिक स्तर पर मनुष्य–कर्त्ता तथा भोक्ता के रूप में घटित होते हैं। इस महाप्रक्रिया को वेद, यज्ञ कहते हैं। यदि इस यज्ञ का प्रयोजन सद् है तो मनुष्य और सारी सृष्टि पुरस्कृत होती है परन्तु असद् होने पर दण्डित भी। इस महालीला का केंद्रीय बिन्दु मानवीय-संकल्प है। यह मानवीय-संकल्प ही सृष्टि, देश और काल के निर्माण तथा विनाश का कारण बनता है। प्रकृति –न कर्त्ता है, न भोक्ता। वह केवल तटस्थ है। मनुष्य को वरदान देकर वह नेपथ्य में चली गयी है परन्तु अन्तिम अस्त्र के रूप में अपने पास केवल 'क्रिया' रख ली है–महाक्रिया!! इसीलिये प्रकृति में क्षमा नहीं है, केवल क्रिया है। अतः काव्य का साक्षात्कार देश, काल और मनुष्य–जिसे सामूहिक संज्ञा में केवल 'सृष्टि' भी कह सकते हैं, इसलिये सृष्टि की भूमि से ऊर्ध्व की ओर अग्नि बनकर उठने तथा इन्द्र बनकर लौटने की यज्ञ-क्रिया है–और कवि इस महायज्ञ का याज्ञिक है।

कविता क्या आत्मतुष्टि होती है? या, कविता मनोरंजन अथवा लोकेषणाओं की प्राप्ति का नाम है? कविता यदि किसी गम्भीरता का नाम है तो कह सकते हैं कि उसका कुल-गोत्र भले ही साहित्य का हो परन्तु वह अपने प्रयोजन में धर्म, दर्शन, अध्यात्म, ज्ञान-विज्ञान, राजनीति समाज सबका प्रतिनिधित्व ही नहीं करत बल्कि वह इनकी नियन्ता भी है। वस्तुत तो कविता, कारण है और सृष्टि उसक क्रिया है। इतिहास साक्षी है कि जब भ कविता अपने इस महत् स्वरूप, दिव्य संकल्प से नीचे आयी है तब न केवल व स्वयं भ्रष्ट हुई है पर उसके साथ सारा धर्म, दर्शन, अध्यात्म, संस्कृति, सभ्यत मूल्य तथा न जाने क्या-क्या भ्रष्ट हु हैं। कविता का भ्रष्ट हो जाना, सृष्टि के सबसे बड़े संकट प्रलय जैसा होता है जब कोई महत् या तत्व किसी का पक्ष नहीं होता तब कविता कैसे किसी क पक्ष हो सकती है? इसलिये काव्य केवल मानवीय आशा-आकांक्षाओं तक ही अप को कैसे सीमित रख सकता है? इस विरा प्रयोजन से इतर उसके जो भी स्वरू होंगे वे भ्रष्ट होंगे और भ्रष्ट-व्यक्तित्व कभी कल्याण नहीं कर सकता, स्व अपना भी। अतः हम इस निष्कर्ष पर अ सकते हैं कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त सृष्टि क मनीषी-व्यक्तित्व अपनी संकल्प-शक्ति के साथ प्रतिसृष्टि के रूप में रचता है तो वह कविता है। चूंकि प्रकृति तटस्थ होती है, तथा प्रकृति का सारा व्यापा लीला है इसलिये काव्य भी सृष्टि की सृजनात्मक लीला है। प्रकृति अप को पदार्थरूप में निरन्तर उलटती-पलटती रहती है और तटस्थ रहकर अपनी इ आत्मलीला की दर्शक भी होती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

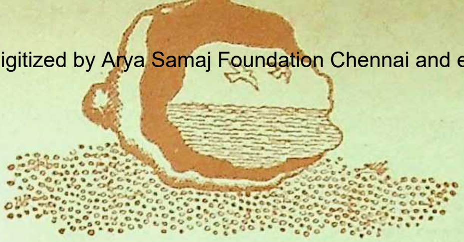

काव्य भी यही करता है। राम का वनवास, रावण का दम्भ, सीता-हरण, अग्नि-परीक्षा, सीता का भूमि-प्रवेश, राम का सरयू में विलीन होना—यह सारा पदार्थ-व्यापार कहीं बाहर नहीं बल्कि कवि-मानस में काव्यात्मक आत्म-लीला के स्तर पर घटित होता रहता है। यह द्रष्टा-व्यक्तित्व कोई पक्ष नहीं ग्रहण करता। भोक्ता रूप में होने पर भी असंग द्रष्टा और स्रष्टा होने के लिए बाध्य है। रामायण-महाभारत की प्रत्येक घटना से भोक्ता रूप में सने होने पर भी वाल्मीकि और व्यास स्रष्टा रूप में निष्पक्ष तथा असंग रहने के लिए बाध्य है, क्योंकि जब प्रकृति और सृष्टि लीला है तथा काव्यात्मक प्रतिसृष्टि कैसे लीला नहीं होगी?

काव्य पर विचार करते समय उसके प्रयोजन पर थोड़े विस्तार से सोचना होगा। यह तो कोई नहीं मानता होगा कि इस सृष्टि का कोई प्रयोजन नहीं है। प्रकृति और सारी जैविकता का प्रयोजन ही वह निर्णायक तत्व है जो उन्हें विभिन्न नाम, रूप, गुण आदि प्रदान करता है। कहने को कह दिया जाता है कि जो जीवन का प्रयोजन है वही काव्य का भी प्रयोजन है। पर, यह तो समझना नहीं हुआ क्योंकि जीवन के प्रयोजन का दायरा क्या होगा? धर्म, दर्शन, अध्यात्म, ज्ञान-विज्ञान, राजनीति सभी जीवन की अपनी-अपनी व्याख्या प्रस्तुत करते हैं तथा उसका प्रयोजन निर्धारित करते हैं। अपने सीमित परिवृत्त में ये आंशिक सत्य होने पर भी समग्रता की समरसी विराट व्यवस्था में कई बार ये आंशिक व्याख्याएं और प्रयोजन बाधक हो उठते हैं। चूंकि ये सीमित होते हैं इसलिये देश और काल अपने प्रवाह-चक्र में इन्हें अवान्तर बनाते चलते हैं जबकि प्रयोजन कभी अवान्तर नहीं होता। वैदिक कवि इन सारे आंशिक प्रयोजनों और व्याख्यानों को 'सत्य' कहता है परन्तु प्रयोजन के अखण्ड स्वरूप को वह 'ऋत्' कहता है। हमारे चारों ओर पदार्थ तथा चेतनता के जो विभिन्न सत्य हैं, उन्हें नाद के स्तर तक ले जाकर प्रकाश या ज्योति के ऋत्लोक, जिसे वैदिक भाषा में 'ऋतंभरा-प्रज्ञा' कहते हैं, में पहुंचा देना ही काव्यात्मक अमरता है। लेकिन यही तभी सम्भव है जब कवि सुनता सत्य हो और देखता ऋत् हो।

प्रयोजन के संदर्भ में विचार करते हुए हम इस निष्कर्ष पर आ सकते हैं कि कोई मूलभूत प्रयोजन 'ऋत्' है जो विविध—क्षेत्रों में 'सत्य' रूप में विद्यमान है। यह हम जानते ही हैं कि प्रकृति अनाथभाव से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यमान नहीं है। यहां कुछ भी निष्प्रयोजित नहीं है। एक क्रम है, जो संख्यातीत क्रमों का समुच्चय है। कोई क्रम न तो अपना उल्लंघन करता है और न किसी दूसरे क्रम में हस्तक्षेप। हस्तक्षेप का अधिकार केवल प्रकृति को है और वह भी अन्तिम अस्त्र के रूप में। सारे विभिन्न क्रमों का उद्देश्य है कि सबको पूर्ण बनना है। इस पूर्णता की अभिव्यक्ति मनुष्य के माध्यम से ही होनी है, इसलिये यही केंद्रीय प्रयोजन-दृष्टि है। प्रश्न किया जाना चाहिये कि क्या इस पूर्णता की कोई अवधारणा प्रकृति के पास पहले से ही है? नहीं, प्रकृति ने विचार और संकल्प-शक्ति देकर मनुष्य को एक प्रकार की प्रभुता सम्पन्नता दे दी है। प्रकृति यह दोष अपने सिर पर नहीं लेना चाहती कि कल यदि मनुष्य इस अनुष्ठान में असफल हो तो प्रकृति पर दोष आये। मनुष्य में चेतना का स्फुरण करके वह पृष्ठभूमि में चली गयी है और तटस्थ रहकर मनुष्य के देवत्व और दानवत्व की मात्र द्रष्टा है। हां, जिस दिन मनुष्य अपनी सीमा, विचार और संकल्प-शक्ति का उल्लंघन करके सृष्टि और जैविकता के आधारभूत सामरस्य में असन्तुलन उत्पन्न करेगा तब प्रकृति निर्णायक क्रिया के रूप में घटित होकर सारी लीला समेट लेगी।

लेकिन इस मानवीय पूर्णता को कैसे जाना जाये? इस पूर्णता की यात्रा की न तो कोई एक परिभाषा रही है और न ही कोई एक दिशा, और प्रकृति को ऐसी जड़ीय एकता अभीप्सित भी नहीं है। 'नान्य: पन्था' ही प्रकृति को इष्ट है। धर्म सभ्यता और दर्शन ये तीन ऐसे प्रमुख क्षेत्र रहे हैं जिनसे हमारी जिज्ञासा पर कुछ प्रकाश पड़ सकता है परंतु हमारे मूल विषय के परिप्रेक्ष्य में संक्षेप में ही जान लेना काफी होगा। सबसे पहले सभ्यता को लें, जो कि इतिहास बनती है। अधिकांश सभ्यताओं ने मानवीय पूर्णता जिसे भ्रमवश 'प्रगति' समझा गया, के लिए संघर्ष को निर्णायक तत्व माना। इस भ्रामक निर्णय ने आज तक की सारी सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक विषमताओं को उत्तरोत्तर बढ़ाकर ही। चूंकि समाज आधारभूत सत्ता है, इसलिए उसके विकृत हो जाने के कारण धर्म, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान, राजनीति सभी में विकृतियां आयीं। इतिहास प्रमाण है कि हर संघर्ष अपने में से उग्रतर तथा बड़े संघर्ष का ही कारण बनता चला गया। हमने मनुष्य और समाज को पकड़ा ही गलत सिरे पर था। मध्यकाल तक की इन विकृतियों में आधुनिक विज्ञान ने पदार्थ को भी दास बनाने के कार्य में प्रकृति को ही विरोधी सत्ता मान लिया। मनुष्य का यह संघर्ष तत्व, जो कि प्रगति का पर्याय था, इतना विविध आयामी हो गया कि अब कोई भी दो—वह चाहे धर्म हों, सभ्यताएं हों, विचार हों, सिद्धान्त हों या व्यक्ति हों—केवल असहमत ही नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखते बल्कि शत्रुरूप में विरोध में खड़े हैं। पूछा जाना चाहिये, कि क्या सचमुच हम उस मुहाने पर पहुंच गये हैं जब प्रकृति हस्तक्षेप करे ?

इसी प्रकार धर्म के क्षेत्र में भी हुआ। धर्म का आधार व्यक्ति का अपना विवेक होता है, न कि संघबद्ध जड़ीय आस्था। धर्म जब और जहां राज्यसत्ता से जुड़ा है उसमें विकृतियां ही आयी हैं। विचार के क्षेत्र में भी हम देखते हैं कि क्षेत्रीयता, राष्ट्रीयता के स्थान पर जितनी अधिक विश्वमानवता की बात ाज की जा रही है, मनुष्य उतना ही अकेला, असुरक्षित होता जा रहा है। मशीनों और आविष्कारों ने पहले तो उसे चकाचौंध किया पर अब उसे ही पूरी तरह स्थानापन्न कर दिये जाने का खतरा पैदा हो गया है। ऐसी अनेक निष्पत्तियां हैं जो कि हमारे ाज के आधुनिक जीवन में समाजगत तथा व्यक्तिगत स्तर पर मिल जायेंगी। भोग की भावना ने पदार्थ को दास बना डाला है तो सफलता की ललक ने प्रतिद्वंद्विता में सबको खड़ा कर दिया है। धर्म और दर्शन मनुष्य की मुक्ति के आधार पर विकसित हुए थे पर ज्ञान-विज्ञान और राजनीति, मनुष्य तथा प्रकृति पर अधिकार करने के भाव से कार्यरत हैं। बारम्बार यह प्रश्न मन में आता है कि ऐसा क्यों होता जा रहा है। जब भी विचार और व्यवहार के स्तर पर समग्र के स्थान पर केवल एकांगी भाव से सोचा या किया जाता है तब मनुष्य, समाज तथा प्रकारांतर से समस्त जैविकता और सृष्टि बिखरती जाती है। प्रकृति की पदार्थता फल-फूल और फसल के स्थान पर वस्तु रूप ग्रहण कर आयुध और अस्त्र बन कर संपूर्ण को विनष्ट करने का संकट उत्पन्न कर दे तब इससे बड़ा संकट और क्या हो सकता है? सृष्टि का यह संकट वास्तव में काव्य का संकट है। काव्य के बारे में हमें आधारभूत क्रांतदर्शी दृष्टि अपनानी होगी जो कि वह धर्म दृष्टि नहीं दे सकती जो विवेकहीन रूप से संबद्धता को ही परम आस्था मानती है। न वह राजनीति दे सकती है जो राज्यलिप्सा के साथ अंधता से बंधी है, न वह सामाजिक अर्थ व्यवस्था ही दे सकती है जहां जब अपने अनुकूल मनुष्य-उत्पादन की दिशाएं खोजी जा रही हैं और न वह विज्ञान दे सकता है जिसने आविष्कारों के नाम पर पदार्थ का चीर-हरण करके महाभारत के लिए भूमिका तैयार कर दी है। प्रकृति निश्चय ही असंगभाव से प्रगति का यह सारा द्यूत-व्यापार देख रही है, पर कब तक ?

स्पष्ट है कि काव्य, मनुष्य का तो पक्षधर है परंतु आसुरी भावों, कामनाओं और परिणतियों का साथ नहीं दे सकता और यदि देता है तो यह तत्व मात्र का संकट होगा। आज की वास्तविकता में 'सत्य और ऋत्' में जो भेद-दृष्टि काम कर रही है उसे काव्य को दूर करना होगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवनीत के चंदे की दरें :

भारत में : १ वर्ष : २८ रु.; २ वर्ष : ५४ रु.; ३ वर्ष : ८० रु. ।

विदेशों में (समुद्री डाक से) : १ वर्ष : ८० रु.; २ वर्ष : १५० रु.; ३ वर्ष : २२० रु. ।

सीलोन, पाकिस्तान, बांग्लादेश :

१ वर्ष : ४० रु.; २ वर्ष : ७८ रु.; ३ वर्ष : ११५ रु. ।

विदेशों में हवाई डाक से : (पाकिस्तान, श्रीलंका, अफगानिस्तान और वर्मा)

१ वर्ष : १२५ रुपये । **अन्य सभी देशों के लिए २०० रुपये ।**

एक प्रति : २·७५ रुपये ।

– व्यवस्थापक

भले ही इसके लिए उसे कितना ही विरोध क्यों न सहना पड़े। हमें इतना स्पष्ट हो जाना चाहिये कि सत्य, प्रकाश और अमरता का ऋत्-त्रिकोण ही काव्य की पूर्णता का बीज-मन्त्र है। यह महासत्य ऋत्-सृष्टि और प्रकृति के सारे दृश्यमान आंशिक सत्यों से कहीं अधिक मूल्यवान है।

एक ऐसा प्रकाश, जो नील ज्योति का पारावार है, उन्नततम पदार्थ और कालबद्ध चेतना से भी अधिक शुद्ध है तथा एक अमरत्व है जो कुल-गोत्र, परिवार-सन्तान, भवनोंत्सभ्यताओं की अहंकारी श्रेष्ठता के दुराग्रहों से कहीं अधिक परिपूर्ण और शाश्वत है – इस अनाशवान अविनश्वर की अपेक्षा स्वयं काल को भी है। अमृत ,काव्यात्मकता का यह प्रशान्त सागर हमारे व्यक्तित्वों में तथा व्यक्तित्व के बाहर ठाठें मार रहा है, पर हम इसे अनुभव नहीं कर पा रहे हैं। हमें तो मात्र इतना ही करना है कि यदि हम बाहर पदार्थ में चले गये हैं तो अपनी आत्म-चेतना में लौटें और यदि आत्मचेतना में लीन हैं तो उदारतापूर्वक पदार्थ को तथा शेष जैविकता को आश्वस्ति दें। भीतर से बाहर और बाहर से भीतर की ओर की यह तीर्थयात्रा ही यज्ञ है। देश के अर्थ में तीर्थ और काल के सन्दर्भ में यज्ञ–ये दोनों साक्षात् के जिस बिंदु पर सृजनात्मक रूप से प्रज्वलित होते हैं वही है काव्यसाक्षात्कार की मधुमती-भूमिका। बाहर यदि यज्ञ है तो हम समिधा हैं और हम यदि यज्ञ हैं तो बाहर समिधा है। केवल हमें 'उत्तिष्ठ' होना है। काव्य का यह सृजनात्मक-यज्ञ अहोरात्र उत्सवित है। हमें वैदिकी काव्य-दृष्टि से देखने का केवल अभ्यास करना होगा।

–९९, ए, लूकरगंज, इलाहाबाद, उ. प्र

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी खोज : ध्यान के माध्यम से

□ पेराला रत्नम्

उपनिषदों के ऋषियों से लेकर गांधी और टैगोर तक भी प्रबुद्ध हिंदुओं ने यही कहा है कि सत्य के अनेक रंग-रूप हैं, और वे भी सत्य या परमेश्वर के विचित्र आयामों और स्वरूपों को अभिव्यक्त करते हैं।

१९६७ में जब मैं लातिन अमरीका में भारतीय राजदूत था, तब साप्ताहिक पत्रिका 'टाइम' के लातिन अमरीकी संस्करण में मुझे 'द मैसेंजर्स (संदेशवाहक) नामक एक लेख पढ़ने को मिला था। इस लेख में 'बीटल्स' गायक मंडली के एक सदस्य रिंगो ने एक बड़े मार्के की बात कही थी : 'हम चारों के पास वह सब कुछ है, जिसे पैसे से खरीदा जा सकता है। लेकिन जब कोई ऐसी स्थिति में होता है, तो एक अवस्था ऐसी आ जाती है, जब खरीदी हुई हर वस्तु अर्थहीन हो जाती है। फिर आदमी एक ऐसे अनुभव की खोज करने लगता है, जो उसके जीवन की रिक्तता को भर सके। महर्षि योगी महेश ने जब से हमें ऐसा अनुभव दिया है, हमारी ज़िंदगियां एक नयी रोशनी से जगमग हो गयी हैं।'

रिंगो के एक साथी पॉल ने कहा, 'जब से महर्षि के सुझाव पर हमने नशीली दवाओं का सेवन बंद किया, तब से मुझे लगने लगा कि ऐसी दवाओं का सेवन, बिना सरदर्द के ऐस्पीरीन लेने के बराबर है, अर्थात् पूरी तरह से निरर्थक।' तीसरे बीटल जॉन ने कहा, 'यदि महर्षि से हमारी भेंट कुछ समय पूर्व हो गयी होती, तो हमें एल. एस. डी. (एक नशीली दवा) के सेवन की आवश्यकता न पड़ती।'

बीटलों के इन वक्तव्यों का सार यह है कि अपार धन और सांसारिक सुखों के मोह से मुक्त होकर वे स्थायी आनंद की खोज में थे, और यह स्थायी आनंद इन

चित्र : पवनकुमार जैन

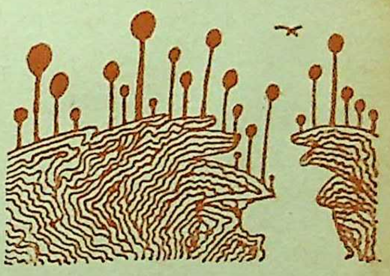

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों–रिंगो, पॉल, जॉन और जॉर्ज–को महर्षि की ऋषिकेश स्थित ध्यान अकादमी में दो महीने बिता कर ही प्राप्त हुआ।

यह मोह भंग सिर्फ़ बीटलों को ही नहीं हुआ। पश्चिम की युवा-पीढ़ी, पूरी की पूरी, इस खोज में लगी दिखायी देती है। सारे के सारे हिप्पी और आख़िर क्या कर रहे हैं? 'रॉलिंग स्टोंस' नामक एक अन्य प्रख्यात मंडली के सदस्य भी अपनी आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति में लगे हैं। एक समाचार के अनुसार, हालीवुड की दो अभिनेत्रियों–शर्ले मैक्लीन और मिया फेरो ने भी ध्यान का प्रशिक्षण महर्षि महेश योगी की अकादमी में प्राप्त किया था।

ध्यान क्या है?

इन सब उदाहरणों से यह तो स्पष्ट है कि आज की युवा पीढ़ी वर्तमान स्थिति से संतुष्ट नहीं है, और उसे यह अहसास होता जा रहा है कि आज का वैज्ञानिक युग, जो सांसारिक सुखों को भोगने और उनके लिए आवश्यक साधन जुटाने में ही विश्वास करता है, आदमी को वह मानसिक संतुलन प्रदान नहीं करता, जो मानसिक शांति के लिए अनिवार्य है। और इस शांति और अव्यवस्था के लिए धर्म की नैतिक निष्फलता भी काफ़ी हद तक जिम्मेवार है।

आइये, इस लेख में उठाये गये विभिन्न मुद्दों पर विचार करें। लेख में 'मेडीटेशन' (ध्यान) शब्द का प्रयोग बार-बार किया गया है। ध्यान की राह पर चलकर ही 'स्व' की खोज पूरी हो सकती है। महर्षि के कथनानुसार, भावातीत ध्यान का प्रति दिन का ढाई घंटों का प्रयोग किसी भी साधक के अन्दर दैवत्व को जगाने में सहायक हो सकता है। वे कहते हैं, 'उस' तक पहुंचने का यह सबसे सीधा, स्वाभाविक और सरल मार्ग है; 'उस' अर्थात्, जो मैं हूं, जो वह है, जो सर्व है।

यह बात थोड़ी गूढ़ लगती है सुनने में। मैं उसे सरल भाषा में समझाने का प्रयास करूंगा।

हिंदुत्व के मूल सिद्धांतों में एक मूल सिद्धांत यह भी है कि मनुष्य की आत्मा के भीतर ही सर्वव्यापी आत्मा विद्यमान है। उपनिषदों ने इसी बात को इन शब्दों में कहा है: 'तत्त्वमसि' (अर्थात् तू वही है)। एक व्यक्ति के रूप में भी तुम वही हो, जो सर्वत्र है, सार्विक है।

उपनिषदों के निम्न कथन भी इसी सत्य की दूसरे शब्दों में घोषणा करते हैं।

(१) जिस प्रकार चंद्रमा विभिन्न जलाशयों में अपनी विभिन्न परछाइयां फेंक कर भी अपनी अखंडता अक्षुण्ण रखता है, उसी प्रकार हमें विभिन्न प्राणियों की आत्माओं में उसी एक परम आत्मा के ही दर्शन होते हैं।

(२) वही एक ब्रह्म सब जीवित प्राणियों में निवास करता है।

उपनिषद कहते हैं कि संतप्त मानव कहता है: 'मुझे अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो। मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलो। अवास्तविकता से वास्तविकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर ले चलो।' इस प्रकार अनंत से एकात्मता की रहस्यपूर्ण प्रक्रिया के दौरान, आदमी को यह गौरवशाली अनुभूति होती है कि उसके अंदर अनंत की चमक-दमक मौजूद है।

क्या इस एकात्मता के ये अर्थ हैं कि आदमी की आत्मा उसकी मृत्यु के बाद, परम आत्मा में लय हो जाती है? हिंदुत्व का कहना है कि ऐसा नहीं होता। क्योंकि यदि ऐसा होने लगे, तो परमात्मा के न्याय और पुण्य संबंधी सिद्धांतों का क्या होगा? इन सिद्धांतों में विश्वास करने के कारण ही हिंदुत्व मृत्यु और जीवन के चक्र में विश्वास करता है। इस सिद्धांत के अनुसार, यदि किसी व्यक्ति का जीवन पापमय रहा है, तो उसे पापरहित जीवन की प्राप्ति और उपलब्धि के लिए बारंबार जन्म लेना होगा। इसी सिद्धांत को 'कर्म का सिद्धांत' कहा जाता है।

हिंदू चिंतकों के अनुसार, कर्म भूत के कर्मों का पक्वन है। कर्म के कारण ही अगले जन्म की देह का निर्धारण होता है। पूर्वजन्म के कर्म से ही वर्तमान जन्म के सुखों, दुखों के अलावा, व्यक्ति के चरित्र का निर्माण भी होता है। दुख पाप के कारण मिलता है, और सुख पुण्य के कारण। कर्मों के भौतिक प्रभाव तो अल्पकालिक होते हैं, लेकिन नैतिक प्रभाव चरित्र का निर्माण करते हैं। ईसाई धर्म ने भी कर्म के सिद्धांत को इस रूप में स्वीकार किया है: 'जो जैसा बोयेगा वैसा काटेगा।'

कर्म का सिद्धांत प्रतिफल या प्रतिशोध का सिद्धांत नहीं है, सातत्य का सिद्धांत है। वह सही कर्म के महत्त्व पर बल देता है, और कहता है कि जहां अतीत पूर्व-कर्मों के परिणामों द्वारा निर्धारित था, वहां यह भी कहता है कि भविष्य वर्तमान कर्मों पर निर्भर करता है।

जीवन-मृत्यु के चक्र से मुक्ति

पुनर्जन्म का सिद्धांत कर्म के सिद्धांत से सीधा जुड़ा है। संसार को हमारे ऋषियों ने जीवन-मृत्यु का ऐसा निरंतर चलायमान चक्र माना है, जिससे मुक्ति पाने के प्रयास के लिए उन्होंने निम्न ६ विधियां निर्धारित की हैं:

(१) न्याय (२) वैशेषिक (३) सांख्य (४) योग (५) मीमांसा और (६) वेदान्त। 'षड्-दर्शन' के ये छहों मत कालान्तर में हिन्दू दर्शन के छह अंगों के रूप में सामने आये।

पीछे, जिस ध्यान-विधि का उल्लेख हुआ है, वह चौथी विधि योग का ही एक अंग है।

योगाभ्यास करने वाले साधक को इन आठ प्रशिक्षण अवस्थाओं में से गुज़रना पड़ता है:

(१) यम: अहिंसा, ब्रह्मचर्य, आदि पंच नियम।

(२) नियम: उपरोक्त पंच नियमों का पालन।

(३) आसन: ध्यान के लिए

(शेषांश पृष्ठ ५९ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एन्थेनी ग्रे की अंग्रेजी कहानी

पतझड़ के पत्ते

पतझड़ के दिन थे। शहर के बीच के उस बाग में हल्की धूप थी। ऊपर आसमान में पंछी मंडरा रहे थे।

बूढ़ा माली बाग में झाड़ू दे रहा था। जैसे ही वह बाग की सफाई करते-करते आगे बढ़ता था वैसे ही सूखे पत्ते नीचे गिरकर तेज हवा में बहते चले आ रहे थे और उनके आसपास लाल-सुनहरी वर्तुल बना रहे थे। जितनी जल्दी वह वृद्ध उन पत्तों को बटोरता जाता था उतनी ही जल्दी दूसरे पत्ते नटखट बच्चों की भांति उसके पीछे बिखर जाते थे। लेकिन वह वृद्ध तो झाड़ू लगाये ही जा रहा था।

उस बाग में वाहनों का या और कोई शोर सुनायी नहीं पड़ रहा था। सुबह दफ्तर और कारखानों में जानेवाले लोग या शाम को बस या ट्रेन पकड़ने लौट रहे लोग उस बाग के वृक्षों के बीच बने रास्ते पर और मनोरम फूलों की क्यारियों के बीच टहलना पसंद करते थे। मौसम अच्छा हो तो दोपहर के वक्त लोग उस बाग में आते थे। अपना काम करते-करते वह बूढ़ा माली उनसे हंस-हंसकर बातें करता था।

उस दिन दोपहर से ही वातावरण धुंधला हो गया था। तब तक वृद्ध पत्तों का टोकरा आखिरी बार बाग के एक कोने में अपनी कुटिया के पीछे डाल आया था। लौटकर उसने बाग के दरवाज़ों पर ताले लगा दिये और अपनी कुटिया में आ गया। कुटिया में वह बूढ़ा माली अकेला ही रहता था।

माली की कुटिया के पास ही झूले लगे थे। दिन में जब वहां बच्चे खेलते थे, तो वृद्ध को उनकी आनंदभरी किलकारियां सुनना अच्छा लगता था।

कुटिया के पीछे सब्जियां उगायी जाती थीं। माली वहां की भी देखभाल करता था। शहर के दूसरे बागों की अपेक्षा इस बाग की क्यारियों में फूल ज़्यादा चटकीले रंगों में खिलते थे। बार-बार बाग को देखने सुपरिंटेंडेंट आता रहता था। वह हमेशा कहा करता था: 'किसी की उंगलियों पर अगर हरा रंग लगता हो तो इस बूढ़े की उंगलियों पर ही!'

जाने कितने सालों से वह वृद्ध उस बाग में काम कर रहा है। वहां आनेवाले कई वृद्धों ने भी अपनी जवानी के दिनों में उसे वहां देखा था। बुढ़ापे के कारण उसका झुर्रियोंवाला ताम्रवर्ण चेहरा अब तो पतझड़ में सिकुड़ गये पत्ते जैसा लग रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। कभी तो लग रहा था कि वह वृक्षों के साथ बातें कर रहा था–विशेषरूप से तो दरवाज़े के पास ही एक वृक्ष के साथ। वह वृक्ष उसे बहुत प्यारा था। और सचमुच ही वह वृक्षों के साथ बातें करता था–हालांकि वे वृक्ष कभी भी उसे जवाब नहीं देते थे। मगर वह तो वृक्षों के साथ बातें किये जाता था। कभी तो ज़मीन पर काम करते-करते आसपास के वृक्षों पर प्यार से हाथ भी ठोंक देता था। उसे वे वृक्ष सशक्त मगर शांत मित्र के समान लग रहे थे। हमेशा ही उन वृक्षों की विविध लीलाएं वह देखता रहता था। तेज़ हवा में वृक्षों की उन्मत्त झूमती डालियों को देखकर वह, अपने उड़ रहे वस्त्रों को संभाल रही किसी नारी की कल्पना करने लग जाता था। हल्की बारिश में वृक्षों को जैसे खुश होकर पत्तों पर टप-टप गिरतीं बूंदों की आवाज़ सुनते देखता था। कुहरे में वे वृक्ष स्याह पड़ जात थे और झुक जाते थे। अंधेरे में वे मानो आराम करते थे और पत्तों की खड़खड़ाहट सुनायी पड़ती थी। और सवेरे बहती हवा के साथ वे वृक्ष दिन का स्वागत करने तैयार हो जाते थे।

हल्की धूप में हंस रहे वृक्षों को वह देखता रह जाता था। शहर का वह बाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चारों ओर फैले कंक्रीट-आस्फाल्ट के विस्तार में एक हरा-हरा द्वीप था, जिसमें घास, धरती और वृक्ष आसानी से सांस ले सकते थे। उस हरे द्वीप में बढ़ रहे वृक्षों को देखते-देखते वह वृद्ध मन ही मन वृक्षों के पत्तों की शहर के लोगों से तुलना कर लेता था।

बाग़ में घूमने आनेवाले लोग केवल वृक्षों को देखते थे, जिनमें बसंत में बहार आती थी और जो पतझड़ में ढेर-ढेर पत्ते गिराते थे मानो शैशव का सौंदर्य और वृद्धावस्था का अंतिम भाग। लेकिन वृद्ध माली तो बसंत के आरंभ से बिलकुल नयी निकल आयीं छोटी-छोटी पत्तियों को भी देखता था और बाद में झटपट बड़े होकर जाने किस रहस्यमय क्रिया से हरे से पीले हुए पत्तों को भी देखता था। जाने कैसे उन पीलों पत्तों से प्राण चले जाते थे और ग्रीष्म के आने के पहले ही वे खड़खड़ आवाज़ से ज़मीन पर गिरते थे। ज़िंदा पत्तों को भी सांय-सांय करती तेज़ हवा में वृक्ष पर से टूटकर उड़ते आते वह देखता था। कभी तो एक पूरी की पूरी मज़बूत डाली वृक्ष से अलग हो जाती थी और शेष वनराजि वैसी ही रह जाती थी। लेकिन बाग में जो यूं ही घूमने चले आते थे वे सब लोग तो उसे एक-जैसे ही लगते थे।

ग्रीष्म के बाद पतझड़ में पत्ते अपने आप ही वृक्ष पर से गिर जाते थे। वृद्ध को लगता था कि कुछ पत्ते ऐसे भी होते थे जो तेज़ हवा और बौछार से जूझते हुए कई दिनों तक वृक्षों पर टिके रहते थे। लेकिन आखिर वे भी झड़कर नीचे गिरे पत्तों की मोटी-सी कालीन पर आ जाते थे। लेकिन कुछ पत्ते जुनून के साथ वृक्ष से चिपके ही रहते थे और स्याह बनी डालियों पर सोये-सोये से नज़र आते थे। लेकिन बर्फ गिरने पर वे भी अनिच्छा से ज़िंदा रहने का मोह छोड़ देते थे।

दूसरे दिन सुबह वृद्ध हमेशा की भांति सूरज निकलने के पहले ही जाग गया। उसने बाग के दरवाज़े खोल दिये और काम में जुट गया। कितने ही दिनों से वह पत्तों के ढेर साफ करता रहा था। लेकिन आज उसे बहुत थकान महसूस हो रही थी। वृद्ध को अचरज हुआ। ज़्यादातर पत्ते तो गिर चुके थे। सड़क के किनारे लगाये ताम्रवर्ण पत्तों के ढेरों पर बच्चे उछल-कूद कर रहे थे और खुशी में किलकारियां मारते हुए पत्तों को हवा में उड़ा रहे थे।

मुख्य दरवाज़े के पास काम करते-करते ओक वृक्ष की ओर वृद्ध का ध्यान गया। उसके उस प्रिय वृक्ष के सारे पत्ते झड़ चुके थे और सड़क की ओर झुकी डाली पर केवल एक पत्ता चिपका रह गया था। एक पल तो वृद्ध उस पत्ते को देखता भर रहा और फिर काम में लग गया।

उस दिन दोपहर को सुपरिंटेंडेंट बाग देखने आया। वह जानता था कि सब ठीक ही था। लेकिन उस वृद्ध के साथ गप्पे हांकना उसे अच्छा लगता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'लगता है इस साल काम ज़्यादा करना पड़ेगा,' पत्तों से भरे रास्तों को देखते हुए सुपरिंटेंडेंट बोला। झाड़ू और फावड़े को परे रखते हुए वृद्ध ने हामी भर दी : 'हां, हर साल से पत्ते कहीं ज़्यादा हैं।'

'अकेले काम हो जायेगा ?' सुपरिंटेंडेंट ने पूछा। हमेशा की अपेक्षा वृद्ध उसे ज़्यादा थका हुआ लग रहा था।

'यह तो मैं नहीं कहता कि बाग से एक-एक पत्ता निकालकर रख दूंगा,' वृद्ध ने आंखें चमकाते हुए कहा। और जब वह हंसने लगा तो उसके चेहरे पर वृद्धत्व की असंख्य रेखाएं अधिक गहरी हो गयीं।

सुपरिंटेंडेंट ने हंसते हुए उसके कंधे पर हाथ रखा—'ठीक है। मैंने सोचा कि अगर मदद की ज़रूरत हो तो...' फिर ढलते सूरज के प्रकाश में धुंधले दीख रहे आकाश और वृक्षों की सूखी डालियों को देखते हुए बोला, 'पतझड़ में मेरा मन हमेशा उदास हो जाता है।'

वृद्ध ने आसपास नज़र फेरते हुए कहा, 'हां। मगर यह न भूलिये कि जब ऐसा लगे कि सब कुछ थम गया है तब भी एक ऋतु का अंत होते ही दूसरी ऋतु का आरंभ हो जाता है। प्रकृति एक पल भी नहीं रुक सकती। अभी इसी क्षण में वह बसंत की बहार से हमें विस्मित कर देने की तैयारी कर रही है।'

सुपरिंटेंडेंट हंसा, 'मेरा खयाल है कि हमेशा की तरह आपकी बात सही ही है... और हां, आपकी उम्र क्या होगी ?'

'अस्सी से ज़्यादा,' वृद्ध ने जवाब दिया। और फिर अपने झुर्रियोंवाले चेहरे की स्मित के साथ झाड़ू देने लगा।

'लेकिन संभलिये,' कहते हुए सुपरिंटेंडेंट तेज़ी से अपनी साइकिल पर चल पड़ा। रास्ते में उसने सोचा कि वृद्ध से जब उसने पहली बार पूछा था तब से वह 'अस्सी से ज़्यादा' यही जवाब सुनता आया था। कमाल है !

इसके बाद कुछ दिनों तक वह वृद्ध बाग में पत्ते उठाता रहा। मुख्य दरवाज़े के पास ओक वृक्ष पर टिके रहे उस एक पत्ते को छोड़कर सभी वृक्षों के सारे पत्ते गिर चुके थे। तेज़ हवा और ज़ोरों की बारिश में भी वह पत्ता डाली से अलग नहीं हुआ था। हर रोज़ वृद्ध कुछ देर तक उस पत्ते को देख लेता था और फिर गिरे हुए पत्तों को इकट्ठा करने लग जाता था।

उसकी कुटिया के पीछे पत्तों का ढेर बहुत बड़ा हो गया था। बहुत थकने पर भी दांत भींचकर वह अपना काम किये जाता था।

दिसंबर की एक दोपहर को पत्तों का आख़िरी टोकरा वह पीछे की ओर डाल आया और झाड़ू और फावड़ा बाजू पर रखकर संतुष्ट भाव से बाग के रास्तों को देखने लगा। थकान लग रही थी मगर काम पूरा हो गया था। पाइप जलाकर वह सोचता हुआ मुख्य दरवाज़े की ओर जाने लगा। बाग़ अभी सुनसान था। और चलते-चलते बाग के शांत सौंदर्य पर वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुग्ध हो गया। वह जाकर ओक-वृक्ष के नीचे खड़ा रह गया और डाली पर चिपक रहे उस पत्ते को देखने लगा। 'अभी तुम डाली पर ही हो, दोस्त!' वह बुदबुदाया। देर तक वह अपलक उसे देखता रहा। फिर उसे लगा कि वह पत्ता भी कुछ झुकने लगा था, या फिर यह केवल उसकी कल्पना थी? थका हुआ वह वृक्ष के नीचे बैंच पर लेट गया और यह सोचकर कि अपना काम पूरा हो गया था, पाइप से कश लेने लगा।

बाग में शांति थी—जैसे वृद्ध को आराम देने के लिए ही हो! उस पत्ते को देखने को उसने थकानभरी नज़र वहां स्थिर कर दी।

अब तो उसे विश्वास हो गया कि वह पत्ता डाली पर कुछ झुक ही गया था। पाइपवाला हाथ धीरे से बाजू पर आ गया। पाइप उसने बैंच पर रख दिया। उसे लगा कि उसकी पलकें कुछ बोझिल हो रही थीं और आंखें झपकने लगी थीं। फिर उसकी आंखें बंद हो गयीं। बाग में शांति थी।

धीरे से ओक वृक्ष से वह पत्ता डाली से अलग होकर स्थिर हवा में चकराता हुआ आख़िर उस वृद्ध के पास ही बैंच पर आ गिरा। गहरे बादामी रंग का वह पत्ता बहुत ही सुंदर था।

हवा की एक लहर उठी और छोटी-सी घास पर बिखरे कुछ पत्ते उड़ते हुए बैंच पर आने लगे। फिर तो बाग में दूसरी ओर से तेज़ हवा चलने लगी और वृद्ध की कुटिया के पीछे लगे ढेर से कितने ही पत्ते उड़-उड़कर बैंच तक आ गये। हवा रुक गयी तब तक तो ओक वृक्ष के नीचे सुनहरे पत्तों का अच्छा खासा ढेर लग गया था और बैंच पर तो बस पत्ते ही पत्ते थे। बाग में फिर शांति छा गयी।

कुछ देर के बाद फिर तेज़ हवा चली। एक झोंका आया और ढेर के ढेर पत्ते हवा में मंड़राने लगे और दूर तक, बाग की बाड़ से भी दूर जाकर बिखर गये। कुछ पत्ते उड़कर कारखानों की चिमनियों में और दफ्तरों तक पहुंच गये। सब दिशाओं में उड़ रहे पत्ते खेतों और दूर समुद्र तक भी जा पहुंचे। केवल उस बाग में ओक वृक्ष के नीचे बैंच पर पत्ते बाकी नहीं रह गये थे। **(अनुवाद : सरला जगमोहन)**

□

जार्ज बर्नार्ड शा का आत्मकथन

मैं अपने पांचों उपन्यास लंदन के सभी प्रकाशकों को भेज चुका था, और कुछ एक अमरीकी प्रकाशकों को भी। किसी ने भी उन्हें छापने के लिए स्वीकार नहीं किया। पचास-साठ अस्वीकृतियों के बाद मेरी हिम्मत जवाब दे गयी थी और प्रशंसा या बुराई के प्रति मैं इतना लापरवाह हो गया था कि उसका मुझे आज तक बहुत फायदा हुआ है, यद्यपि इस लापरवाही की बदौलत कुछ दूसरे कामों में नुकसान भी उठाना पड़ा है।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एस. वी. रॉय का पुरातात्त्विक लेख

अफगानिस्तान : ऋग्वैदिक काल में

०००

ऋग्वेद में जिन नदियों और जनजातियों का उल्लेख है, उनके आधार पर, यह निश्चय से कहा जा सकता है कि उस काल के आर्य जिस भूभाग पर रहते और राज्य करते थे, उसका पश्चिमी विस्तार उस भू-क्षेत्र तक था, जिसको आजकल अफ़गानिस्तान कहा जाता है। प्रख्यात इतिहास-लेखक एस. वी. रॉय का एक शोधपूर्ण लेख, जिसकी अनेक स्थापनाओं का समर्थन हमें भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित 'वैदिक इंडिया' के पृष्ठों में भी मिलता है।

०००

ऋग्वैदिक काल के भारत की कल्पना, ऋग्वेद में वर्णित नदियों और जनजातियों के नामों के आधार पर ही की जा सकती है, कारण उस काल भारतवासियों के मन में किसी भौगोलिक अथवा राजनैतिक सीमा की धारणा नहीं थी। आइये, इस आधार पर यह जानने का प्रयास करें कि जिस प्रदेश में ऋग्वैदिक काल के आर्य रहते थे, उसकी सीमाओं का विस्तार कहां तक था?

ऋग्वैदिक काल की नदियों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– पश्चिमी और पूर्वी, अर्थात् सिंधु नदी के पश्चिम और पूर्व की ओर बहने वाली नदियां। यह याद रखना ज़रूरी है कि दोनों वर्गों की नदियां एक ही देश की थीं।

पश्चिमी वर्ग की नदियों में रसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ऑक्सस), सरयु (होरयु हरि-रुद), कुभा (काबुल), क्रूयू (कुर्रम), सुवस्तु (स्वात), सरस्वती (होराह्वाइति या अर्घणदब–हेलमंद) और गोमती (गोमल) मुख्य हैं। पूर्वी वर्ग में ''जाब की पांच नदियां–सुतुद्रि (सतलज), विपास (व्यास), परुषिणी (रावी), अष्किनी (चेनाब)। और वितास्ता (झेलम) के अतिरिक्त यमुना, जिसका उल्लेख बार-बार हुआ है, आती हैं। एक लंबे अर्से तक यमुना ही ऋग्वैदिक काल के आर्यों के प्रवेश की पूर्वी सीमा मानी जाती रही थी। गंगा से इन आर्यों का परिचय तब हुआ जब सुदास ने यमुना नदी के तट पर राजा भेद पर विजय प्राप्त कर, पहली बार गंगा-यमुना दोआब में प्रवेश किया था। यह युद्ध इतिहास-प्रसिद्ध 'दसराजन्' युद्ध, जिसमें सुदास ने परुषिणी नदी के तट पर, 'सिंधु राज्यसंघ' के प्रश्न को लेकर, दस राजाओं पर विजय प्राप्त की थी, के कुछ समय बाद हुआ था।

पश्चिमी वर्ग की नदियां, जिस प्रदेश में बहती थीं, उसे आजकल अफ़गानिस्तान कहा जाता है। इस प्रदेश के धुर उत्तर में रसा, उत्तर-पश्चिम में सरयु, दक्षिण-पश्चिम में सरस्वती, और दक्षिण में गोमती बहती थी। सिंधु नदी पश्चिमी और पूर्वी वर्गों को विभाजित कर, दोनों प्रदेशों की सीमा-रेखा का कार्य करती थी। प्राचीन अफ़गानिस्तान के अंदर बहने वाली महत्वपूर्ण नदियों के नाम थे–सरस्वती, काबुल, स्वात और कुर्रम।

चूंकि ऋग्वेद में उन्हीं नदियों का ही उल्लेख है, जो ऋग्वेद कालीन आर्यों के देश–आर्यावर्त–की सीमाओं पर, या उसके अंदर बहती थीं, इसलिये, यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि आज का अफ़गानिस्तान प्राचीन आर्यावर्त का ही एक अंग था।

जनजातियां

नदियों के अतिरिक्त, ऋग्वेद में वर्णित जनजातियों के आधार पर भी इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है कि प्राचीन अफ़गानिस्तान प्राचीन भारत का ही एक अंग था।

ऋग्वैदिक काल के आरंभ में, अधिकांश आर्य कंबोज-गांधार (प्राचीन अफ़गानिस्तान) प्रदेश में ही रहते थे। इस काल का प्रख्यात राज-वंश, शृंजय (सोमक) शृंजियाना में ही, जो इस प्रदेश में स्थित था, राज्य करता था। इसी काल के अत्रि-वंश के ऋषि रास क्षेत्र में, और वसिष्ठ-वंश के ऋषि राम-धेनु (कंबोज) क्षेत्र में, इक्ष्वाकु-वंश के ऋषि सरयु क्षेत्र में, तथा भारद्वाज-वंश के ऋषि सरस्वती (अर्वण-दब) क्षेत्र में रहते थे। ऋग्वेद में इस काल के अनेक राजाओं का भी उल्लेख है, जो इन क्षेत्र पर राज्य करते थे। इससे इस तथ्य की और अधिक पुष्टि होती है कि प्राचीन अफ़गानिस्तान ऋग्वैदिक काल के आर्यों की ही अधिकृत भूमि थी और प्राचीन भारत का ही एक अंग था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी संस्कृति, भाषा, धर्म, आचार-व्यवहार सिन्धु के पूर्वी क्षेत्र में रहने वाले आर्यों की संस्कृति भाषा, धर्म, और आचार-व्यवहार से भिन्न नहीं थे।

विख्यात अंग्रेज इतिहासकार विल्सन के अनुसार प्राचीन अफगानिस्तान को सन १००० तक भारत का एक अंग ही माना जाता था। इसके बाद, जिस आक्रमणकारी शाही राजवंश ने, जो ईरान से आया था, प्राचीन अफ़गानिस्तान का नाम 'काफ़िरास्तान' (वह देश, जिसमें अविश्वासी काफ़िर, अर्थात् हिन्दू रहते हैं) रखा था। यह नाम एक मुसलमान शासक का दिया हुआ है, और इस बात को दर्शाता है कि जब उसने इस प्रदेश को जीता था, तब वहां काफ़िर (ग़ैर-मुस्लिम, अर्थात् हिन्दू) ही रहते थे। संभवतः उनका बलात् धर्मान्तरण करके ही उन्हें मुसलमान बनाया गया था और इस प्रकार यह प्रदेश, जो कभी आर्यों का प्रदेश था, आज से प्रायः नौ सौ वर्ष पूर्व, एक मुस्लिम राज्य बना।

'दस राजन् युद्ध' के पश्चात्, आर्य लोग, जो ऋग्वैदिक काल के आरंभ में मुख्यतः प्राचीन अफ़गानिस्तान में ही रहते थे, अधिकाधिक संस्था में पंजाब-सिंध प्रदेश में आकर रहने लगे, कारण यह प्रदेश ज्यादा उपजाऊ और हराभरा था। चूंकि मोहन-जो-दड़ो के पुरातत्त्ववेत्ताओं ने 'दस राजन् युद्ध' का काल १९३१–१५६९ ई. पू. निश्चित किया है, अतः यह निष्कर्ष निकालना अनुचित न होगा कि इस काल में, 'दस राजन् युद्ध' के पश्चात् भारी संख्या में आर्य लोग प्राचीन अफ़गानिस्तान से आकर, पंजाब-सिंध, प्रदेश में रहने लगे थे, और प्राचीन अफ़गानिस्तान में जो लोग रह गये थे, वे विदेशी हमलावरों से अपनी रक्षा करने में असमर्थ थे। यह प्रवृत्ति हमें मध्य वैदिक काल–२०३१–१९३१/१६५९–१५५९ ई. पू. के वर्षों में अधिक दिखायी देती है।

उत्तर वैदिक काल

उत्तर वैदिक काल (१९३१–१४२४/१५५९–१०८८ ई. पू) का लगभग पांच सौ वर्षों का काल वह काल था, जिसमें आर्य लोगों ने उत्तर भारत के अधिकांश क्षेत्रों पर–कुरुक्षेत्र से विदेह तक–अपना अधिकार कर लिया था। इन पांच सौ वर्षों की अवधि में जिन तीस राजाओं ने राज्य किया, परीक्षित उनमें अंतिम थे। इस काल में, आर्य बढ़ते-बढ़ते बिहार और बंगाल के दलदलों क्षेत्रों तक पहुंच गये थे।

इस काल में आर्यों की दृष्टि में पंजाब की नदियों का महत्त्व और अधिक बढ़ा, तथा अफ़गानिस्तान की नदियां पृष्ठभूमि में जानी आरंभ हो गयीं। वहां आर्यों का प्रभुत्व भी कम होने लगा। इसकी परिणति हुई, महाभारत के युद्ध के समय में जो १४२४–१०८८ ई. पू. में लड़ा गया था, और जिसमें कौरवों की हार हुई थी। पराजित कौरवों के वंशजों को सिंधु नदी के पार तक्षशिला प्रदेश में रहने को बाध्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया। धीरे-धीरे, तक्षशिला प्रदेश में रहने वाले आर्य, जो उत्तर भारत के आर्यों से पराजित होकर वहां गये थे, भारत में रहने वाले आर्यों की मुख्य धारा से अलग होते गये, और इन्हीं लोगों के कारण, प्राचीन भारत और प्राचीन अफ़गानिस्तान के साथ संबंध-विच्छेद हो गया।

(भारतीय विद्या भवन द्वारा, प्रकाशित, पुसालकर, कृत 'वैदिक इंडिया' के तेरहवें अध्याय में २४१ से २६३ पृष्ठों में 'दस राजन्—युद्ध-काल' से लेकर महाभारत-काल तक की घटनाओं का जो वर्णन किया है, उससे भी इन घटनाओं की पुष्टि होती है।)

ऋग्वेद में जिन पांच मुख्य जनजातियों का उल्लेख है, वे हैं—पुरु, द्रुह, तूर्वस, अनु और यादव। इन पांचों जनजातियों में

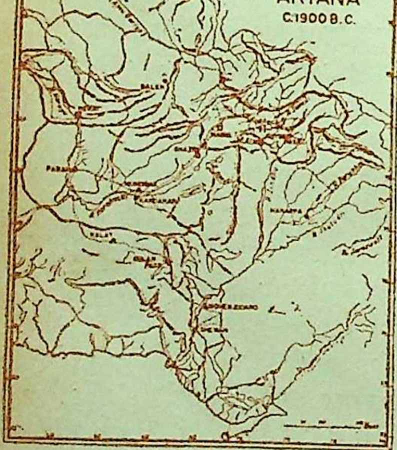

द्रुह का संबंध वेदों, जातक और पुराणों के अनुसार, प्राचीन अफ़गानिस्तान के गांधार क्षेत्र से था। यादव लोग सौराष्ट्र-द्वारका क्षेत्र में, जो पहले प्राचीन मोहन-जो-दड़ो के क्षेत्र में आता था, रहते थे। चूंकि प्राचीन मोहन-जो-दड़ो प्राचीन अफ़-गानिस्तान का ही एक अंग था, इसलिये यह भी माना जा सकता है कि यादव के लोग भी मूलत: प्राचीन अफ़गान के निवासी ही थे।

मध्य वैदिक काल में आर्यों के दिवोदास, सुदास, च्यवन आदि आर्य राजाओं ने शंबर, वर्षिख आदि शत्रुओं का नाश कर, आर्य-जाति का झंडा शत्रुओं के क्षेत्र में फहराया था। श्रंजयों ने तुर्वासों को, जो ईरान के राष्ट्रीय ग्रंथ 'शाहनामा' के अनुसार, ईरान के राष्ट्रीय शत्रु थे, पराजित किया था। शृंजयों के कारण ही, हेलमंद की घाटी वाले क्षेत्र को आज भी 'शृंजियाना' कहा जाता है। ऋग्वेद के मध्य वैदिक काल में आर्य राजाओं द्वारा एक के बाद एक नगर जीतने के शौर्य पूर्ण कारनामों का ही वर्णन है। एक बात आज का इतिहास-लेखक निश्चित रूप से जानता है कि हड़प्पा (हरियूपिया) को राजा च्यवन ने जीता था। इन राजाओं के पुरोहित, जो भारद्वाज-वंश के थे, समीपस्थ सरस्वती (होराहवती) क्षेत्र में रहते थे।

ईरान और सुमेर तक

इस बात के निश्चित संकेत उपलब्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं कि राजा दिवोदास ने ईरान और सुमेर तक आर्यों की विजय-पताका फहरायी थी। ईरान के तरुण राजा सुश्रव (हुक्षव) के, जिसने ईरान के शत्रु अफ्राशियाब को हराया था, साथ अच्छी मित्रता थी। सुमेर के इतिहास से पता चलता है कि १९७० ई. पू में राजा दिवोदास का सुमेर-स्थित वायसराय इन्द्रुत नामक वीर था। मध्य वैदिक काल का शृंजय राज-वंश शृंजियाना-हेलमंद का, जो प्रारंभिक ऋग्वैदिक काल के अफ़गानिस्तान का एक भाग था, रहने वाला था।

प्रारंभिक ऋग्वैदिक काल में, इक्ष्वाकु-वंश के लोग सरयु (होरायु) क्षेत्र में, जो प्राचीन अफ़गानिस्तान का एक भाग था, रहते थे। उसी काल में उन्होंने मोहन-जो-दड़ो को अपने अधिकार में किया था। वसिष्ठ-वंश के उनके पुरोहित समीपस्थ कंबोज क्षेत्र के कामधेनु नामक स्थान में रहते थे।

प्राचीन अफ़गानिस्तान में रहने वाले गंधर्व जाति के लोग गांधार (कंधार) क्षेत्र में रहते थे। इस क्षेत्र में पुरातत्त्ववेत्ताओं ने जो उत्खनन कार्य किया है, उससे पता चलता है कि ईसा से ३००० वर्ष पूर्व, यहां एक उन्नत सभ्यता थी, जिसके ध्वंसावशेष आज भी मिलते रहते हैं।

'दस राजन् युद्ध' में शत्रु-पक्ष की जिन जनजातियों का ऋग्वेद में उल्लेख है, उनके नाम हैं– पख्ता, अलिना, भालन, विषाणिन, शिबी और वैकर्ण। पख्ता जनजाति के लोग ही आगे चलकर पख्तून जाति के लोग कहलाये। अलिना जाति के लोग अफ़गानिस्तान छोड़कर ग्रीस चले गये, जहां वे 'हैलेनीज' के नाम से प्रसिद्ध हुए। इतिहास-लेखकों के अनुसार, भालन जनजाति के लोग वे लोग हैं, जो आज भी बोलन दर्रे के निकट के क्षेत्र में रहते हैं। शिबी लोग आज की सौविरा जनजाति के, तथा वैकर्ण आज की वैहरकना जनजाति के लोग हैं।

अलवर-भरतपुर में आज भी मत्स्य जनजाति के लोग रहते हैं। महाभारत के अनुसार, इस नाम की एक जनजाति महाभारत-काल में प्राचीन अफ़गानिस्तान में रहती थी, और उसके लोगों ने महाभारत-युद्ध में भाग लिया था।

हड़प्पा अर्थात् हरि-यूपिया

'दस राजन् युद्ध' के पश्चात्, यमुना के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

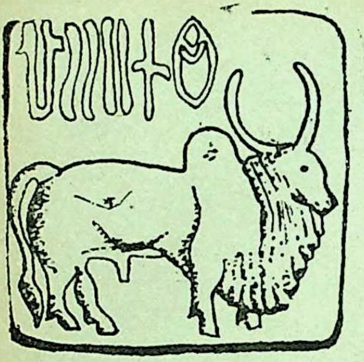

तट पर राजा सुदास ने अज, शिग्रु और यक्षुस जनजातियों के राजा भेद को पराजित किया था। यक्षुस जनजाति के लोग संभवत: हड़प्पा की ह्विसस जनजाति के ही लोग थे, जिन्होंने एक बार मिस्र पर भी आक्रमण किया था।

पुरातत्त्ववेत्ता अल्तेकर के अनुसार जिन परिण्यों का उल्लेख अनेक ग्रंथों में बार-बार आया है, वे मोहन-जोदड़ो के धनी व्यापारी ही थे, और सिंधु नदी के मुहाने पर रहते रहते थे। राक्षस जनजाति के लोग भी मोहन-जो-दड़ो की अतिभारी अल्पसंख्यक जनजाति के थे। सिंधु घाटी के विद्वान लोग ब्राह्मण कहलाते थे, और मोहन-जो-दड़ो के मुख्य देवता ब्रह्मा की पूजा करते थे।

हड़प्पा में एक और अल्पसंख्यक जनजाति थी—दनु या दानव। हड़प्पा के मुख्य देवता थे—हरि, जिनके नाम पर 'हरि-यूपिया' (हड़प्पा का मूल नाम) नाम रखा गया था। हड़प्पा के निवासी शुक्र नामक असुर विद्वान से आवश्यक निर्देश प्राप्त करते थे, और उनके दो प्रतीक थे चक्र और शृंगक।

सिंधु घाटी की एक प्राचीन जनजाति थी, अथर्वन्, जो सिंध-बलूचिस्तान में रहते थे। अथर्व ब्रह्मा का पुत्र था, और उसी के नाम पर अथर्ववेद की, जो सिंधु घाटी का अपना वेद था, रचना हुई थी। उसी के अनुयायियों ने अपने को अथर्वन् कहना आरंभ कर दिया होगा।

('आर्गनाइज़र' से साभार)

□

ईश्वर में विश्वास

प्रसिद्ध खगोल-विज्ञानी, हेनरी नोरिस रसेल ने एक बार आकाशगंगा के बारे में भाषण दिया। भाषण के बाद श्रोताओं में से एक स्त्री ने उठकर पूछा, 'अगर हमारा संसार इतना छोटा और ब्रह्मांड इतना बड़ा है, तो क्या हम मानें कि ईश्वर हमारी ओर ध्यान देता होगा?'

रसेल ने कहा, 'यह इस बात पर निर्भर है कि आप कितने बड़े ईश्वर में विश्वास रखती हैं।'

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृष्ठ ४७ का शेषांश)

आवश्यक विभिन्न आसन, जिनमें पद्मासन विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है।

(४) प्राणायाम : श्वास को स्वास्थ्य के लिए हितकारी ढंग से नियंत्रित करने की विधि।

(५) प्रत्याहार : जिसके द्वारा ज्ञानेंद्रियों को उनके अवबोधनों पर ध्यान न देने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है।

(६) धारणा : जिसके द्वारा सारा ध्यान किसी एक वस्तु जैसे नासिकाग्र पर केंद्रित किया जाता है।

(७) ध्यान : जिसके द्वारा मन को उस वस्तु से, जिस पर ध्यान केंद्रित किया गया है, भर दिया जाता है।

(८) समाधि : ध्यान की गहन अवस्था, जिसमें साधक का सारा व्यक्तित्व निश्चल और शांत हो जाता है।

महर्षि के पास बीटल उस अवस्था तक पहुंचने का रहस्य जानने गये थे, जिसमें योगी, बिना अपने मन और तन को कोई क्षति पहुंचाये, लंबे काल तक अपनी श्वास को नियंत्रण में रख सकता है। ऐसी अवस्था में उस पर न गर्मी का प्रभाव होता है, न सर्दी का, न भूख का, न प्यास का।

जब कोई साधक अपने गुरु के पास साधना-पथ पर अग्रसर होने के लिए आवश्यक निर्देश लेने के लिए आता है, तो गुरु सर्वप्रथम उससे उसके इष्टदेवता का नाम पूछता है। यदि साधक, उदाहरणार्थ, ईसाई हुआ, तो गुरु उसे वास्तविक ईसा

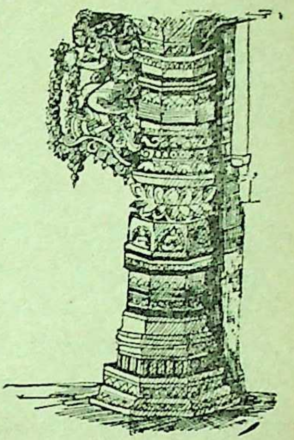

अर्थात् परमेश्वर के बारे में बताता है। हिंदुओं के प्रत्येक देवता भी परमेश्वर के ही विभिन्न रूप हैं।

हिंदू अपनी धार्मिक सहिष्णुता के लिए विख्यात हैं। वे दूसरों के दृष्टिकोण को अपने दृष्टिकोण के समान ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं। उनकी मान्यता है कि विभिन्न धर्म विभिन्न पथ ही हैं; वे सब एक ही लक्ष्य–परमेश्वर तक पहुंचाते हैं।

निराकार परमेश्वर के भक्तों को हिंदुओं ने सर्वोपरि माना है। उनके बाद आते हैं राम, कृष्ण, बुद्ध आदि अवतारों की आराधना करने वाले भक्त। उनके बाद आते हैं, अपने पूर्वजों, देवी-देवताओं और ऋषि-मुनियों की पूजा करने वाले भक्त, और अंत में आते हैं भूत-प्रेतों आदि में श्रद्धा रखने वाले।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'उन्होंने कुछ किया नहीं, फिर भी मेरे भीतर कुछ हो गया !'

□ पॉल ब्रंटन

पूरब आने पर ही पाश्चात्य लेखक पॉल ब्रंटन को सत्संग और उसके सौरभ के बारे में कुछ पता चला। इस आयाम से वे अपरिचित ही थे। पर, जब रमण महर्षि के सत्संग में आये, तो उन्हें लगा, जैसे अंधेरे में उनके हाथ में मशाल आ गयी, और एक रोशनी चारों तरफ फैल गयी है। रास्ता दिखायी दिया, और मंज़िल भी नज़र आयी। जो हो सकते थे, उसका सपना जगा; जो नहीं हो पा रहे थे, उसकी पीड़ा पैदा हुई।

'उन्होंने कुछ भी नहीं किया था, फिर भी मेरे भीतर कुछ हो गया' पॉल ब्रंटन ने अत्यंत भावप्रवण होकर लिखा है, 'वे ज्यादातर मौन ही थे, लेकिन उनके मौन में एक ऐसी मुखरता खिल रही थी, जिसने मेरे सब प्रश्नों और संदेहों के उत्तर स्वयमेव दे दिये थे।'

'अरुणाचल ! अरुण वर्ण का पवित्र शिखर।' मेरे साथी ने मुझे उस पर्वत की ओर देखते हुए कहा, जिसकी बाह्य रेखाएं मुझे स्टेशन से ही दिखायी देनी शुरू हो गयी थीं। 'पवित्र दीपस्तंभ वाला पर्वत भी कहा जाता है इसे।'

'यह नाम इस पर्वत को क्यों दिया गया ?' मैं पूछे बिना नहीं रह पाया।

'वर्ष में एक बार मंदिर के पुजारी इस पर्वत पर उत्सव मनाते हैं। इस अवसर पर एक विशाल यज्ञ भी होता है, जिसमें घी और कपूर की आहुति दी जाती है। इस यज्ञ में प्रज्वलित अग्नि कई दिनों तक जलती है। भक्तों का ऐसा विश्वास है कि इस पर्वत पर किसी देवता का आवास है। कुछ भक्त तो यह भी मानते हैं कि यह विश्व का आध्यात्मिक केन्द्र है।'

मैं मुस्करा कर रह गया। कितने भोले होते हैं भक्त लोग !

नारियल और आम के बागों को पार करते हुए, हम दोनों महर्षि रमण के आश्रम की ओर बढते जा रहे थे।

जैसे ही हम आश्रम के द्वार पर पहुंचे, महर्षि के भक्तों ने बड़े प्रेम से मेरा स्वागत किया और सूचित किया कि मैं सीधा उस हॉल में जा सकता हूं, जहां महर्षि दिन में बैठते हैं।

हॉल में महर्षि के अलावा, करीब २०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्त और बैठे थे, लेकिन इसके बावजूद वहां पूर्ण निस्तब्धता छायी थी। कोपीन के अलावा, उनके शरीर पर कोई और वस्त्र नहीं था। मैंने उनकी शांत आंखों में झांक कर उनकी थाह लेनी चाही, क्योंकि मेरा विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति की आंखें उसके अंतर के विचारों की गवाह होती हैं। लेकिन, महर्षि की आंखों के सामने मैं झिझक रहा था, चकित था और विस्मयाभिभूत था।

ooo

एक क्षण को मेरे मन में यह विचार कौंधा कि कहीं यह आदमी मौन और स्थिर रहकर 'पोज़ 'तो नहीं कर रहा है ? किन्तु उनकी ध्यानावस्थित मुद्रा देखकर, यह विचार अपने आप ही लुप्त हो गया। बड़ी सम्मोहक थी यह मुद्रा, जो मुझे ऐसे आकर्षित कर रही थी, जैसे चुंबक लोहे को खींचता है।

धीरे-धीरे एक चमत्कार होना आरंभ हुआ। मेरे सामने बैठे रमण महर्षि न कुछ कर रहे थे, न कुछ कह रहे थे, यहां तक कि मेरी ओर देख भी नहीं रहे थे, फिर भी मेरे भीतर कुछ होना शुरू हो गया था। मैं नि:शब्द, अथाह मौन में डूबा जा रहा था। महर्षि अभी तक मौन थे, लेकिन उनके मौन में एक ऐसी मुखरता खिली थी, जिसने मेरे सब प्रश्नों और संदेहों के उत्तर स्वयमेव दे दिये थे, और अब न मेरे मन में कोई प्रश्न शेष था, न कोई संदेह।

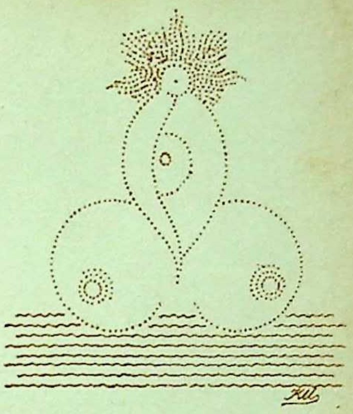

अब वे सारे प्रश्न, जो मैं प्राय: अपने से अक्सर पूछता रहता था, और जो सदा मुझे घेरे रहते थे, मुझे अत्यन्त व्यर्थ और सारहीन लग रहे थे। बीते वर्षों का दृश्य-पटल कितना सामान्य हो गया था। जैसे बिजली कौंधने पर मार्ग स्पष्ट दिखायी पड़ने लगता है, उसी प्रकार मुझे एक क्षण में यह बोध हो गया कि बुद्धि द्वारा संचालित हमारा मन पहले तो अपने लिए समस्याओं का निर्माण करता है, और फिर उन काल्पनिक समस्याओं को हल करने की पीड़ा पैदा कर लेता है। मेरे जैसे बुद्धिवादी के लिए यह एक नूतन तथा अप्रत्याशित बोध था।

प्राय: दो घंटे तक मैंने अपने आप को पूर्ण विश्रांति के सागर में तैरने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया। समस्याओं की जिन बेड़ियों से मैं अभी तक बंधा था, वे जैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने आप टूटती और खुलती जा रही थीं। काल के बीतने की कोई अनुभूति मुझे नहीं हो रही थी।

तभी किसी ने मेरे कान में फुसफुसा कर कहा, 'आप महर्षि से कुछ प्रश्न करना चाहते थे न !'

किन्तु, मेरे शांत मन में कोई प्रश्न शेष था ही नहीं। मैंने कहा, 'मुझे कोई प्रश्न नहीं पूछना है। बाद में कभी . . .'

०००

दोपहर के भोजन के बाद, हम सब फिर हॉल में जमा हुए। महर्षि धीरे-धीरे एक कागज पर कुछ लिख रहे थे। मैंने बड़ा साहस करके उनसे विनम्रतापूर्वक कहा, 'गुरुदेव ! मैंने पश्चिम के धर्म और दर्शन का गंभीर अध्ययन किया है और वहां के धार्मिक व्यक्तियों से भी मिल चुका हूं, लेकिन मेरे मन में छाया अंधेरा अभी तक दूर नहीं हुआ है। अब मैं पूरब की शरण में आया हूं। मुझे प्रकाश चाहिये। मरणोत्तर जीवन है या नहीं यह मैं कैसे जान सकता हूं ?'

वे चुप बैठे रहे। मैंने अपनी बात दोहरायी। वे फिर भी चुप रहे। वे मेरी बात पर गौर कर रहे थे। अंत में, उन्होंने मुझसे सीधे अंग्रेजी में पूछा–

'तुमने अभी-अभी कहा–'मैं'। यह 'मैं' कौन है, क्या तुम उसे जानते हो ?' मेरे आश्चर्य का ठिकाना न था। मैंने कहा, 'इस 'मैं' को आजीवन जानता आया हूं।'

'मगर जिस 'मैं' की बात तुम कर रहे हो, वह तो तुम्हारा शरीर मात्र है। मैं फिर पूछता हूं–'तुम कौन हो ?' अपने को जान लो, तो तुम सत्य को जान लोगे, सब कुछ जान लोगे।'

'अपने को जानने के लिए मुझे क्या करना होगा, गुरुदेव ?'

'गहरे ध्यान के सहारे तुम्हें आंतरिक प्रकाश मिल जायेगा, और उस प्रकाश में तुम देख सकोगे कि वास्तव में तुम जिसे 'मैं' कहते हो, वह कौन है ?'

'मैंने अक्सर ध्यान का सहारा लिया है, लेकिन मुझे कोई प्रकाश नहीं दिखायी दिया। अंधेरा ही अंधेरा दिखायी देता है। प्रगति भी अवरुद्ध है।'

'ध्यान से प्रगति अवश्य होती है। अज्ञान का अंधेरा भी धीरे-धीरे छंटता है। आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रगति का अनुमान करना अत्यन्त कठिन है।'

'मुझे प्रकाश कब मिलेगा, गुरुदेव ?'

'पावडर में आग लगते ही विस्फोट हो जाता है। क्षण की भी देर नहीं होती। जब विस्फोट का क्षण आ जायेगा, अंधेरा फ़ौरन छंट जायेगा।'

मैं विषयांतर करके पूछता हूं, 'विश्व के भविष्य के बारे में आप क्या सोचते हैं ? बड़े संकट में फंसी है दुनिया।'

'तुम अभी अपने बारे में ही नहीं जानते, फिर दुनिया के भविष्य को जानकर क्या करोगे ? वर्तमान को जान लो; भविष्य अपनी चिंता स्वयं कर लेगा।'

'क्या दुनिया में कभी शांति स्थापित हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकेगी, या वह सदा लड़ाई-झगड़ों में ही लिप्त रहेगी ?' मैं उनकी झिड़की को नज़रअंदाज करके पूछता हूं।

'जिसने इस दुनिया को बनाया है, वही उसके भविष्य के लिए जिम्मेदार भी है। तुम उसकी चिंता अपने सर पर क्यों ओढ़ते हो ?'

'लेकिन दुखी और अशांत दुनिया को देखकर तो नहीं लगता कि उसे बनाने वाला कृपालु और सहानुभूतिशील है ?' मैं पूछे चले ही जाता हूं।

'दुनिया वैसी ही है, जैसे तुम हो ! अपने को जाने बिना, दुनिया को जानने का प्रयास करना व्यर्थ है,' महर्षि ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

०००

महर्षि के साथ मेरी भेंट पहले से भी अधिक अविस्मरणीय रही। इस बार मैं यह उत्कट इच्छा लेकर आया था कि वे मुझे शिष्य के रूप में स्वीकार कर लेंगे। लेकिन जब मैंने उनके सामने अपनी यह इच्छा व्यक्त की, तो वे मुस्कराकर कहने लगे, 'जो अपने को जान चुका है, उसके लिए न कोई शिष्य है, न कोई गुरु है। गुरु की खोज तुम्हें अपने अंदर करनी होगी।'

अब तक एक बात अच्छी तरह मेरी समझ में आ गयी थी, और वह यह कि अपने उत्तरों द्वारा महर्षि मुझे ही 'स्व' की खोज में प्रवृत्त करना चाहते हैं; और उनके सारे उत्तर संकेत हैं मुझे उस खोज की राह दिखाने को।

और, यह बात भी मैं इतने दिनों तक उनके साथ रहने पर भली भांति समझ गया था कि उनके सत्संग में मुझे एक अपूर्व शांति अनुभव होती है, और उस शांति में डुबकी लगाने के बाद मुझमें वास्तव में कोई प्रश्न नहीं उठते; यूं मैं प्रश्न के लिए उनसे प्रश्न पूछ लूं, वह बात अलग है।

एक दिन मैं निराशा के मूड में था। इसी मूड में मैं उनसे पूछ बैठा, 'महर्षि, इस कठिन साधना-पथ पर चलते मुझे डर लगता है। बार-बार ऐसा लगता है कि मैं अपने लक्ष्य को कभी प्राप्त नहीं कर सकूगा।'

'अपने को कमज़ोर समझना, यही आदमी की सबसे बड़ी भूल है,' महर्षि ने अपनी सदय वाणी में उत्तर दिया। 'हम सब उसी सर्वशक्तिमान सत्ता के ही अंश हैं। हम दुर्बल नहीं हैं, हमारे विचार, हमारा मन दुर्बल है।'

उनके इस कथन को सुनकर मुझे ऐसा लगा, जैसे किसी ने मुझे जीवन-दान दे दिया हो। एक नयी स्फूर्ति, शक्ति अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंदर अनुभव की मैंने ।

०००

जब मैं महर्षि के जीवन के बारे में जानकारी प्राप्त कर रहा था, तो मुझे यह जानकर अधिक आश्चर्य नहीं हुआ कि उन्होंने अरुणाचल की एक गुफ़ा में बैठकर ध्यान किया था। सब संत पुरुषों ने ध्यानावस्था में उतरने के लिए गुफ़ाओं का ही सहारा लिया है। मुहम्मद को ध्यान करते समय ही इल्हाम हुआ था। पारसी धर्म के जन्मदाता महात्मा जरथुस्त्र ने भी एक गुफ़ा में ही ध्यान बैठकर किया था।

महर्षि के जीवन की एक अन्य घटना ने भी मुझे काफ़ी चमत्कृत किया। १९०५ में उस क्षेत्र में प्लेग फैला था। उसके कारण लोग शहर और गांव छोड़कर भाग गये, और शेर-चीते जैसे हिंसक पशु निर्द्वंद्व पर्वत पर घूमने लगे। ये पशु महर्षि के आश्रम के आसपास घूमते रहते थे, किन्तु उन्होंने न कभी महर्षि को तंग किया, न उनके शिष्यों को ही।

जब महर्षि गुफ़ा में बैठकर ध्यान करते थे, तब एक बड़ा सिंह आकर रोज़ उनके हाथ चाट-चूम कर जाता था। वह रात भर गुफ़ा के बाहर बैठकर उनकी रक्षा भी करता था। और सुबह होते ही चला जाता था।

०००

रमण महर्षि के मार्ग-दर्शन के बाद से मेरा साधना-पथ बड़ा सरल और स्पष्ट हो गया है।

मैं एकांत में रोज़ अपने से पूछता हूं : 'मैं कौन हूं ?'

'क्या मैं हड्डियों, मांस का यह शरीर हूं ?' नहीं।

'क्या मैं वह मन हूं, जो मुझे अन्य लोगों से पृथक करता है ?' नहीं। 'तो फिर मैं कौन हूँ ?'

यह खोज जारी रहती है।

अपना ध्यान अपने भीतर केंद्रित करके, मैं महर्षि के इस कथन को याद करता रहता हूं। 'स्व केंद्रित होकर, लगातार यही मनन करते रहो कि तुम कौन हो ? एक दिन, एक क्षण ऐसा आयेगा, जब तुम्हारा विचार-चक्र अचानक धीमा पड़ जायेगा, और अंतर्ज्ञान की सुगंध तुम्हारे अंतरमन में फैल जायेगी, और लगेगा कि तुम लक्ष्य के समीप खड़े हो, इतने समीप कि तुम और तुम्हारा लक्ष्य एक ही हो गया है।'

('ए सर्च इन सीक्रेट इंडिया' से साभार)

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

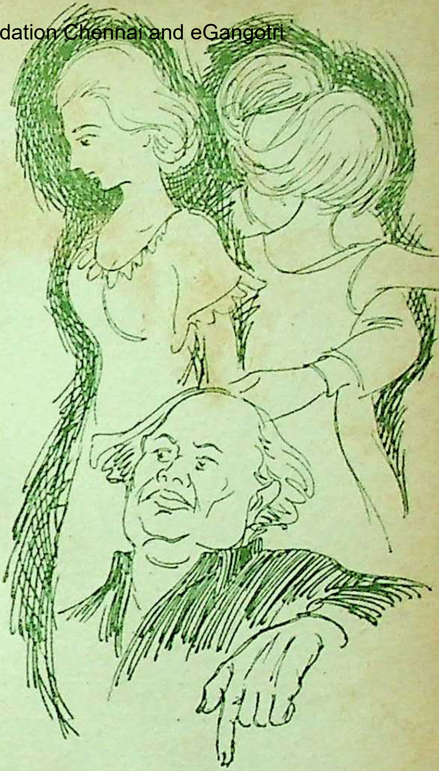

उन तीन मृत व्यक्तियों की आत्माएं ईश्वर के सामने न्याय की प्रतीक्षा में खड़ी थीं। ईश्वर ने कुछ समय तक उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। सच पूछा जाये, तो वह किसी हद तक खीझा हुआ था।

कुछ ही समय पहले एक विश्व-प्रसिद्ध बूढ़े दार्शनिक की आत्मा को उसके सामने न्याय के लिए लाया गया था, तो उसने आते ही कहा था, 'मेरा तुममें कोई विश्वास नहीं है।' इस बात का ईश्वर पर शायद कोई असर न होता, बल्कि वह जवाब में मुस्करा देता; लेकिन दार्शनिक ने उन दिनों पृथ्वी पर होने वाले युद्ध और कत्लेआम का ज़िक्र करते हुए ईश्वर से पूछा था, 'यह कैसे कह सकते हो कि तुम सर्वशक्तिमान और सर्वकृपालु हो? बेशक शैतान के अस्तित्व से इन्कार नहीं किया जा सकता, लेकिन अगर तुम

सामरसेट मॉम की अंग्रेजी कहानी

□

ईश्वर का न्याय

उसे कुकर्म करने से रोक नहीं सकते, तो तुम सर्वशक्तिमान नहीं हो; और अगर रोक सकते हो और रोकते नहीं हो, तो तुम सर्वकृपालु नहीं हो।'

यह तर्क ईश्वर के लिए नया नहीं था, पर उसने हमेशा इस बात पर विचार करने से इन्कार किया था, क्योंकि सर्वज्ञानी होने पर भी उसके पास इस प्रश्न का उत्तर नहीं था। दार्शनिक के कथनानुसार वह ईश्वर होने पर भी दो और दो का

रूपांतरकार : सुखबीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योग पांच नहीं बना सकता था।

'हां, ऐसे ईश्वर में मेरा कोई विश्वास नहीं है,' दार्शनिक ने अन्त में कहा था, 'जो सर्वशक्तिमान और सर्वकृपालु नही है।'

ईश्वर कुछ नहीं बोला था।

आखिर उसने उन तीन आत्माओं की ओर देखा, जो किसी आशा में बड़े विनीत भाव से उसके सामने खड़ी थीं।

उनमें से एक आत्मा जॉन की थी, दूसरी मेरी की, और तीसरी रूथ की। उन्होंने अपनी-अपनी कहानी सुनायी।

जॉन और मेरी पांच सालों से विवाहित थे और सुखद दाम्पत्य जीवन बिता रहे थे। उन्हें एक-दूसरे से प्यार था। तब जॉन की मुलाकात रूथ से हुई, जो अठारह वर्ष की अतीव सुन्दर, लावण्यमयी युवती थी। जॉन उसे देखते ही उस पर मोहित हो गया। रूथ के मन में भी उसके लिए प्यार जागने से न रहा। उन दोनों का वह प्यार साधारण प्यार नहीं था। वह सुधबुध भुला देने वाला प्यार था। पर कुछ ही समय के पश्चात् वे दोनों संभले और उन्होंने समाज और उसकी मान्यताओं के बारे में सोचा। जॉन को लगा कि वह एक मासूम लड़की को धोखा कैसे दे सकता है। और रूथ ने सोचा कि एक विवाहित पुरुष के साथ वह सम्बन्ध क्यों बनाये। तब उन्हें यह अहसास भी हुआ कि मेरी को उनके प्यार के बारे में पता लग गया है।

हां, मेरी को उनके बारे में पता लग गया था। तब अपने पति के प्रति उसका विश्वास और प्यार अडौल न रह सका, और उसके मन में ईर्ष्या पैदा हुई, जिसकी उसने कभी आशा नहीं की थी, और डर पैदा हुआ कि पति कहीं उसे छोड़ न दे, और गुस्सा पैदा हुआ, क्योंकि उसके दिल की दौलत लूटी जा रही थी, और एक अजीब-सी भूख पैदा हुई, जो प्यार से कहीं ज्यादा पीड़ा देने वाली थी। उसे लगा कि पति ने अगर उसे छोड़ दिया, तो वह मर जायेगी। फिर भी, वह यह जानती थी कि अगर जॉन ने रूथ से प्यार किया है, तो इसलिये नहीं कि उसने प्यार करना चाहा है, बल्कि इसलिये कि उसे प्यार हो गया है। सो, उसकी नज़र में जॉन का दोष नहीं था। उसने शक्ति पाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना की और अकेले में चुपचाप आंसू बहाये। उसका स्वास्थ्य जवाब देने लगा।

जॉन और रूथ यह सब देख रहे थे। उनके अन्दर भी संघर्ष चल रहा था, जो लम्बा और तलखी भरा संघर्ष था। कई बार उनके मन डांवाडोल हो उठते, पर वे उस प्यार से मुंह न मोड़ सकते, जो उनके दिलों में सुलग रहा था। उन्होंने पाप के साथ संघर्ष किया, और अन्त में विजय पायी। आखिर टूटते हुए दिलों के साथ, लेकिन अपने निर्दोष होने पर गर्व करते हुए, वे एक-दूसरे से अलग हो गये।

रूथ ने इस शिद्दत से प्यार किया था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वह फिर किसी से प्यार न कर सकी, और उसने पत्थर बना दिल लिये ईश्वर की ओर मुंह मोड़ा और परोपकार के कामों में लग गयी। उसने रोगियों की सेवा की, गरीबों की सहायता की। उसने अनाथालय खोले और दीन-हीनों की सहायता करने वाली संस्थाएं स्थापित कीं। धीरे-धीरे उसकी सुन्दरता, जिसकी ओर से वह विमुख हो चुकी थी, उसका साथ छोड़ गयी, और उसका चेहरा उसके दिल की तरह जैसे पत्थर का बन गया। तब उसका धर्म और भी भयानक और संकीर्ण बन गया, क्योंकि उसका आधार प्यार नहीं बल्कि तर्क था। और वह खुद निरंकुश और असहनशील बन गयी।

और जॉन अपने अन्दर ही अन्दर कुढ़ता हुआ मौत की प्रतीक्षा करने लगा। उसके लिए जीने का अब कोई अर्थ नहीं रह गया था। विजेता बनने के प्रयत्न में वह हार चुका था। अब उसके मन में अपनी पत्नी के प्रति एकमात्र घृणा का भाव रह गया था, जो उसे हर समय बेचैन किये रखता। फिर भी, वह उसके साथ आदर और सहानुभूति से पेश आता और उसके लिए वह सब कुछ करता, जो एक अच्छे पति का कर्तव्य होता है।

मेरी ने भी एक सुशील, विश्वसनीय पत्नी के रूप में अपने पति का साथ दिया। फिर भी, वह उसे क्षमा न कर पायी। वह तलख और झगड़ालू स्वभाव की बन गयी। वह पति से ऐसी बातें कहने से न रह पाती, जो कि उसे चुभतीं, यद्यपि इसके लिए वह खुद से घृणा करती। वह पति के लिए खुशी से अपनी जान कुर्बान कर सकती थी, पर यह सोचना उसके लिए असह्य था, कि जब वह असह्य यातनाएं सह रही थी, जॉन किसी के साथ प्यार का आनन्द ले रहा था। पर अब उसके लिए ही नहीं, जॉन और रूथ के लिए भी जीवन नीरस बन गया था और बीती बातें खत्म हो चुकी थीं। उन्होंने पाप नहीं किया था और अब मरने के बाद कर्मों का फल पाने की प्रतीक्षा में खड़े थे।

वे अपनी कहानी सुनाकर चुप हो गये, तो चारों ओर स्तब्धता छा गयी।

तब ईश्वर ने कहना चाहा 'जहन्नम में जाओ!' पर यह शब्द उसके मुंह से नहीं निकले। तभी उसकी भौंहें सिकुड़ गयीं और उसने खुद से पूछा: क्या इसीलिए मैं सूर्य को अनन्त समुद्र पर प्रकाश करने और बर्फ को पहाड़ों पर चमकने के लिए कहता हूं? क्या इसीलिये पहाड़ों पर से बहते हुए झरने खुशी में गाते हैं और शाम की हवा में सुनहरी फसलें लहराती हैं?.... कभी मैं सोचता हूं कि तारे किसी पोखर के मैले पानी में कहीं ज्यादा चमकते हैं!

उस समय तीनों आत्माएं, अपनी दुःख भरी कहानी सुनाने के बाद, किसी हद तक सन्तोष अनुभव कर रही थीं। उनके जीवन का संघर्ष बहुत तलखी भरा था,

(शेषांश पृष्ठ ९१ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब ईसा भारत आये थे !

□ आदित्य

०००

पिछले दिनों प्रकाशित कुछ विदेशी ग्रंथों से यह पुनः सिद्ध हो जाता है कि ईसा ने भारत-प्रवास किया था, तथा उनके नैतिक उपदेश बौद्ध मत के तत्त्वज्ञान से अत्यधिक प्रभावित थे।

०००

यदि बारीकी से अध्ययन किया जाये, तो पता चलेगा कि ईसा के अधिकांश प्रवचन गीता, उपनिषद तथा बुद्ध की शिक्षाओं पर आधारित हैं। 'तू अपने पड़ोसी से प्रेम कर' वाली ईसा की सीख, भगवान बुद्ध की, जो ईसा से प्राय: ६०० वर्ष पूर्व जन्मे थे, नैतिक सीखों पर ही आधारित है। कालब्रुक नामक विद्वान को बौद्धमत के तत्त्वज्ञान और यूनानी ज्ञानी पुरुष पाइथागोरस के तत्त्वज्ञान में आश्चर्यजनक समता प्रतीत होती है। और यह एक सर्वविदित तथ्य है कि यूरोपियनों को बौद्ध धर्म का ज्ञान होने के पूर्व, अठारहवीं सदी तक यूनानियों और यहूदियों के घनिष्ठ संबंध थे।

रूसी इतिहासकार निकोलस नातोविश को हाल ही में नेपाल स्थित एक बौद्ध मठ से एक प्राचीन बौद्ध ग्रंथ की पांडुलिपि प्राप्त हुई थी, जिससे ज्ञात होता है कि ईसा तरुणावस्था में भारत आये थे, और यहां उन्होंने बौद्ध धर्म के ग्रंथों का गहन अध्ययन किया था। यही कारण है कि उनके और बुद्ध के चरित्र तथा उपदेशों में बहुत अधिक समानता है।

यह मत इस पांडुलिपि के प्रकाश में आने से पूर्व, दो अन्य प्रख्यात इतिहासकार भी व्यक्त कर चुके थे। रमेशचन्द्र दत्त कृत 'हिस्ट्री ऑफ सिविलीज़ेशन इन ऐंशियंट इंडिया' के दूसरे भाग के २० वें अध्याय में इसी मत को, ठोस प्रमाणों सहित, प्रतिपादित किया है। आर्थर लिलि नामक पाश्चात्य इतिहासकार ने इस मत का न केवल ज़ोरदार समर्थन किया है, अपितु इस साम्य के सैकड़ों निर्णायक प्रमाण भी प्रस्तुत किये हैं। 'बौद्धिज़्म इन क्रिश्चियनडम' नामक उनकी पुस्तक अत्यन्त चर्चित और विवादास्पद रही है।

ईसा की सूली के जिस स्वस्तिक चिह्न को ईसाई लोग पवित्र मानते हैं, वह वेदकालीन भारत में भी अत्यंत शुभ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पवित्र माना जाता था। अपने को आर्य मानने वाले हिटलर ने भी इस चिह्न को अपनाया था।

लिलि के इस मत का खंडन करते हुए, एक ईसाई विद्वान ने लिखा है, 'हम यह मानने को तैयार नहीं हैं कि ईसाई धर्म किसी भी रूप में बौद्ध धर्म का ऋणी है। इसके विपरीत, हमारी मान्यता है कि स्वयं बौद्ध धर्म ईसाई धर्म के एक प्राचीन पंथ–नेस्तोरियन पंथ–का ऋणी है, और उसका तत्त्वज्ञान इस पंथ द्वारा प्रतिपादित तत्त्वज्ञान पर ही आधारित है।'

लेकिन यह तर्क प्रस्तुत करते समय, ये विद्वान महाशय यह भूल गये कि महात्मा बुद्ध का जन्म नेस्तोर के जन्म से ९०० वर्ष पूर्व हो चुका था, और इस कारण उनके लिए नेस्तोर के नेस्तोरियन पंथ से कुछ भी लेना संभव नहीं था।

बाइबिल की बोलती चुप्पी

ईसा के जीवन का वर्णन करने वाले बाइबिल के विभिन्न सुसमाचार ईसा की १३ वर्ष की आयु और २९ वर्ष की आयु के बीच की अवधि के बारे में पूरी तरह चुप हैं। इन सुसमाचारों में उनके जीवन के प्रारंभिक वर्षों की घटनाओं का विस्तृत वर्णन है, किन्तु १३ वर्ष से लेकर २९ वर्ष तक उन्होंने क्या किया, कहां रहे–इन बातों के विषय में वे कोई जानकारी नहीं देते। सिर्फ़ लूका कृत सुसमाचार, (२-३९-५२) से हमें यह जानकारी मिलती है कि 'बारह वर्ष की आयु में ईसा

ने एक मंदिर में पंडितों के साथ धर्म-चर्चा की थी, और ३० वर्ष की आयु में जॉन से बपतिस्मा लिया था।' बीच के १७ वर्षों में ईसा ने क्या किया, इस बारे में यह सुसमाचार भी मौन है।

ए. फॉवरकेसर कृत 'जीसस डाइड इन कश्मीर' ('जीसस का निधन कश्मीर में हुआ था') में कहा गया है कि ये १७ वर्ष ईसा ने भारत में व्यतीत किये थे। एक आश्चर्यजनक बात यह है कि फॉवरकेसर ने अपनी पुस्तक में ईसा के जीवन के इन १७ वर्षों का जो वर्णन प्रस्तुत किया है, वह उस वर्णन से काफ़ी मिलता है, जो रूसी इतिहासकार निकोलस नातोविश को भारत तिब्बत सीमा पर लेह से २४ मील

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिण-पूर्व हेमीस नामक स्थान पर स्थित मठ से प्राप्त पाण्डुलिपियों में वर्णित है। दोनों वर्णनों में ईसा का नाम ईसा ही बताया गया है।

इन दोनों वर्णनों के अनुसार, ईसा भारत में १४ वर्ष की आयु में आये थे। जब वे कश्मीर से ऐंजाब (पंजाब) में आये, तब जैनियों ने उनसे अनुरोध किया कि वे उनके साथ ही रहें। किन्तु, उन्होंने इस अनुरोध को स्वीकार नहीं किया, और उड़ीसा स्थित जगन्नाथ पुरी की ओर बढ़ गये। वहां वे काफ़ी समय तक एक ऐसे मंदिर में रहे, जिसमें व्यास-कृष्ण के अवशेष रखे थे। वहां ब्राह्मण गुरुओं के तत्वावधान में उन्होंने वेदों तथा उपनिषदों का अध्ययन किया। ईसा ने आगे चलकर प्रार्थना द्वारा आत्मशुद्धि की जो सीख अपने अनुयायियों को दी, उसका पाठ उन्होंने ब्राह्मण गुरुओं के चरणों में बैठकर ही सीखा था।

अपनी धर्म-शिक्षा समाप्त करके ईसा ने छह वर्षों तक वाराणसी तथा अन्य तीर्थ-स्थानों में अपने शिष्यों को, जिनमें शूद्र तथा दूसरी नीची जातियों के लोग भी सम्मिलित थे, वेदों और उपनिषदों की शिक्षा दी।

मानवों की समानता का समर्थन

इन दोनों वर्णनों के अनुसार, वे शूद्रों को धार्मिक शिक्षा देते समय, सब मानवों की समानता की जो बात करते थे, उससे ब्राह्मण लोग चिढ़ गये। उन्होंने ईसा के सामने प्रस्ताव रखा कि वे शूद्रों को उपदेश देना छोड़कर, ब्राह्मण बन जायें, लेकिन ईसा ने इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया, क्योंकि उन्होंने सामान्य लोगों को धार्मिक शिक्षा देने को ही अपना जीवन-ध्येय निश्चित कर लिया था।

ब्राह्मणों की अप्रसन्नता को देखकर, ईसा जगन्नाथ पुरी को छोड़कर नेपाल की ओर चले गये। वहां पहुंचकर, बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन करने के उद्देश्य से पाली भाषा सीखी, और छह वर्षों तक बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन करते रहे। यह अध्ययन समाप्त करके वे राजपूताना आये, जहां काफ़ी समय तक उन्होंने सामान्य लोगों को सबको समान समझने और मूर्तिपूजा में आस्था न रखने का उपदेश देना आरंभ किया।

राजपूताना में कुछ समय व्यतीत करने के बाद, ईसा ने भारत छोड़ दिया, और भारत की सीमा पार करके, फारस पहुंचे। जब वहां के धर्मान्ध लोगों को ईसा के विचारों के बारे में पता चला, तो उन्होंने ईसा को अपने देश में प्रवचन करने से मना कर दिया। यह सोचकर कि यदि उन्होंने फारस नहीं छोड़ा, तो उनकी ज़िंदगी को खतरा पैदा हो सकता है, वे फारस छोड़कर लेबनान पहुंच गये। उस समय उनकी आयु २९ वर्ष थी। उनके जीवन के आगे के वर्षों का वर्णन बाइबिल में वर्णित है, क्योंकि तब तक ईसा लेबनान में आ चुके थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन, फॉवरकेसर की पुस्तक पढ़कर हमें यह चौंका देने वाली जानकारी मिलती है कि सूली पर चढ़ने के बाद भी ईसा की मृत्यु नहीं हुई थी, और वे 'पुनर्जीवित' होकर, पुन: भारत आ गये। इस पुस्तक में दिये गये वर्णन के अनुसार, ईसा को शुक्रवार के दिन दुपहर में सूली पर चढ़ाया गया था, और उसी दिन सूर्यास्त से पूर्व, उनके अचेत शरीर को सूली से उतारकर एक गुफ़ा में रख दिया गया, और गुफ़ा को एक बड़े पत्थर से बंद कर दिया गया, ताकि कोई ईसा के अचेत शरीर से छेड़खानी न कर सके।

जिन लोगों ने ईसा को गुफ़ा में बंद किया था, उन्होंने जब दो दिन बाद, रविवार को पत्थर हटाया, तो यह देखकर चकित रह गये कि गुफ़ा में ईसा मौजूद नहीं थे।

वास्तव में शनिवार तक ईसा के शरीर पर लगे सूली के घाव ठीक हो गये थे, और अपने पिता थॉमस और माता मेरी की सहायता से वे गुफ़ा से बाहर आ गये, और वे उन दोनों के साथ इस्राइल के उन दस खोये क़बीलों की खोज में चल दिये, जो फिलिस्तीन से हज़ारों मील दूर पूर्व में रहते थे।

श्रीनगर में ईसा का मकबरा

दोनों वर्णन इस बारे में मौन हैं कि ईसा को इन खोये कबीलों से मिलने में सफलता मिली या नहीं, लेकिन इस बात को साफ़-साफ़ कहते हैं कि ईसा, मेरी और थॉमस के साथ पुन: भारत आये। कश्मीर में उनकी माता मेरी की मृत्यु हो गयी। आज भी कश्मीर में ईसा की माता मेरी की कब्र मौजूद है, जिस पर स्थानीय लोग उनके निधन-दिवस पर, श्रद्धा के रूप में फूल चढ़ाते हैं।

इन वर्णनों के अनुसार, मृत्युपर्यन्त ईसा कश्मीर में ही रहे, और उनके निधन के बाद, उन्हें श्रीनगर के निकट खान्यार नामक स्थान में एक कब्र में दफ़ना दिया गया। यह कब्र 'रोजाबाल के मकबरे' के रूप में प्रसिद्ध है, और दूर-दूर से लोग आज भी, उसके दर्शन के लिए आते हैं।

बाइबिल (मैथ्यू २-१) में कहा गया है कि ईसा के जन्म से पूर्व, अनेक विदेशी ज्ञानी पुरुषों ने येरूशलम की यात्रा की थी, और प्राय: वहां आया करते थे। ईसाई विद्वान, बिना किसी प्रमाण के ऐसा मानते हैं कि यह ज्ञानी पुरुष ईरान से आते हैं। किन्तु, ऐसे अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं, जो यह बताते हैं कि ये ज्ञानी पुरुष भारतीय थे।

प्लूटॉर्क ने अपनी एक रचना में स्पष्ट लिखा है कि 'ईसा के जन्म से पूर्व, यति लाल नाम का एक भारतीय ज्ञानी पुरुष अलैग्जैंड्रिया में आया करता था। वह समुद्र के किनारे स्थित प्रदेशों की यात्रा भी किया करता था।'

अशोक के एक शिलालेख में यह सूचना अंकित है कि यूनान, मिस्र और अलैग्जैं-

(शेषांश पृष्ठ ९४ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमती सुधा की हिन्दी - कहानी

भुक्तशेष

अंग्रेजों के प्रति अवज्ञा आन्दोलन में भाग लेने के बावजूद उनकी अंग्रेजी अच्छी है। उनकी हिन्दी भी अच्छी है और वे संस्कृत भी जानते हैं। लेकिन हिसाब के शिक्षक हैं, एक हाईस्कूल में। यह स्कूल कभी शहर के बनिकगण चलाते थे। अब इसका भी सरकारीकरण हो गया है।

वास्तव में झमेला यहीं से शुरू हुआ। बनिये किसी को पूरा नहीं तौलते थे लेकिन तब सब एक-दूसरे का सुख-दुख, हिलमिल कर बांटते थे; अब जब से सरकार ने लूले-लंगड़े को भी चतुर्भुज मानना शुरू कर दिया है, तब से सही हाथ-पांव वाले हाथ-पैर पटक कर रहे हैं।

मास्टर साहब भी उन्हीं में एक हैं। इनका अहं ऐसा लोहा है, जो ढलने के पहले ही कटुआ जाता है।

'मैं राजनैतिक पीड़ित हूं।'—मास्टर साहब का ठिठुरा हुआ स्वर मौके-बेमौके सुनायी पड़ता है।

'अच्छा!'

'पूरे नौ महीने जेल में रहा।' उनका सदा झुका रहनेवाला सिर अस्वाभाविक रूप से तन गया। उनके ढीले कंधों में सरसराहट उपजी। उनकी लकड़ी जैसी सूखी बांहें आवेश में हिलने लगीं।

'कहां गिरफ्तार हुए थे?'

'यहीं, एस. डी. ओ. कोर्ट में।' —वे चुप नहीं हुए, कहते गये। एक-एक कदम की कथा वे सुना गये। हजारों बार दुहराई कथा का रसहीन स्वाद उनके मुंह में फेन भर रहा था। होठों के दोनों कोने से सफेदी झांक रही थी, लेकिन वे घटना का एक भी अंश छोड़ना नहीं चाहते थे।

'मैं अपने स्कूल में सबसे सीनियर टीचर हूं।'

यह उनकी कथा का उपसंहार था। मैंने राहत की सांस ली। लेकिन अब वे अपनी सीनियॉरिटी के बिंदु गिनाने लगे। सचमुच उनके साथ अन्याय हुआ था। लेकिन प्रतिकार तत्काल सम्भव न था, क्योंकि वे जिस कार्यालय का नाम बार-बार ले रहे थे, वह भ्रष्टाचार का अड्डा था।

'आप उस कार्यालय से न्याय की आशा करते हैं?'

'नहीं, वहां तो अफसर, खुद शिक्षा पदाधिकारी ही हाथ पसार कर लेता है।'

'दूसरी बात यह है कि आप अब तक क्यों इस स्थिति को स्वीकारते रहे?'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

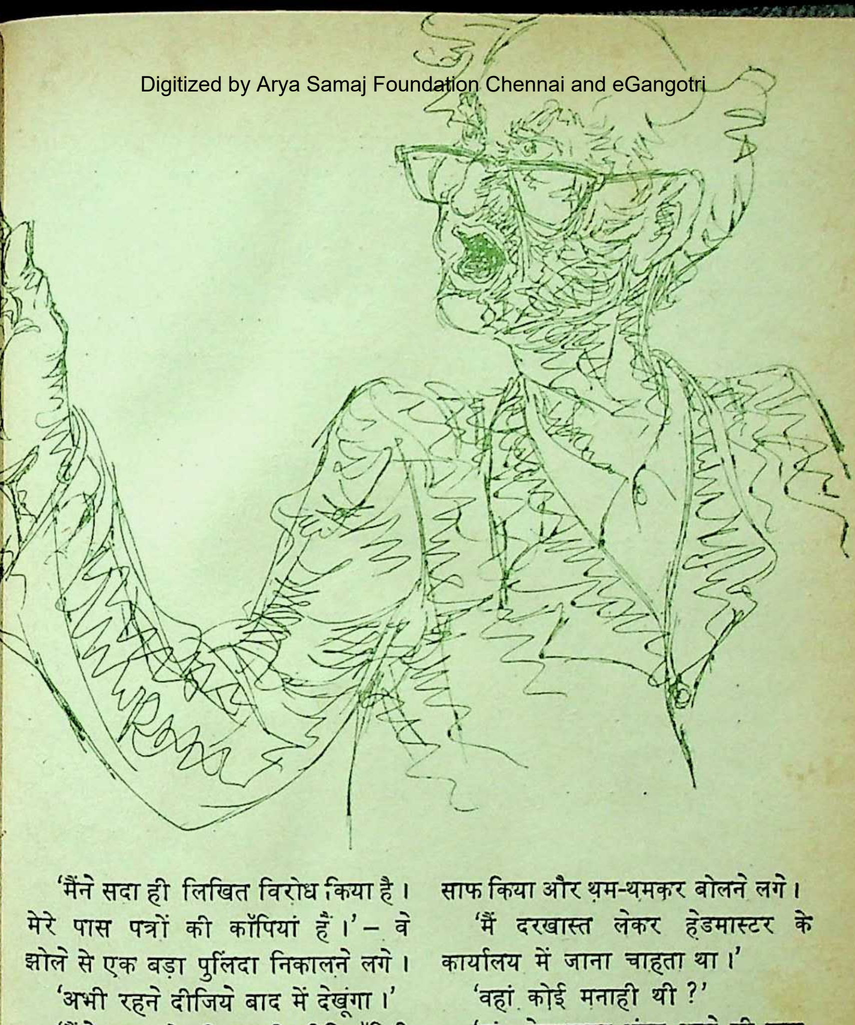

'मैंने सदा ही लिखित विरोध किया है। मेरे पास पत्रों की कॉपियां हैं।' – वे झोले से एक बड़ा पुलिंदा निकालने लगे।

'अभी रहने दीजिये बाद में देखूंगा।'

'मैंने शुरू से ही अपनी सीनियॉरिटी के लिए लिखा है। मेरे पत्र गायब कर दिये गये हैं। आज भी मेरे साथ जो हुआ है, वह मैं कह नहीं सकता।' – उनकी कोटरगत आंखें आंसुओं को सम्हालने में असमर्थ थीं। लेकिन उभरी हुई कपोल-स्थियां बांध बन गयीं। उन्होंने अपना गला साफ किया और थम-थमकर बोलने लगे।

'मैं दरखास्त लेकर हेडमास्टर के कार्यालय में जाना चाहता था।'

'वहां कोई मनाही थी?'

'हां, हेडमास्टर अंदर आने की इजाजत नहीं दे रहे थे। जब वे पांच-सात मिनट के लिए कहीं बाहर गये, तो मैंने क्लर्क को अपना आवेदन-पत्र देकर हस्ताक्षर करा लिया।'

'तब काम तो हो ही गया।'

'नहीं, वे लौटकर लगे चीखने। कहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगे—सांप का सिर नहीं कुचल दिया यही गलती की। अभी हौसला नहीं गया है हेडमास्टर बनने का। आइने में मुंह देखा है? इस चेहरे से हेडमास्टर बनोगे क्या सोचकर आवेदन देते हो? कौन बनायेगा तुमको हेडमास्टर।'

वे फिर रुक गये। कंठावरोध हुआ होगा या थक गये होंगे। पिछले बीस वर्षों से वे अपने आपको सही जगह दिलाने की लड़ाई लड़ते आ रहे हैं, इस युद्ध में आज़ादी की लड़ाई के किस्सों का अस्त्र-शस्त्र और ताम्र-पत्र का कवच काम नहीं आ रहा है।

'आप मंत्री से मिल चुके हैं?'

'नहीं।'

'मिल लीजिये।'

'लोग कहते हैं. . . .'

'क्या कहते हैं?'

'कि वे भी पैसे के मुंह से ही बातें करते हैं।'

'ओ।'

'और मेरे पास पैसे कहां?'

'. . . . .'

'बड़ा लड़का पढ़ ही नहीं सका। घर पर रहता है। खेती उससे पार नहीं लगती। मंझला बहुत व्यावहारिक है। ठीकेदारो से अपने लायक कमा लेता है। तीसरा अभी पढ़ रहा है। सोचा था, डाक्टर बना दूंगा। आई. एस. सी. में दो बार फेल हुआ तो उसे अब आर्ट्स पढ़ा रहा हूं। बी. ए. का इम्तहान देगा। स्ट्राइक के कारण उसकी परीक्षा ही नहीं हो रही है। उससे छोटा अभी स्कूल में है। वही पढ़ने में सबसे अच्छा है। पांचवां तो अभी बच्चा है।'

'लड़कियां भी होंगी।'

'जी हां, आपके आशीर्वाद से चारों बहुत सुखी हैं। औकात भर सबके लिए कर दिया है।'

'. . . . . . .'

उनका ब्योरा चलता रहा—

'बड़ा दामाद पी. डब्ल्यू. डी. आफिस में किरानी है। दूसरा कम्पाउंडर है। तीसरे की एक दूकान है। चौथा ही अभी कुछ नहीं करता। बेटी हमारे ही घर रह रही है। हां, तो मैं कह रहा था. . . .' उन्होंने अपने माथे पर जोर दिया—'हां, यही कि शिक्षा पदाधिकारी की मांग हजारों की है।'

×××

'सर, मेरी सीनियॉरिटी का पुराना मामला है।'

'एक आप ही का है? सैकड़ों लोग अपने से जूनियर के मातहत काम कर रहे हैं। आपकी तरह कोई खून तो नहीं सुखा रहा है।'

'सर।'

'मेरा सिर मत खाइये।'

'लेकिन. . . .'

शिक्षा पदाधिकारी ने घंटी बजायी, तत्काल कोई आ गया।

'इन्हें निर्मल बाबू के पास ले जाओ।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्मल बाबू ने स्पष्ट बात की थी–'लाये हैं ?'

'जी ।' मास्टर साहब ने आवेदन-पत्र निकालकर आगे बढ़ा दिया ।

निर्मल बाबू ने चिढ़े स्वर में कहा–'यह क्या है ?'

'दरखास्त ।'

'सो क्या मैं अन्धा हूं ? दरखास्त ! हूं ! जाइये यहां बहुत काम है ।'

'साहब ने आपके ही पास भेजा है ।'

'क्यों भेजा है यह पता है ?' वह दांत पर दांत चढ़ाकर बात को अंदर ही निगलते हुए बोला ।

'मेरी सीनियॉरिटी......'

'अरे यह साली सिनियॉरिटी न हुई आफत हो गयी । सीनियर हैं तो खरीद लीजियेगा दुनिया को ! दूसरे का भी कोई हक है कि केवल अपनी ही सोचियेगा ।'

'हमारे साथ बड़ा अन्याय हुआ है ।'

'हमने अन्याय किया है ?'

'आप क्यों अन्याय करेंगे ? अन्याय तो कर रहा है हमारे स्कूल का हेडमास्टर जो हमारा नाम लिस्ट में नीचे कर देता है । सच कहता हूं.....'

'हं, हं, एक आप ही सच कहते हैं, दूसरे तो दुनिया में सब झूठे ही हैं ।'

'मैं सबको कहां झूठा बना रहा हूं । हमारे हेडमास्टर....'

'उसका नाम जप-जप कर आप स्वर्ग चले जायेंगे । '–क्लर्क हंसने लगा ।

मास्टर साहब हतप्रभ होकर चुप हुए तो किरानी उनके पास झुक आया–'आपका पोजीशन ठीक करने में दस हजार लगेगा ।'

'दस हजार' !–मास्टर साहब की आवाज में घिघिआहट थी, भयातुरता थी और अकुलाहट भी थी । उन्होंने अपने कागज समेटे । इधर-उधर नहीं ताका । भागे-भागे वापस आ गये ।

× × ×

'आप ही बताइये, दस हजार मैं कहां से देता ।'

मास्टर साहब सबसे पूछते चलते हैं–कभी हिन्दी में, कभी अंग्रेजी में, कभी गांव की बोली में । नकली दांत के सस्ते सेट ने उनकी मुखाकृति तो बदल ही दी है, वे अब शब्दों के सही उच्चारण भी नहीं कर पाते । इसीलिये अपने साथ ताम्रपत्र लिये घूमते हैं । लेकिन इसमें ऐसा कोई बीजमंत्र नहीं, जो कार्यालय-पिशाच और संस्था-प्रेत से उनकी रक्षा कर सके ।

अब, स्कूल के वार्षिकोत्सव में भी शिक्षकों की सबसे पिछली सीट पर बैठकर अंग्रेजों से सीखा हुआ जुमला दुहराते हैं – 'माइट इज राइट।' आदतन इसका हिन्दी अनुवाद भी बुदबुदाते हैं, और यदि लड़कों से इस विषय पर लेख लिखवाना हो तो बात कहां से शुरू की जायेगी यह सोचना शुरू करते हैं कि घंटी बज जाती है।

–बिहार शिक्षा सेवा, देवघर-८१४११२

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहां राजमुकुट गेंद की तरह उछाला गया था

□ डा. देशराज पाण्डेय

अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि जॉन मिल्टन ने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'पैराडाइज़ लॉस्ट' में लिखा है कि, 'इट इज़ बेटर टु रूल इन द हेल दैन टु सर्व इन हैवेन' अर्थात् स्वर्ग में सेवा करने से नरक में शासन करना अच्छा है। सचमुच मिल्टन ने इस एक पंक्ति में मनुष्य की सबसे बड़ी प्रवृत्ति– सत्ता और अधिकार की प्रवृत्ति का उल्लेख कर दिया है। हम देखते हैं कि प्रत्येक मनुष्य सत्ता और अधिकार चाहता है और सत्ता तथा अधिकारों के लिए ही संसार में संघर्ष और कलह होता है। वास्तव में संसार में सत्ता के लिए मनुष्य का

रामकथा के गायक

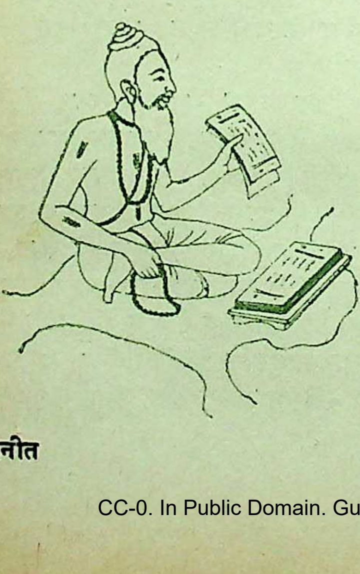

इतना खून बहाया गया है कि अगर वह खून सूखा न होता तो आज पृथ्वी में पानी की जगह खून ही भरा होता। रोम, यूनान, मिस्र के युद्ध तथा हिंदुस्तान में महाभारत का युद्ध सत्ता के लिए ही लड़े गये थे। आधुनिक युग में भी दोनों विश्वयुद्ध सत्ता के लिए ही हुए हैं। इसके अतिरिक्त आज पूरी दुनिया में जो दानवता का नग्न तांडव हो रहा है, वह भी सत्ता की हविस के कारण ही हो रहा है। प्रसिद्ध अंग्रेज दार्शनिक हॉब्स और लॉक का यह कथन अक्षरशः सत्य है कि दुनिया में हिंसा का एक मात्र कारण मनुष्य की अधिकार प्राप्त करने और दूसरों पर शासन करने की लालसा है। इन दोनों दार्शनिकों ने मनुष्य की इस प्रवृत्ति की चर्चा करते हुए यहां तक लिखा है कि मनुष्य की यह प्रवृत्ति अजेय है। मनुष्य सब कुछ त्याग सकता है, परंतु अपनी इस प्रवृत्ति को नहीं त्याग सकता है। और सचमुच हम इन दोनों दार्शनिकों के इस कथन में सत्यता की पूर्ण झलक भी पाते हैं। पर इतिहास बताता है कि दुनिया में कुछ ऐसे भी महापुरुष हुए हैं, जिनमें इस प्रवृत्ति के लेशमात्र भी दर्शन नहीं होते हैं। इन सभी महापुरुषों ने छोटे-मोटे अधिकार क्या बड़े-बड़े साम्राज्यों को भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठुकराया है । राम, कृष्ण, भरत और बुद्ध ऐसे ही महापुरुष थे ।

वैसे दुनिया में एक से एक बड़े त्यागी पुरुष हुए हैं, परंतु राम और भरत का त्याग दुनिया में बेजोड़ है । तत्कालीन राजनैतिक परंपरा के अनुसार राजा का ज्येष्ठ पुत्र राज्य का उत्तराधिकारी होता था । अतः महाराज दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण राम ही राज्य के उत्तराधिकारी थे । भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न राम से छोटे थे, अतएव उनके राज्य का अधिकारी होने का कोई प्रश्न ही नहीं था । पर अयोध्या के राजमहल में राम के खिलाफ एक काफी लंबे अरसे से षड्यंत्र चल रहा था । पूरा राजघराना दो गुटों में विभक्त था । एक तरफ प्रमुख रूप से कैकेयी तथा दूसरी ओर कौसल्या और सुमित्रा थीं । राजा दशरथ कैकेयी पर अधिक अनुरक्त होने के कारण किंकर्त्तव्यविमूढ थे। कैकेयी का गुट सशक्त था और वह कौसल्या के ऊपर हावी था (वाल्मीकि-रामायण, अयोध्याकांड सर्ग २०, श्लोक ३९-४६ में इसका संकेत है) । अतः कैकेयी राजा दशरथ के अपने प्रति विशेष अनुराग का नाजायज़ फायदा उठा कर भरत को राजा बनाना चाहती थी। इसके अतिरिक्त हो सकता है कि राजपुरोहित वशिष्ठ की भी यहीं मंशा रही हो। चूंकि राम की शिक्षा-दीक्षा विश्वामित्र के सान्निध्य में हुई थी तथा उनका विवाह भी विश्वामित्र ने ही कराया था, अतः संभव है कि वशिष्ठ को

यह भय रहा हो कि यदि राम राजा हुए, तो विश्वामित्र को उनसे अधिक महत्व मिलेगा और मुमकिन है इसीलिये वशिष्ठ ने ही कैकेयी की दासी मंथरा से मिलकर ऐसा षड्यंत्र रचवाया हो कि राम का राज्याभिषेक न हो सके । वशिष्ठ ने कहा कि कल ही राम के राज्याभिषेक का मुहूर्त है । अतः वशिष्ठ की बात मानकर राज्याभिषेक की तैयारियां होने लगीं, किन्तु भरत और शत्रुघ्न अयोध्या से सैकड़ों कोस दूर केकय प्रांत (आधुनिक कश्मीर) में अपने ननिहाल में थे । वे किसी भी प्रकार एक दिन में इतनी दूर से आकर राज्याभिषेक के समय तक अयोध्या नहीं पहुंच सकते थे। संभव है कि वशिष्ठ ने राम के राज्याभिषेक के लिए इतनी जल्दी का मुहूर्त इसीलिये बताया हो कि भरत और शत्रुघ्न राज्याभिषेक में शामिल न हो सकें तथा राज्याभिषेक के समय कैकेयी को भरत की अनुपस्थिति खटक जाये और वह विद्रोह कर दे। और वास्तव में हुआ भी यही। हम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानते हैं कि मंथरा ने कैकेयी को राम के खिलाफ खूब भड़काया था ही और इधर भरत भी अयोध्या में नहीं थे, अतः कैकेयी का हृदय क्रोध से भभक उठा तथा उसने विद्रोह कर दिया और राम का राज्याभिषेक न हो सका। राजा ने भरत को राजा बनने तथा राम को चौदह वर्ष के वनवास की कठोर आज्ञा दी और इस प्रकार कैकेयी तथा उसके गुट की मंशा पूरी हो गयी।

परंतु राम के मन में इस राजाज्ञा से कोई विकार नहीं उत्पन्न हुआ। यदि राम चाहते तो वे अयोध्या का राज्य बल से प्राप्त कर सकते थे। लक्ष्मण जैसा वीर भाई उनके साथ था तथा उन्हें अयोध्या के समस्त लोगों की सहानुभूति भी प्राप्त थी। पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। वे शील और क्षमा के समुद्र थे। उनमें पितृ-भक्ति और भ्रातृ-स्नेह इतना प्रबल था कि वे अपने पिता और भाइयों के लिए राज्य क्या अपने प्राण भी दे सकते थे! अतः राम पिता की आज्ञा मानकर अपनी पत्नी सीता और भाई लक्ष्मण के साथ वन को चले गये तथा चित्रकूट में पर्ण कुटी बनाकर रहने लगे।

परंतु कहानी अभी इतनी से खत्म नहीं होती है। वह और भी आगे बढ़ती है। राम वनवासी तो हो जाते हैं, पर भरत राजा नहीं बनते हैं। राम के वियोग में राजा दशरथ के प्राण छूट जाते ह और भरत एवं शत्रुघ्न ननिहाल से बुलाये जाते हैं तथा अयोध्या पहुंचने पर जब भरत को पितृ-मरण तथा भ्रातृ-वियोग का दुःखद समाचार मिलता है तो उन्हें काठ-सा मार जाता है और वे शोक से विह्वल हो जाते हैं। वे अपनी जननी कैकेयी की उसके कुकृत्य के लिए कटुतम शब्दों में भर्त्सना करते हैं तथा अपने को उसका पुत्र बनाकर दुनिया में भेजने के लिए विधाता को भी कोसते हैं। पर, फिर वे शीघ्र ही संभल जाते हैं और चतुरंगिणी सेना तैयार करके तथा पूरे दल-बल और तीनों माताओं, गुरुजनों, अभिजनों तथा पुरुजनों के साथ राम को मनाकर वापस लाने हेतु चित्रकूट के लिए प्रस्थान कर देते हैं।

भरत के चित्रकूट पहुंचने पर जब लक्ष्मण ने दूर से देखा कि भरत दल-बल सहित आ रहे हैं, तो उन्हें आशंका हुई कि भरत निष्कंटक राज्य करने की लालसा से राम को नष्ट करने आ रहे हैं। वे दौड़ कर राम को दल-बल के साथ भरत के आने की सूचना देते हैं और अपनी आशंका प्रकट करते हैं तथा भरत को इस दुस्साहस के लिए एक अच्छा सबक सिखाने की प्रतिज्ञा करते हैं। परंतु राम लक्ष्मण को समझा-बुझाकर शान्त कर देते हैं। वे कहते ह कि भरत कभी ऐसा नहीं कर सकता है। करना तो दूर रहा वह कभी ऐसा सोच भी नहीं सकता है। राम भरत के हृदय को अच्छी तरह से जानते थे।

दूर से जटाजूट और वल्कल धारण किये हुए राम को देखकर भरत के नेत्रों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में अश्रुधारा फूट पड़ती है तथा वे राम के पास पहुंचकर धड़ाम से उनके चरणों में गिर पड़ते हैं और फूट-फूट कर रोने लगते है । और अपने पैरों में भरत को पड़ा हुआ देखकर राम तुरन्त उन्हें उठा लेते हैं तथा छाती से लगा कर वे भी रोने लगते हैं ।

दोनों भाई–राम और भरत एक दूसरे के गले में लिपट कर बहुत देर तक विलख-विलख कर रोते रहे और फिर जब दोनों भाइयों का मानसिक उद्वेग कुछ कम हुआ तो राम ने भरत से पिता का कुशल समाचार पूछा और जब भरत ने उन्हें पिता के दिवंगत होने का दुःखद समाचार बताया तो राम को ऐसा लगा कि जैसे किसी ने उनके हृदय में भाला भोंक दिया हो । वे बेहोश हो गये तथा पछाड़ खाकर पृथ्वी पर गिर पड़े । और राम को पृथ्वी पर बेहोश गिरते देखकर भरत भी धाड़ मार कर रोते हुए उनके ऊपर गिर पड़े तथा राम और भरत की यह दशा देखकर तीनों माताएं भी पछाड़ खा-खाकर उन दोनों के ऊपर गिर पड़ीं तथा विलख-विलख कर रोने लगीं । राम, भरत, कौसल्या तथा कैकेयी एवं सुमित्रा की यह कारुणिक दशा देखकर वहां उपस्थित सारा जन-समुदाय भी रो पड़ा ।

परन्तु वशिष्ठ, विश्वामित्र और जनक ने जब देखा कि स्थिति बेकाबू हो रही है तो उन्होंने राम और भरत वगैरह को पृथ्वी से उठाकर समझाया-बुझाया तथा सबको प्रकृतिस्थ किया ।

इसके बाद राम की दृष्टि अपनी तीनों माताओं की ओर जाती है और जब वे उन्हें विधवाओं की वेश-भूषा में देखते हैं तो वे पुनः मूर्च्छित होने लगते हैं, परन्तु फिर वे शीघ्र ही अपने को किसी तरह नियंत्रित कर लेते हैं तथा अपनी तीनों माताओं, गुरुजनों एवं समस्त अयोध्यावासियों को प्रणाम करते हैं और सबकी कुशल-क्षेम पूछते हैं । भरत सीता को भी प्रणाम करते हैं तथा लक्ष्मण को गले लगाते हैं । लक्ष्मण भी भरत और तीनों माताओं, गुरुजनों तथा समस्त अयोध्यावासियों को प्रणाम करते हैं और सबसे कुशल क्षेम पूछते हैं ।

फिर सब लोग एक विशाल वट-वृक्ष के नीचे बैठ जाते हैं । राम सबके बीच में बैठते हैं तथा अन्य सभी लोग उनके चारों ओर घेरा बनाकर बैठते हैं । वहां पर अयोध्या के सब लोग तो थे ही, चित्रकूट के आस-पास के सभी ऋषि-मुनि भी आये थे । वे सब भरत का आगमन सुनकर उन्हें देखने आये थे ।

उसके बाद भरत अपने स्थान से उठकर राम के पास जाते हैं तथा राजमुकुट उनके हाथों में रख देते हैं और आंसू बहाते हुए हाथ जोड़ कर प्रार्थना करते हैं कि वे अपनी वस्तु स्वीकार करें तथा अयोध्या चलकर वहां का राज्य संभालें । परंतु राम राजमुकुट स्वीकार नहीं करते हैं और इस पर भरत फूट-फूटकर रोने लगते हैं तथा ईश्वर की सौगंध खाकर कहते हैं कि 'भैया, मैं निर्दोष हूं और कैकेयी के षड्यंत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में मेरा कोई हाथ नहीं था।' और ऐसा कह वे राजमुकुट पुनः राम के चरणों में रख देते हैं। परंतु राम फिर राजमुकुट स्वीकार नहीं करते हैं। वे भरत से कहते हैं कि, 'भैया, मैं जानता हूं कि तुम निर्दोष हो तथा तुम्हारा हृदय गंगाजल की तरह पवित्र है। पर पिताजी ने जो कहा है, वही मुझे और तुम्हें करना होगा क्योंकि माता-पिता की आज्ञा का पालन करना हमारा धर्म है।'

मगर इतना कहने पर भी भरत ने राम की बात नहीं मानी। वे राम के शब्दों को सुनकर तिलमिला गये। उन्होंने कहा कि 'नहीं, भैया, यह धर्म नहीं, अधर्म है। पिता जी ने जो कुछ किया है, मोहवश किया है। विकृत मन से कही हुई बात कभी धर्म नहीं हो सकती है। आप वन में रहें, मैं राज्य करूं, यह कहां का धर्म है? मुझे पिता की आज्ञा का उल्लंघन करने पर चाहे सहस्रों वर्षों तक नरक में रहना पड़े पर मैं आपके चरणों की सौगंध खाकर कहता हूं कि मैं राजमुकुट स्वीकार नहीं करूंगा।'

अब राम भरत के इन शब्दों को सुनकर निरुत्तर हो गये। वे कुछ देर तक खामोश रहे, पर थोड़ी देर के बाद वे फिर से भरत को समझाने लगे। परन्तु भरत ने किसी तरह से भी राम की बात नहीं मानी। राम बार-बार राजमुकुट को भरत के हाथों में रखते और भरत उसे राम के चरणों में रख देते। दोनों भाइयों में से कोई भी राजमुकुट स्वीकार करने को तैयार नहीं था।

इसके बाद जब भरत ने किसी तरह से भी राम की बात नहीं मानी, तो राम ने उस सभा में उपस्थित अपने गुरुजनों से कहा कि वे भरत को किसी तरह से अयोध्या का राज्य संभालने के लिए राजी करें। और राम के आग्रह पर वशिष्ठ, विश्वामित्र, जावालि और जनक आदि सभी ने भरत के ऊपर बहुत ज़ोर भी डाला, पर भरत ने किसी की बात नहीं मानी। वे गुरुजनों की बात सुनकर क्षुब्ध हो उठे और फिर बड़े कठोर शब्दों में उन्होंने उनसे कहा कि, 'आप सभी लोग धर्मज्ञ और नीतिज्ञ हैं फिर भी मुझे अधर्म सिखा रहे हैं। मेरा बड़ा भाई जटा-जूट और वल्कल धारण किये हुए वन-वन भटके तथा मैं अयोध्या का राज्य करूं? और आप लोग यह भी सुन लें कि चाहे मुझे पिता और आप सभी गुरुजनों की आज्ञा के उल्लंघन का कलंक मिले अथवा इस अपराध के लिए अनंत काल तक मुझे महारौरव नरक की ज्वाला में जलना पड़े, पर मैं अयोध्या का राज्य स्वीकार नहीं कर सकता और न बिना राम को साथ लिये अयोध्या वापस जा सकता तथा यदि राम मेरी बात नहीं मानते तो मैं अपनी सौगंध खाकर कहता हूं कि मैं आत्मदाह कर लूंगा।'

भरत के इन शब्दों को सुनकर वहां उपस्थित सभी लोग आनंद विभोर हो गये। सभी की आंखों में प्रेमाश्रु छलछला आये। सभी ने 'महात्मा भरत की जय' और 'धर्मात्मा भरत की जय' आदि के गगन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेटी नारों से भरत की जय-जयकार की तथा उस जय-जयकार से सारा आकाश गूंज उठा। दुनिया के इतिहास में पहली बार दो राजकुमारों के द्वारा राजमुकुट मिट्टी के ढेले की तरह ठुकराया गया था।

भरत की दृढ़ प्रतिज्ञा को सुनकर सभा में उपस्थित सारा जन-समुदाय तो आनंद से पुलकित हो गया किंतु राम बड़ी भीषण स्थिति में पड़ गये। यदि वे भरत की बात मानते हैं तो पिता की आज्ञा का उल्लंघन होता है और यदि भरत की बात नहीं मानते तो भरत के प्राण जाते हैं। राम बड़ी देर तक पसोपेश में पड़े रहे, किंतु उन्हें समस्या का कोई हल न दिखाई पड़ा। पर अंत में भरत को राजी करने के लिए उनके मन में एक बात आयी। उन्होंने भरत से कहा कि, 'ठीक है, यदि तुम पिता की बात को गलत मानकर नहीं मानते हो तो न मानो, परंतु यदि मेरी बात मानते हो, तो तुम्हें सबको लेकर अयोध्या वापस जाना होगा और मेरी ओर से चौदह वर्ष तक अयोध्या का राज्य संभालना होगा।'

अब भरत के पास राम की बात का कोई जवाब नहीं था। वे प्राण दे सकते थे पर राम की बात नहीं टाल सकते थे, क्योंकि राम उन्हें अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय थ। वे उनके जीवन के सर्वस्व थे।

भरत कुछ देर तो खामोश रहे, पर शीघ्र ही वे हाथ जोड़कर राम से बोले कि 'ठीक है, भैया! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, परंतु इतनी प्रार्थना अवश्य है कि आप मुझे राजमुकुट नहीं, अपितु अपनी चरण पादुका दें। मैं उन्हीं को राजमुकुट मानकर आपके प्रतिनिधि के रूप में चौदह वर्ष तक अयोध्या का राज्य संभाले रहूंगा। मगर हां, इतना अवश्य याद रहे, प्रभो! कि अगर आपने चौदह वर्ष के बाद अयोध्या पहुंचने में एक दिन भी विलंब किया, तो मैं आपके चरणों की सौगंध खाकर प्रतिज्ञा करता हूं कि फिर मैं प्राण त्याग दूंगा।' इस पर राम ने भरत की प्रार्थना मान ली और उन्हें अपनी चरण-पादुकाएं दे दीं।

राम से चरण-पादुका लेकर भरत ने उन्हें पहले बड़ी श्रद्धा से प्रणाम किया और फिर अपने सिर पर रखकर पागल की तरह नाचने लगे।

भरत के इस प्रेमोन्माद को देखकर वहां उपस्थित सारे जन-समूह के नेत्रों में फिर से प्रेमाश्रु उमड़ आये और सभी ने पुनः भरत की जय-जयकार की तथा जय-जयकार से एक बार फिर सारा आकाश गूंज उठा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विश्व इतिहास में पहली बार चित्रकूट के प्रांगण में धर्म की राजनीति पर विजय हुई थी। मंथरा और कैकेयी आदि की राजनीति से भरत को राजमुकुट मिला था, परंतु धर्मात्मा होने के कारण भरत ने उसे स्वीकार नहीं किया।

यह चित्रकूट आधुनिक भौगोलिक स्थिति के अनुसार मध्य रेलवे के झांसी-मानिकपुर मार्ग में चित्रकूटधाम करवी स्टेशन से लगभग आठ कि. मी. दक्षिण में स्थित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका थोड़ा-सा भाग उत्तरप्रदेश में और अधिकांश भाग मध्यप्रदेश में है। चित्रकूट के लिए करवी में बसें, टैक्सियां, टैंपू और रिक्शे-तांगे आदि हर समय सुलभ रहते हैं। प्रयाग से चित्रकूट का सीधा फासला तीस कोस का है, किंतु वाल्मीकि रामायण में यह दूरी दस कोस बतायी गयी है। हो सकता है कि उस समय का एक कोस आज कल के तीन कोस के बराबर रहा हो। कुछ विद्वान जिनमें बेंग्लर महोदय प्रमुख हैं, इस चित्रकूट को असली चित्रकूट नहीं मानते हैं। वे मध्य प्रदेश के सरगुजा क्षेत्र में रामगढ़ को असली चित्रकूट मानते हैं। परंतु उनकी यह मान्यता निराधार है और वस्तुत: असली चित्रकूट यही है। इसके अतिरिक्त मल्लिनाथ, वल्लभदेव, डा. रंजन सूरिदेव, महामहोपाध्याय हरिदास शास्त्री और आचार्य सीताराम चतुर्वेदी तथा आचार्य बाबूलाल गर्ग आदि विद्वान महाकवि कालिदास के 'मेघदूत' में वर्णित रामगिरि भी इसी चित्रकूट को मानते हैं, परंतु श्री मिराशी, डा. वासुदेव शरण अग्रवाल और डा. भगवत शरण उपाध्याय आदि विद्वानों के विचार इस विषय में उपरोक्त विद्वानों से भिन्न हैं। ये विद्वान नागपुर के पास स्थित रामटेक पहाड़ी को रामगिरि मानते हैं। चित्रकूट का दायरा १५ कि. मी. है और चित्रकूट के चारों ओर १५ कि. मी. तक की दूरी का क्षेत्र चित्रकूट ही कहलाता है। पूरा चित्रकूट राम के चरणों की पावन रज से पवित्र है तथा अपनी अनुपम नैसर्गिक सुषमा के कारण बरबस हमारा मन मोहता है। इस चित्रकूट क्षेत्र में अगणित जड़ी-बूटी तथा औषधियां और अपार खनिज संपदाएं भरी पड़ी हैं तथा इसकी प्राकृतिक सुंदरता विश्व की किसी भी मनोरम स्थली के सौन्दर्य से टक्कर ले सकती है।

चित्रकूट के प्रमुख दर्शनीय स्थल निम्नलिखित हैं:

श्री कामदगिरि : चित्रकूट तीर्थ के प्रमुख देव श्री कामदगिरि हैं। कामदगिरि की प्राकृतिक सुषमा बड़ी ही निराली है। महर्षि वाल्मीकि, महाकवि कालिदास तथा गोस्वामी तुलसीदास ने इसका बड़ा विशद वर्णन किया है। इसके दर्शन एवं परिक्रमा करने से सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं, ऐसी मान्यता है और इसीलिये इसका नाम कामदगिरि है।

कामदगिरि के दर्शन के लिए प्रतिमास की अमावस्या, रामनवमी और दीपावली को भारत के कोने-कोने से असंख्य यात्री चित्रकूट आते हैं और इसकी परिक्रमा कर स्वयं को धन्य मानते हैं। पर्वत के चारों ओर परिक्रमा के लिए पक्का मार्ग बना हुआ है जिसकी परिधि लगभग ४.५० कि. मी. है।

लक्ष्मण पहाड़ी : यह पहाड़ी कामदगिरि के पास ही स्थित है। वनवास के समय लक्ष्मण जी इसी पहाड़ी में श्रीराम और माता जानकी की रक्षा में प्रहरी के रूप में खड़े रहते थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामघाट : चित्रकूट पर्वत से लगभग डेढ़ कि. मी. पूर्व पयस्विनी नदी के तट पर निर्मित रामघाट भक्तों एवं श्रद्धालुओं के लिए बड़ा ही पवित्र स्थान है। इस घाट के विषय में यह दोहा अत्यन्त प्रसिद्ध है—

चित्रकूट के घाट पर भई संतन की भीर,
तुलसिदास चंदन घिसे, तिलक करें रघुबीर।

रामघाट के ऊपर अनेक मन्दिर व मठ हैं जिनमें श्री मत्यंगयेन्द्र (मदगंजन स्वामी) शंकर जी का मन्दिर अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है।

प्रमोदवन : रामघाट से लगभग एक कि. मी. दक्षिण चित्रकूट सतना मार्ग पर पयस्विनी तट पर यह स्थान स्थित है। इसमें श्री नारायण भगवान का मंदिर है, जिसके चारों ओर लगभग तीन सौ कोठरियां बनी हुई हैं। इन कोठरियों को रीवा नरेश ने किसी दैवी बाधा की शांति के लिए तीन सौ पंडितों द्वारा अनुष्ठान कराने हेतु बनवाया था।

जानकी कुंड : यह स्थान प्रमोदवन से लगभग एक कि. मी. दक्षिण स्थित है। यह अत्यन्त रम्य एवं मनोहारी है। यहां विरक्त महात्माओं की सैकड़ों गुफाएं एवं कुटीरें हैं। पयस्विनी के जल में यहां असंख्य दीर्घकाय मछलियां तैरती रहती हैं, जो कुछ क्षणों के लिए हमारे मनोरंजन का साधन बन जाती हैं।

कहा जाता है कि वनवास काल में जानकीजी यहां नित्य स्नान करने आती थीं इसीलिये इसका नाम जानकी कुंड पड़ा।

स्फटिक शिला : यह स्थान जानकी कुंड से लगभग दो कि. मी. दक्षिण सघन विटपावली से आच्छादित पयस्विनी के तट पर है। यहां एक विशाल शिला-खंड पर भगवान राम के चरण-चिन्ह अंकित हैं। इसी शिला पर बैठी हुई भगवती सीता पर इंद्र पुत्र जयंत ने काक का रूप धारण कर चंचु प्रहार किया था।

अनुसूइया आश्रम : जानकी कुंड से लगभग पंद्रह कि. मी. दक्षिण स्थित महासती अनुसूइया तथा महर्षि अत्रि की तपश्चर्या का यह पवित्र स्थल अनुसूइया आश्रम के नाम से विख्यात है। इसकी प्राकृतिक छटा निराली है। यहां अत्रि, अनुसूइया तथा उनके पुत्र भगवान दत्तात्रेय, दुर्वासा और चंद्रमा की मूर्तियां स्थापित हैं। प्राकृतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक—तीनों दृष्टि से यह स्थान महत्वपूर्ण है। यह वही स्थान है, जहां महासती अनुसूइया ने महारानी सीता को 'पतिव्रत धर्म' का दिव्य उपदेश देकर नारी जाति का मार्गदर्शन किया था।

गुप्त गोदावरी : यह तीर्थ स्थल अनुसूइया आश्रम से लगभग ६ कि. मी. पश्चिम में स्थित है। एक लंबी गुफा से निरंतर जल प्रवाहित होता रहता है और वह कुंडों पर गिरकर वहीं लुप्त हो जाता है। यहां प्रकृति की कारीगरी देखते ही बनती है। जलवाही गुफा के बगल में एक विशाल गुफा है जिसका ऊपरी भाग काफी ऊंचा है। छत

(शेषांश पृष्ठ ९५ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

□

प्रेमचंद : दृष्टि की तलाश में बेचैन लेखक

एक लेखक की सबसे बड़ी साध क्या हो सकती है? सही दृष्टि की तलाश, और शायद यही सबसे मुश्किल काम है उसके लिए। भोगते हुए और रचते हुए दृष्टि को दोहरे स्तर पर पाना तलवार की धार से दुबारा गुज़रना है। किताबी आंखें पाकर जो लेखक आप्तकाम हो जाता है–वह इस दोहरी यातना से बच तो जाता है, मगर उसकी रचनाएं ज़िंदगी के किनारे से ही गुज़र जाती हैं–उसमें कोई क्षोभ पैदा नहीं करतीं।

जीवनानुभव के दौर में, सही दृष्टि पाने तक, लेखक की कलम स्थगित नहीं रहती, क्योंकि रचना खुद भी राह खोजने की एक प्रक्रिया है। इस बीच कई कच्ची कृतियां लिखी जाती हैं–अलबत्ता, एक ज़द्दोजहद तब भी उनमें देखी जा सकती है। मगर वे लेखक के मूल्यांकन की कसौटी नहीं हो सकतीं, केवल उसके संघर्ष और यात्रा की दिशा बता सकती हैं।

संस्कार और परिवेश से जूझता हुआ लेखक हमारे बहुत करीब होता है क्योंकि वही यह विश्वास जगा सकता है कि उसने जो पाया है, वह पाया जा सकता है। एक लोकान्वेषी लेखक, जिसका समाज खुद रूढ़ियों, आत्महीनता, समझौता-परस्ती और तरह-तरह की विसंगतियों से घिरा हो–बादशाह या न्यायाधीश की तरह अलग-थलग बैठ कर फ़ैसले नहीं सुना सकता। वह मनुष्य के अंतर्विरोधों और मजबूरियों में खुद शामिल होता है–एक सहयात्री और मित्र की तरह, वह अपने समाज से इस तरह घुल-मिल जाता है, गोया उसका हिस्सा हो। प्रेमचंद इसी तरह के लेखक थे और यह बात अमृतराय के साथ घटी एक दिलचस्प घटना में बहुत उभर कर आयी है। अमृतराय के अनुसार प्रेमचंद किसी नये लेखक की रचना पढ़कर उसकी तारीफ के पुल बांध देते थे। इस तरह उसके करीब आने के बाद वे कभी उसकी एकाध खामी भी गिना देते। एक बार अमृतराय ने प्रेमचंद को अपनी एक कहानी भेजी जिसके अंत में सभी पात्रों की मौत हो गयी थी। प्रेमचंद उस समय बम्बई में थे। अमृतराय ने कहानी पर उनकी राय मांगी थी। पहले तो प्रेमचंद ने इस नये लेखक की खूब पीठ ठोंकी, फिर बहुत दबी ज़बान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में लिखा कि, 'अगर इसमें इतनी मौतें न हुई होतीं तो ज़्यादा अच्छा होता।' बात यहीं खत्म नहीं हुई। इसके आगे उन्होंने जो बात लिखी वह उनके कुल व्यक्तित्व को उजागर कर देती है–'लेकिन, वैसे मैं खुद इस कमज़ोरी का शिकार हूं।' एक नौसिखुए लेखक के स्तर पर अपने को उतार कर रख देना, खासकर उसकी ख़ामियों में अपने को शामिल दिखाना प्रेमचंद के मूल रचना-चरित्र की ओर इशारा करता है। होरी से प्रेमचंद इसीलिये एकाकार हो सके है कि उसे अपनी तमाम खूबियों और खामियों सहित रचते हुए वे खुद को रचने जैसा महसूस करते हैं। वास्तव में लेखक अपनी सृष्टि में स्रष्टा की तरह नहीं, सृष्टि की तरह शामिल होकर ही विश्वसनीय हो सकता है। शायद उपदेशक और लेखक में यही मौलिक अंतर है। प्रेमचंद साहित्य में जीवन का 'प्रतिबिंब' देखना चाहते थे, उसी को यथार्थ मानते थे जिसे 'साधारण बुद्धि यथार्थ समझे।' और साधारण स्तर पर उतरे बिना साधारण बुद्धि तक पहुंचना एक लेखक के लिए संभव नहीं है।

इसके ये मानी नहीं हैं कि समाज और व्यक्ति की कमज़ोरियों से सामंजस्य बिठा लेने से रचना-कर्म पूरा हो जाता है। अगर ऐसा संभव हो तो लेखक अगली रचना में पिछली कृति से हटकर या उसके खिलाफ खड़ा नहीं हो सकता। जब तक व्यक्ति-मन एक समस्त मन से टक्कर नहीं

लेता (जो खुद उसका भी मन है)– तब तक कर्तृत्व को एक सार्थक दिशा और दृष्टि नहीं मिल सकती। एक श्रेष्ठ समाज-परक रचना शांति और सामंजस्य के भीतर से नहीं, द्वंद्व के भीतर से जन्म लेती है। क्योंकि यथार्थ का दूसरा नाम द्वंद्व ही है, जो पाठक के मन में भी संघर्ष को जन्म देता है। हां, इस अहसास के लिए भी द्वंद्व का सामान्यीकरण होना ज़रूरी होता है। तभी पाठक की आलोचना-दृष्टि उद्दीप्त हो पाती है। रचना-प्रक्रिया का रुझान और लेखक के इरादे इसे धार देते हैं और खुद रचना के सहारे जीवन के अनुभव खुलते जाते हैं; इसी से लेखक की उपलब्धि पाठक की उपलब्धि हो पाती है। इसके विपरीत आदर्शवादी रचनाएं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामंजस्य की तलाश करते हुए पाठक की आंखें नहीं खोलतीं, उसे हाथ पकड़कर ठिकाने पर पहुंचाने की कोशिश करती हैं, नतीजे में काल्पनिक परितोष के बावजूद विद्रोह और संघर्ष की आग उसके भीतर पैदा नहीं होती।

जीवन में लेखक के शामिल होने की दूर तक खींचना ठीक नहीं है। यथार्थ जीवन की नारकीय यातनाएं हमारे समाज के अधिकांश लोग भोगते हैं। उतनी या उस स्तर की समस्याओं से खुद उलझ पाना लेखक के लिए व्यवहार रूप में भी संभव नहीं है। रचना का अधिकांश हिस्सा स्वानुभव से अधिक रचनात्मक साक्ष्य और संवेदनात्मक अनुभव से उपजता है। यही लेखक का जीवनानुभव है, जिसे वह इस तरह पेश करता है कि 'साधारण बुद्धि उसे यथार्थ समझे'। यह लेखक के लिए कठिनतम कर्म है, जिसका बयान नहीं किया जा सकता। क्योंकि भोगने की एक सीमा होती है और भोगने के बाद उससे मुक्ति भी मिल सकती है, लेकिन संवेदना में भोगने की कोई सीमा नहीं है। ऐसे मन के लिए अपार यातनाएं भयानक व्यूह रचे रहती हैं और अपनी पारदर्शी विशदता के साथ हर वक्त खड़ी होती हैं; स्थितियों के तमाम रेशे-रेशे और स्तर-स्तर खुल पड़ते हैं और लेखक घिर जाता है। यहां तक कि रचना खुद भी लेखक को मुक्त नहीं कर पाती क्योंकि रक्तबीज की तरह नयी समस्याएं और सर्जनात्मक असंतोष दुगुने उत्साह से उसे घेरे रहते हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रत्यक्ष अनुभव को नकारा जा रहा है बल्कि यहां सृजनात्मक अनुभव की व्यापकता और लेखक की यातना की ओर इशारा किया जा रहा है।

प्रेमचंद को लेकर इन तमाम बातों पर चर्चा करना ज़रूरी है क्योंकि आमतौर पर उनकी लेखन प्रक्रिया का बहुत सरलीकरण किया गया है। उन्हें प्रायः आदर्श-मंडित यथार्थ का लेखक कहकर उनके वास्तविक संघर्ष को नज़रअंदाज़ किया गया है। उनके जीवन को भी सपाट सीधा लकीर में खींच दिया जाता है। जबकि सच यह है कि प्रेमचंद एक कस्बे में संभ्रांत कुल के निम्न मध्यम वर्गीय घर में पैदा हुए थे। उन्होंने 'तिलस्मे होशरुबा', 'चंद्रकांता संतति' और पुराणों के अनुवाद से अपना अध्ययन शुरू किया था। और 'रुठी रानी', 'प्रेमा', 'संसार का अनमोल रत्न' जैसी नितांत आदर्शवादी, रोमांसिक और इतिहास-परक कथाओं से लेखन। वे पाठक के तौर पर यहां से चलकर रोम्यां रोला; चार्ल्स डिकेन्स और टालस्टॉय तक पहुंचे थे। दूसरी ओर लेखक के तौर पर वे 'गोदान', 'कफ़न', 'पूस की रात' तक आये थे। यह कोई मामूली यात्रा नहीं थी। यह लगातार अनुभव, प्रेक्षण और भीतरी कशमकश की एक ज़िंदा कहानी है और सिद्ध करती है कि प्रेमचंद मनुष्य की बेहतरी के लिए किसी अग्रगामी सत्य की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तलाश बराबर करते रहे।

मध्यमवर्गीय संस्कार और सुधारवादी आदर्श बराबर उनके पुरोगामी यथार्थ से टकराते रहे। समकालीन राष्ट्रीय आंदोलन और आर्य समाजी सुधार-संस्कार ने भी प्रेमचंद को यथेष्ठ प्रभावित किया, लेकिन उनका सर्जनात्मक मन इनके भीतर कुछ 'और' खोज रहा था। आदर्श को अगर प्रेमचंद की सर्जनात्मक स्वीकृति मिलती तो वे आदर्शवादी और सुधारवादी होकर उपदेशक की तरह नहीं दिखते, रचनाकार की तरह दिखाई देते; मगर ऐसी रचनाओं में वे लेखक कम उद्‌घोषक ज़्यादा हैं। असल में जब तक लेखक के सर्जनात्मक मन में कोई विचार या संवेदन; प्रतिरोधों के विरुद्ध पूर्णतः विजयी नहीं होता तब तक उसकी रचनाएं अपेक्षित ऊंचाई हासिल नहीं करतीं। सर्जनात्मक स्वीकृति ही रचना को धारदार और मार्मिक बनाती है। प्रेमचंद में इसके दो उदाहरण हैं एक तो उनका अधिकांश साहित्य जो आदर्श मंडित है, यथार्थवादी साहित्य की तुलना में ऊंचाई हासिल नहीं कर पाया; दूसरे, शहरी और कस्बाई जीवन पर लिखा उनका साहित्य, ग्राम-साहित्य की 'तुलना में' कमज़ोर है—जबकि वे स्वभावतः आदर्शवादी थे और उनका जीवन प्रायः कस्बों और शहरों में बीता था। इस बात को ज़रा फैला कर कहा जाये कि प्रेमचंद का अधिकांश साहित्य शहरी और कस्बाई परिवेश में रचित है और ज़्यादातर उसी समाज की समस्याओं से संबंधित है, लेकिन उनका श्रेष्ठ साहित्य वही है जो ग्रामीण जीवन से संबंधित है—जिसके वे साक्षी भर रहे। इसका कारण 'संवेदनात्मक साक्ष्य' और 'सर्जनात्मक स्वीकृति' है। यही लेखक का संपूर्ण आंतरिक व्यक्तित्व हुआ करता है। बहुत से लेखक हैं जो मूलतः ग्रामीण परिवेश से आये हैं, वे ग्राम-जीवन पर लिखते हैं, लेकिन उसकी नब्ज़ नहीं पकड़ पाते। याने वह उनका संसार भले हो, उनकी सर्जना का संसार नहीं है। दूसरे शब्दों में वह उनका 'संपूर्ण आंतरिक व्यक्तित्व' नहीं है।

प्रेमचंद की उन कथाओं में भी जहां वे मूलतः आदर्शवादी हैं, अगर यथार्थ जीवन का कोई टुकड़ा आ जाता है तो वह खदान के हीरे की तरह अलग चमक जाता है। जहां वे पाखंड, छल, विसंगति और शोषण का चित्रण करते हैं सहसा कलाकार हो उठते हैं। 'गोदान' जैसी रचना इतनी श्रेष्ठ इसीलिये है कि यहां प्रेमचंद का सृजन-मानस अपनी सम्पूर्णता में प्रतिफलित हुआ है, उनका सर्जनात्मक परिवेश और सर्जनात्मक विचार यहां एक जुट हो गये हैं।

सत्य किसी लेखक के लिए रेडीमेड या उतरा हुआ कपड़ा अथवा शाश्वत और स्थिर प्रमेय नहीं है, एक दहकता हुआ अनुभव है। प्रेमचंद कहते हैं—'जो कुछ स्वाभाविक है वही सत्य है'—और स्वाभा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकता गतिशील जीवन की सापेक्षता में ही तय होती है। इसलिए हर लेखक को अपने लिए खुद सत्य की खोज करनी पड़ती है। किसी 'इज़्म' का पल्ला पकड़ कर ही कोई लेखक महान स्रष्टा नहीं हो सकता। यह दीगर बात है कि लेखक द्वारा उपलब्ध सत्य पूर्व या समकालीन चिंतन से मेल खाता है। तब भी जीवन, परिवेश और उसके निजी अनुभवों और प्रतिक्रियाओं से विचार और सृजन प्रक्रिया के शेड्स बदल जाते हैं। लेखक का निजी स्पर्श उसे नये अर्थ और तेवर देता है। प्रेमचंद की रचनाओं में जो अंतर्विरोध, हमें अपना-सा लगता है, जो बुनावट मिलती है—वह आत्मशोधित सत्य का नतीजा है।

भारतीय और खासकर किसान-मानस के जो भी अंतर्विरोध हैं, उन्हें प्रेमचंद ने सृजन के स्तर पर जिया है। तभी वे उन्हें अपनी पूरी कलात्मक संवेदना के साथ विश्वसनीय बना सके हैं। इन अंतर्विरोधों के बावजूद इनसे उत्तीर्ण होने की लड़ाई लड़ पाना कितना कठिन संघर्ष है? खासकर तब जब कि लेखक का व्यक्तित्व भी अंतर्विरोधों का शिकार हो। प्रेमचंद ने महसूस किया कि एक आम भारतीय किसान परिश्रम के स्तर पर लड़ाकू है मगर भावात्मक स्तर पर कमज़ोर और भोला है। इसी वज़ह से तमाम निहित स्वार्थ; चाहे वे धर्म, पूंजी या सत्ता से संबंधित हों, उसे लीलते चले जाते हैं। क्योंकि शिकंजे चाहे जितने सख्त हों, संगठित मुकाबले से इन्हें छिन्न-भिन्न किया जा सकता है। मगर भारतीय किसान में प्रतिरोधी शक्ति प्राय: नहीं है, क्योंकि सर्वहारा होते हुए भी बजाय संगठित संघर्ष के वह उन मूल्यों के लिए समर्पित है जो उच्च प्रतिष्ठानों की रक्षा के लिए बने हैं।

प्रेमचंद की अधिकांश रचनाओं में अगर दु:खजीवी सर्वहाराओं की यातना है, और प्रतिरोध प्राय: नहीं है तो यह यथार्थ का ही प्रतिबिंब है (जो निश्चय ही सार्थक नहीं है।) एक काल्पनिक परितोष, हृदय परिवर्तन, और गतानुगतिक आदर्शवादिता का मुलम्मा चढ़ा कर उन्होंने अपने अधिकांश साहित्य में इसी आस्था को मजबूत किया है कि किसी ईश्वरीय विधान से ही काली रातें बीत जायेंगी और खुशनुमा सुबह उदित होगी। लेकिन अनवरत खोजी प्रेमचंद ने इसी मनुष्य को अपने विश्वास में लेते हुए, निष्कर्षों को बदला और लड़ाई की ज़रूरत बतायी। इस दौर में उन्होंने अपने को भी प्रतिरोध के लिए तैयार किया। तभी वे उसके गहरे कारणों में घुस कर सही नतीजे पर पहुंच सके। सेवासदन, गबन, कायाकल्प वगैरह से चलकर गोदान तक पहुंचना पाठक के लिए भी अपने अंतर्द्वंद्व पर विजय पाने की तरह है। प्रेमचंद की यात्रा के पड़ावों के रूप में हम प्रेमाश्रम, निर्मला, रंगभूमि, कायाकल्प और कहा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियों में 'दण्ड', 'अंतिम शांति' वगैरह को ले सकते हैं जहां रचनाकार अंतर्विरोध और विसंगतियों के बीच छटपटाते हुए भी गतिशील, संघर्ष की तैयारी करता है।

मनुष्य के भीतर जो दबी-छुपी अच्छाइयां हैं, उन पर आस्था रखना और उन्हें उभारना कोई साधारण बात नहीं है, लेकिन किसी दैवीय प्रेरणा, नैतिक उदात्तता या आत्मदमन के परिणामस्वरूप दुराचारी शोषक को बदल पाना अक्सर संभव नहीं है। क्योंकि दु:शक्तियां इतनी क्रूर होती हैं कि मनुष्यता की अपील उन पर कारगर नहीं होती। भारतीय मानस को यह बात सीधे-सीधे और दो-टूक तरीके से नहीं समझाई जा सकती। विभिन्न रचनाओं और स्थितियों से गुज़रते हुए वह खुद ही यह महसूस करे, तभी बदलाव के लिए तैयार हो सकता है।

लेखक से हम भले यह उम्मीद न करें कि वह नारे लगाये या लड़ाई का कोई फार्मूला दे, लेकिन उससे यह उम्मीद तो की ही जा सकती है कि वह सत्य पर आदर्शीकरण की नकाब न चढ़ाए और अपनी काल्पनिक संभावना (भले वह कितनी ही ईमानदार हो) के तहत संघर्षशील शक्तियों को कुंठित न करे। प्रेमचंद ने लगातार भोगते हुए और रचते हुए अंतत: यह महसूस किया था कि एक सजग लेखक को अपने पाठक को कहां ले जाना है या उसके साथ कैसा सलूक करना है?

'गोदान' में जिस तरह चौतरफा शोषक शक्तियां एक जुट हैं, उसी तरह शोषण के प्रकारों और शोषित व्यक्तियों का भी एक बहुत ही प्रासंगिक जमावड़ा उसमें है। किसान के शोषण को ही नहीं उसके संघर्ष और भटकाव को रेखांकित करने के लिए होरी, धनिया, और गोबर रचे गये हैं, जो मिलकर किसान का वृहत्तर प्रतीक बनाते हैं। होरी भारतीय किसान की अपरिमित सहनशीलता, सामाजिक-धार्मिक भीरुता और हाड़तोड़ मेहनत का प्रतीक है। धनिया उसके भीतर के विद्रोह को प्रतीकीकृत करती है जो स्वयं उसकी (किसान की) कमज़ोरी की वजह से कारगर नहीं होता। गोबर नई चेतना और मुक्ति मार्ग के नए आयाम खोजने की एक पराजित भूमिका भर है। क्योंकि किसान की नगरगामिता; शोषण से उसकी मुक्ति का कोई सही उपाय नहीं है, इसलिये कि एक ओर तो शहर पहुंच कर भी उसकी किसान-मानसिकता उसका पीछा नहीं छोड़ती; दूसरे शोषक यहां नई भूमिका और नए नामों में पहले से ही मौजूद हैं—फिर शहर की गंदी बस्तियां ग़रीब के लिए शहर कब हैं? यह सारा वैविध्य और अनुभव प्रेमचंद की सम्पूर्ण सर्जना का निचोड़ है और कई स्तरों पर शोषण की पड़ताल है। यह पड़ताल वे खंडत: करते रहे हैं, जो गोदान में घनीभूत हो गयी है।

गोदान प्रेमचंद की पूर्व रचनाओं की तरह किसी निष्कर्ष तक पाठक को नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुंचाता, उसके भीतर एक तीव्र संवेदना और शोषक-प्रतिष्ठानों के प्रति तीखी घृणा जगाता है. इस तरह पाठक रचना का हिस्सा बन जाता है और रचनाकार की उन खोजों में शामिल हो जाता है जो उसका अभिप्राय है। इस संपूर्ण निषेध और पराजय की वेदी में से ही वह अग्नि धधकती है जो आक्रोश को जन्म देती है; और रचना के इरादे पाठक के इरादे से एकतान हो जाते हैं।

यहां एक ज़रूरी सवाल पैदा होता है कि क्या यथार्थ सदैव निषेधमूलक होता है। विकृति, पतन या शोषण ही यथार्थ है? क्या हम जिन्हें 'आदर्श' कहते हैं–वह यथार्थ के रूप में कभी उपलब्ध होता ही नहीं? क्या सत्य की विजय, मनुष्य का हृदय-परिवर्तन, बेहतर व्यवस्था की स्थापना कपोल कल्पित है? अगर यह सब घटित होता है तो क्या यथार्थ की कोटि में नहीं आता? निश्चय ही ये सवाल गौर करने लायक हैं क्योंकि मनुष्य व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से कभी-कभी 'आदर्श' प्राप्त करता है, और साहित्य में भी 'यथार्थ' का चित्र उसी 'आदर्श' को प्राप्त करने का भीतरी प्रयत्न है। मुक्तिबोध जमीन के नीचे जिस 'तेजस्क्रिय रेडियो एक्टिव' की तलाश करते हैं–वह इसी बेहतर व्यवस्था की तलाश है। लेकिन 'आदर्श' बहुत सीमित है और विरोधी निषेध मूलक स्थितियां और निहित स्वार्थ उस पर हावी रहते हैं इसलिये संघर्ष का एक अनवरत सिलसिला जारी रहना ज़रूरी है। यथार्थ इसी सिलसिले को जारी रखता है, वह किसी 'आदर्श' को अंतिम नहीं मानता क्योंकि वह न तो चुनौती से परे है और न इस बात का सूचक है कि प्रतिरोधी ताक़तें ख़त्म हो चुकी हैं। इसलिए वह मानता है कि जो प्राप्तव्य है–भले प्राप्त हो जाये–लेकिन उसकी तुलना में अधिक ताक़तवर, विकट, भयावह और विनाशकारी रूप में 'यथार्थ' सामने खड़ा है। इसलिये उसे हर समय रेखांकित करना ज़रूरी है, कि कहीं ऐसा न हो जाये कि आदर्श को अंतिम मानकर हम आश्वस्त हो जायें। आदर्शवादी साहित्य आदर्श की उपलब्धि तो स्वीकार करता है किन्तु उसके विरुद्ध खड़ी नई भयावह संभावनाओं को निरस्त कर, संघर्ष को शिथिल करता है।

अपनी कई आदर्शवादी रचनाओं से गुज़रते हुए शायद प्रेमचंद इस तथ्य से बराबर परिचित हो रहे थे कि उदात्त विचारों के तहत निकाले गये नतीजे बहुत सीमित हैं। यथार्थ जगत की विसंगतियां कहीं अधिक निष्करुण और भयावह हैं। आदर्श के सहारे जीवन की व्यापक परिस्थितियों का सही चित्र खड़ा नहीं होता न एक चौकस कलाकार का उत्तरदायित्व ही पूरा होता है। किसी भी यथार्थदर्शी कलाकार की तरह प्रेमचंद अंधेरे और कुत्सित जगत का नक्शा खींचते हुए द्युतिकरण की तलाश कर मैंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई कोताही नहीं करते। उन्होंने गोदान जैसी रचना में भी यही किया है मगर यह किया है अण्डर करंट्स की तरह। यहां तक आते-आते आदर्श उनके लिए सुविधा नहीं रहा, चुनौती बन गया था। इसीलिये वह पाठक को भी चुनौती देता है कि वह लेखक के साथ ही इन स्थितियों से संघर्ष करे और सर्वग्रासी शोषण से मनुष्य को मुक्त करने की कोशिश में लग जाये। सुबह का इंतज़ार करने से अंधेरी रात नहीं बीतेगी उसे जबरदस्ती मेहनत से उलटना होगा।

असल में प्रेमचंद की जो एक गहन, विराट और कष्टप्रद यात्रा है वह उनके मन की गहरी उथल-पुथल है; अंत में वे जिन निष्कर्षों तक पहुंचे हैं वे सहसा उत्पन्न नहीं, अन्वेषित हैं और यही वजह है कि पाठक को सतही और अप्रत्याशित नहीं लगते, बल्कि वह भी लड़ते-झगड़ते लेखक के साथ यहीं पहुंचता है। यही कारण है कि प्रेमचंद किसी वाद के सहारे नहीं, जीवन के सहारे समझे और पढ़े जाते हैं। वे उस समाज की पूरी इज्ज़त करते हैं जो अपनी कमज़ोरियों का शिकार है। वे अपने को उससे ऊपर उठा हुआ महसूस नहीं करते। इसलिये उनकी रचनात्मक बुनावट में पाठक का मन खुद बखुद बुनता जाता है।

□

(पृष्ठ ६७ का शेषांश)

फिर भी उन्होंने अपना कर्तव्य पूरा किया था।

तभी ईश्वर ने हल्की-सी फूंक मारी, जिस तरह कि आदमी मोमबत्ती को बुझाने के लिए फूंक मारता है, और उसी समय वे तीनों आत्माएं गायब हो गयीं। इस प्रकार ईश्वर ने उन्हें नष्ट कर दिया था।

तब ईश्वर ने कहा, 'मैं कई बार यह सोच कर हैरान हुआ हूं कि लोग यह क्यों समझते है कि मैं अनैतिक सम्बन्धों को इतना महत्व देता हूं। वास्तव में, मैंने मनुष्य की इस कमज़ोरी को हमेशा सहानुभूति से देखा है।'

फिर, उसने दार्शनिक की ओर नज़र मोड़ी, जो अपने प्रश्न के उत्तर की प्रतीक्षा में अभी तक खड़ा था, और कहा :

'तुम्हें मानना पड़ेगा कि इस मौके पर मैंने अपने सर्वशक्तिमान और सर्वकृपालु होने का सबूत पेश किया है।'

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युगान्तरकारी चित्रकार रवि वर्मा की प्रपौत्री रुक्मिणी वर्मा से एक भेंटवार्ता

☐ विजय शंकर

श्रीमती रुक्मिणी वर्मा त्रावणकोर की राजकीय परिवार से संबंधित हैं, जिनकी देन कला के क्षेत्र में भुलाई नहीं जा सकती। रुक्मिणी वर्मा भारतीय कला के पिता राजा रवि वर्मा की पड़पोती हैं। इसी सौभाग्य के कारण उनको चित्रकला के क्षेत्र में अन्य किसी से अध्ययन करने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ी। पारिवारिक वातावरण कलात्मक होने के कारण रुक्मिणी को बचपन से ही चित्रकला से लगाव रहा है। इनके पतिदेव देवीप्रसाद वर्मा भी राजकीय परिवार से संबंधित हैं, जिन्होंने श्रीमती वर्मा को हर कदम पर प्रोत्साहन दिया है। रुक्मिणी वर्मा के चित्र भारत में ही नहीं, विदेशों में भी प्रदर्शित किये गये हैं।

सन १९७६ में लंदन में रुक्मिणी वर्मा की चित्रकलाओं की प्रदर्शनी का उद्‌घाटन लार्ड मॉउंटबेटन द्वारा किया गया था। मॉउंटबेटन ने इस अवसर पर कहा था, 'यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है कि इस कलाकार ने कला को स्वयं ही सीखा। उनकी चित्रकलाएं देखने से स्पष्ट हो जाता है कि आज के श्रेष्ठ कलाकारों में उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है।..... इस प्रदर्शनी का उद्‌घाटन करना मेरे लिए सम्मानपूर्ण है। ऐसी सुंदर कला हम आजकल बहुत कम देखते हैं।'

मैंने श्रीमती रुक्मिणी वर्मा से कुछ सवाल किये, उनका उत्तर निम्न प्रकार है :

कई बरसों से आप कला के क्षेत्र में लीन हैं, क्या आप इस प्रकार की जिंदगी से संतुष्ट हैं?

'मुझे किसी प्रकार की अतृप्ति या असंतोष नहीं है। आरंभ में मैंने नृत्य सीखा, लेकिन मुझे चित्रकला के माध्यम से पूर्ण संतोष मिलता है।'

क्या पौराणिक कथाओं को चित्रित करना आप महत्त्वपूर्ण मानती हैं?

'पौराणिक कथाओं को मैं विशेष महत्त्व देती हूं, लेकिन मैं ग्रामीण जीवन को भी चित्रित करती हूं। प्रायः पौराणिक कथाओं को लोग काल्पनिक मानते हैं, लेकिन मैं चाहती हूं कि साधारण मनुष्य भी इन चित्रों के आकारों से सामंजस्य स्थापित करने का प्रयत्न करें।'

आप अपने चित्रों के नंगेपन को किस दृष्टि से देखती हैं?

'मैंने अपने चित्रों में जहां भी नंगेपन को प्रकट करना ज़रूरी समझा है, वहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने चित्रों को नंगा ही दिखाया है। प्राचीन लोग हमेशा नंगे ही रहते थे, लेकिन जब से नीति, विद्या का प्रचार होने लगा, तब से लोग कपड़ों की उपयोगिता समझने लगे हैं। यदि मैं पेड़ों को कपड़ों द्वारा चित्रित करूं, तो क्या यह ठीक लगेगा? नंगापन तो स्वाभाविक है। मैं तो एक कलाकार होने के कारण सभी चीजों को सुंदरता की नज़र से ही देखती हूं।'

क्या आप रवि वर्मा से प्रभावित हैं?

'रवि वर्मा विक्टोरियन नीति विद्या से प्रभावित थे, लेकिन मेरी शैली अलग है।'

आप दूसरे चित्रकारों से प्रभावित हैं?

'मैं किसी चित्रकार से प्रभावित नहीं हूं। किसी चित्रकार से प्रभावित होने पर हम प्रायः उसकी नकल करने का प्रयत्न करते हैं। यह मैं नहीं चाहती। लेकिन मुझे रेमब्रांडट, रुबेन्स और फ्लेमिश स्कूल अच्छा लगता है।'

आपकी चित्रकलाओं की प्रदर्शनी कहां-कहां हुई है?

'विदेशों में कई बार प्रदर्शनी हुई है।

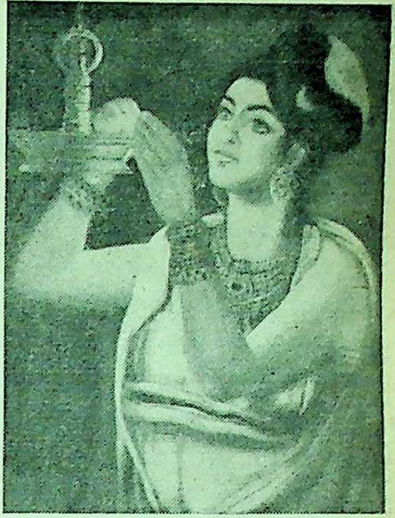

प्रतीक्षा : रुक्मिणी वर्मा

वेस्ट जर्मनी, श्रीलंका, अमेरिका जैसे देशों में कई लोगों ने मेरे चित्र खरीदे हैं।'

इसी महीने दिसंबर में श्रीमती रुक्मिणी देवी के चित्रों की प्रदर्शिनी ताज आर्ट गैलरी, बंबई में आयोजित की जा रही है।

–८, लाल-लाल सोसायटी, दहाणुकरवाडी, कांदिवली (पश्चिम), बंबई–४०००६७

□

क्षमा-याचना

एक बार मार्क ट्वेन कलाकार विसलर के स्टुडियो की सैर कर रहे थे, सहसा उन्होंने अपना हाथ किसी कैनवस पर रख दिया। इस पर विसलर चिल्लाये–'ओह! इसे मत छुएं। आप देखते नहीं, यह अभी सूखा नहीं!'

'ओह कोई बात नहीं!' मार्क ने भोलेपन से उत्तर दिया, 'मैंने हाथों पर दस्ताने पहन रखे हैं।'

–सुरजीत

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृष्ठ ७१ का शेषांश)

ड़िया आदि प्रदेशों में बौद्ध धर्म का प्रसार हो चुका था, और बौद्ध धर्म-प्रचारक वहां बौद्ध धर्म की पताका फहरा चुके थे। इस शिलालेख में यह भी कहा गया है कि यूनानी राजा एण्टिओक्स ने अशोक के साथ संधि की थी, और यहूदी लोगों के साथ भी उसके मैत्रीपूर्ण संबंध थे।

पाकिस्तान के भूतपूर्व विदेश-मंत्री ज़फ़रुल्ला ख़ान ने कई वर्ष पूर्व एक लेख लिखा था, जिसमें उन्होंने बताया था कि 'ईसा जब सूली के बाद हिन्दुस्तान आये थे, तो उनके साथ उनके माता-पिता भी थे। भारत-प्रवेश के बाद, 'पिण्डी प्वाइन्ट' में उनकी माता मेरी का देहान्त हुआ, और उनकी कब्र आज भी वहां मौजूद है। बाकी उम्र उन्होंने कश्मीर में गुज़ारी, और वहीं उनका निधन हुआ। उनकी कब्र आज भी वहां मौजूद है। कश्मीर में रहते समय, उन्होंने माली का काम भी किया था।'

कश्मीरवासी अज़ीज़ कुरेशी ने, जो 'जोशानी' नामक पत्र के संपादक हैं, 'क्राइस्ट इन कश्मीर' नामक एक पुस्तक लिखी है, जिसमें उन्होंने ईसा के कश्मीर में बिताये गये वर्षों पर अच्छी रोशनी डाली है। इस पुस्तक में वर्णित तथ्य उन्होंने कश्मीर के प्राचीन ग्रंथों से संग्रहीत किये थे।

अन्य प्रमाणों से यह ज्ञात होता है कि अपने पहले भारत-प्रवास के दौरान, ईसा ने योग और द्वैतवाद का विशद अध्ययन किया था। योग की अनेक विधियों में निपुण होकर ही वे सूली पर चढ़ाये जाने के बाद भी अपने शरीर को जीवित रखने में सफल हो सके थे। और, द्वैतवाद में अपनी आस्था होने के कारण ही उन्होंने परमेश्वर को मनुष्य तथा सृष्टि का जन्मदाता और कर्त्ता माना था, और इसी कारण, वे अपने को 'भगवान का पुत्र' कहते थे। गीता, वेद तथा उपनिषदों के उनके उपदेशों के आधार पर, उन्हें एक 'निवृत्ति प्रधान संन्यासी' माना जा सकता है।

□

नियम के पाबंद

डॉ. विश्वेश्वरैया नियम के बड़े पक्के थे। 'भारत रत्न' की उपाधि लेने वे दिल्ली आये थे। सरकारी मेहमान के नाते राष्ट्रपति भवन में ठहरे थे। एक दिन सुबह राष्ट्रपति राजेंद्र बाबू से बोले—'अब मुझे इजाज़त दीजिये।'

राजेंद्र बाबू ने कुछ दिन और ठहरने का निवेदन किया। लेकिन उन्होंने कहा—'चूंकि राष्ट्रपति भवन का नियम है कि कोई व्यक्ति यहां तीन दिन से अधिक नहीं ठहर सकता, अतः अब मैं न रुक सकूंगा।' राजेंद्र बाबू ने और ज़ोर दिया—'यह नियम पुराना है, इस पर ध्यान न दीजिये और यह आप पर नहीं लागू होता।' लेकिन डॉ. विश्वेश्वरैया ने विदा ले ली तथा कहीं और ठहरने चले गये।

— शुकदेव प्रसाद

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृष्ठ ८३ का शेषांश)

पर एक ऐसा पत्थर लटका हुआ है जो हिलता रहता है। कहते हैं कि यही बालि की गुफा थी।

भरतकूप : यह श्री कामदगिरि से लगभग ८ कि. मी. पश्चिम तथा झांसी-मानिकपुर रेलवे मार्ग पर 'भरतकूप' स्टेशन से १.५ कि. मी. दक्षिण में है। यह वही ऐतिहासिक कूप है, जिसमें भरतजी ने श्री रामचंद्र जी के अभिषेकार्थ लाये हुए समस्त तीर्थों का जल डाला था।

हनुमानधारा : यह स्थान रामघाट से लगभग ३ कि. मी. दूर पूर्व में स्थित है। यहां पर श्री हनुमानजी की भव्य मूर्ति स्थापित है।

पर्वत के भीतर से एक ऐसा प्रपात फूट निकला है, जिसकी सूंड जैसे आकार की निर्मल जलधारा श्री हनुमान जी की बायीं भुजा पर पड़ती है। मूर्ति के पास तक पहुंचने के लिए नीचे से ३६० सीढ़ियां बनी हुई हैं।

इस पर्वत श्रेणी में हनुमानधारा के ऊपर 'सीता रसोई' तथा 'नरसिंहधारा' नामक स्थान भी दर्शनीय हैं।

इसके अतिरिक्त चित्रकूट में बांकेसिद्ध, कोटितीर्थ और देवांगना आदि अन्य अनेक दर्शनीय स्थल हैं। ये सभी स्थल अपनी पवित्रता एवं अनुपम प्राकृतिक सुषमा के लिए प्रसिद्ध हैं।

वाल्मीकि, कालिदास और गो. तुलसीदास आदि सभी कवियों ने मुक्त कंठ से चित्रकूट का गुणगान किया है। वाल्मीकि जी ने चित्रकूट का महात्म्य का वर्णन करते हुए लिखा है –

महर्षि सेवितः पुण्यः पर्वतः शुभदर्शनः।
यावता चित्रकूटस्य नरः शृंगाण्यवेक्षते
कल्याणानि सभाधत्ते न मोहे कुरुते मनः।

और इसी प्रकार गोस्वामी तुलसी दासजी ने भी निम्नांकित शब्दों में चित्रकूट की प्रशंसा की है –

चित्रकूट जनु अचल अहेरी।
चुकै न घात मार मुठभेरी।
सुरसरि धार नाम मन्दाकिनि।
जो सब पातक धौतक डाकिनि।।

(रामचरित मानस: अयोध्याकांड)

०००

चित्रकूट वास्तव में दुनिया का सबसे बड़ा तीर्थ है। दुनिया के अन्य तीर्थ हमें भोग की प्रेरणा देते हैं, किंतु चित्रकूट त्याग की प्रेरणा देता है। त्याग दैवी गुण है तथा स्वार्थ दानवीय। और चूंकि चित्रकूट हमें त्याग सिखाता है इसलिये यह देवभूमि है।

–विभा-कुटीर, रेलवे माल गोदाम रोड,
चित्रकूटधाम, करवी, बांदा, उ. प्र.

□

जब मनुष्य अपनी समस्त कामनाओं को त्याग कर अपनी इच्छा शक्ति, ममता और अहंकार को वश में कर लेता है, तभी उसे सच्चे सुख की प्राप्ति होती है। **–गीता**

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालकथा :

पहला बड़ा दिन : क्रिसमस

☐ भारती शर्मा

जिन ईसा की याद में प्रति वर्ष २५ जनवरी को 'बड़ा दिन' मनाया जाता है, उनके जन्म की कहानी।

सोलह साल की एक सुंदर लड़की थी। उसका विवाह उत्तरी लेस्टाइन के एक गांव के एक निर्धन, तरुण बढ़ई से तय हुआ।

गांव का नाम था—नज़रथ, और तरुण बढ़ई का नाम था जोसेफ। लड़की का नाम था मारिया। कुछ लोग उसे उस समय मेरी भी कहते थे।

एक रात ग्रैब्रियल नामक देवता ने मेरी के सामने प्रकट होकर कहा, 'भगवान तुझ पर प्रसन्न हैं, मेरी! तू शीघ्र ही एक पुत्र को जन्म देगी, जो जीसस के नाम से जाना जायेगा।'

मेरी ने कहा, 'मैं प्रभु की इच्छा के आगे नतमस्तक हूं।'

उसके बाद गैब्रियल ने जोसेफ़ के सामने प्रकट होकर कहा 'जोसेफ़! तुम्हारी होने वाली पत्नी 'पवित्र रूह' के पुत्र जीसस की माता बनने वाली है। किन्तु इस कारण तुम्हें मेरी से नाराज़ होने की आवश्यकता नहीं है। जीसस के जन्म के बाद तुम ही मेरी के पति बनोगे।'

जब मेरी जीसस को जन्म देने वाली थी, तब रोम के सम्राट सीज़र ने एक हुक्म जारी करवाया कि सबको अपने-अपने घर वापस जाकर कर देने होंगे। इस शाही फ़रमान के बाद, मेरी और जोसेफ़ बेथेलहेम में, अपने सब रिश्तेदारों के लिए अजनबी से हो गये, क्योंकि कोई उन्हें शरण देने को तैयार न था।

समय आने पर मेरी ने जीसस को जन्म दिया।

दो वर्ष बाद, मेसोपोटामिया के कुछ ज्ञानी पुरुषों को, जो ज्योतिषी भी थे, गणना से पता चला कि इस्राइल में एक बड़े राजा ने जन्म लिया है। वे एक चमकते सितारे की सहायता से मार्ग-निर्देशन प्राप्त करते-करते, इस्राइल की ओर बढ़े।

तभी, एक देवदूत ने जोसेफ के सामने प्रकट होकर उसे चेतावनी दी कि राजा हैरोड जीसस को मारने की योजना बना रहा है। जोसेफ ने फ़ौरन अपनी प्रत्नी और अपने गधे के साथ मिस्र की ओर प्रयाण किया, ताकि वे राजा हैरोड के चंगुल में न आ सकें।

इस प्रकार, १९८३ वर्ष पूर्व, पहला बड़ा दिन (क्रिसमस) मनाया गया।

☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

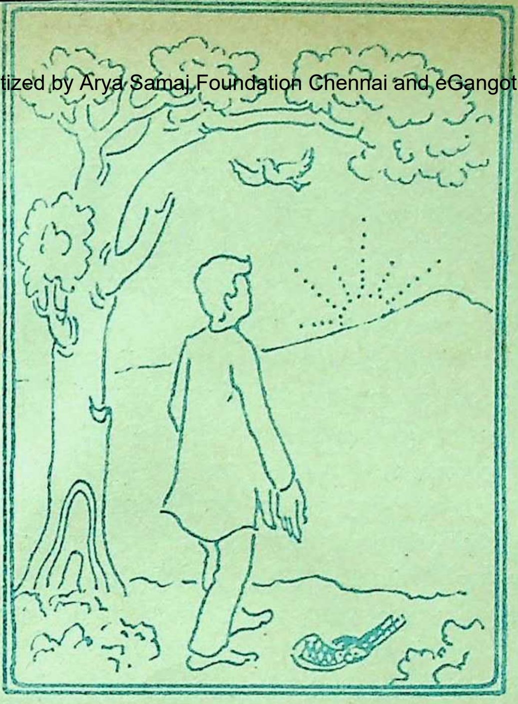

मुहम्मद हजाज़ी की ईरानी कहानी

मरने के लिए बहुत समय पड़ा है

कुछ दिन हुए एक मित्र मेरे पास आया। चेहरे से परेशानी के चिन्ह स्पष्ट थे। भौंहें सिकुड़ी हुईं। नाक खिंची हुई। गाल कुछ अन्दर को धंसे हुए और निचले होंठ के दोनों किनारे लगातार नीचे की ओर ढलक रहे थे। वह कुरसी पर बैठ गया।

उसकी व्यग्रता देखकर मुझसे संयत न रहा गया। तत्काल ही पूछ बैठा—'कहो, क्या बात है? कौन-सी विपदा आ पड़ी है?

कुछ देर उसने मौन धारण रखा और मेरी ओर घूरता रहा। फिर कहने लगा—'मैं इसलिये यहां आया हूं कि तुमसे आत्महत्या करने का कोई उत्तम ंग पूछ सकूं।'

यह सुनकर मैं अति विस्मित हुआ और उससे पूछा—'पहले यह बताओ कि यह विचार तुम्हारे मस्तिष्क में आया कैसे? क्योंकि आमहत्या का ढंग निश्चित करने से पहले यह पता लगाना आवश्यक

रूपांतर : सुरजीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि जीवन से इतनी निराशा और बेज़ारी का कारण क्या है?'

उसके होंठ आपस में मिले और उसने बड़ी बेपरवाही और उपेक्षा से कहा—'मैं सोच भी नहीं सकता था कि तुम ऐसे शोचनीय अवसर पर भी मजाक करोगे। मेरा विचार था कि तुम्हारी नज़रों में मेरा कुछ महत्व है, पर अब पता चला कि तुम मुझे बच्चा समझते हो। बड़े खेद की बात है। आखिर इंसान अपनी मुसीबतें किसके सामने बयान करे। ऐसा व्यक्ति कहां से आये जो अपने मित्र को वही महत्व दे जो स्वयं अपने आप को देता है.....।'

अभी वह कुछ और कहना चाहता था कि आंसू उसकी आंखों में भर आये और आवाज़ कंठ में अटक कर रह गयी। मैंने अवसर की नज़ाकत भांप कर तत्काल ही स्वयं को उदास और दुखी-सा बना लिया और कहा—'यदि तुम्हारा सही अर्थों में कोई मित्र है तो वह मैं हूं। यदि कोई सबसे अधिक तुम्हारी बुद्धिमानी का कायल है तो वह भी मैं ही हूं, पर जो प्रश्न तुमने किया है, उसका उत्तर देना सरल नहीं, क्योंकि मैंने कभी आत्महत्या का अनुभव नहीं किया है और न यह जानता हूं कि इस क्रिया के लिए कौन-सा ढंग अधिक अच्छा और सरल है। और खेद की बात यह है कि जिन लोगों ने आत्म-हत्या की है या किसी ढंग से अपने प्राणों की हत्या की है, वह इस संसार में पुनः नहीं आये ताकि अपने अनुभव का हाल हमसे कह सकते और आत्महत्या के समय उनकी जो भावनाएं थीं, उनका स्पष्टीकरण कर सकते। पर इतना अवश्य है कि मौत जितनी तेज़ी से होगी, उतनी ही उत्तम होगी। इस दृष्टि से शायद सबसे सरल ढंग यह है कि स्वयं को गोली मार ली जाये, पर शर्त यह है कि गोली ठीक दिमाग या दिल में लगे, क्योंकि मैं एक ऐसे व्यक्ति को जानता हूं जिसने अपने एक कान में गोली मारी, और वह सूराख करती हुई दूसरे कान से बाहर निकल गयी। परिणाम यह हुआ कि वह सदा के लिए बच गया। इसमें संदेह नहीं कि वह लोगों की बुरी-भली और पाप भरी बातों को सुनने से बच गया, पर दुबारा उसमें आत्महत्या करने का साहस पैदा न हो सका। अब यदि वह आत्महत्या की ओर कोई कदम पुनः उठाना चाहता है तो प्रायः उसका हाथ कांप जाता है और गोली कभी निशाने पर नहीं लगती। याद है कि इंसान के मन में यदि आत्महत्या के बारे में कोई भय पैदा न हो तो यह क्रिया उसके लिए सरल हो जाती है।'

मैंने कुछ रुककर फिर कहा—'मेरे पास एक पिस्तौल है। यदि तुम्हें चाहिये तो दे दूं?'

कहने लगा—'बड़ी कृपा होगी।'

अस्तु मैंने बेडरूम से पिस्तौल लाकर उसके हवाले कर दी और उसके चलाने का ढंग भी बता दिया। पर सत्य तो यह है कि उस समय मेरा हाथ भी कांप रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने फिर कहा–'यदि सचमुच तुम मुझे अपना मित्र समझते हो और मेरी मित्रता का तुम्हारी नजरों में कोई महत्व है तो खुदा के लिए यह ज़रूर बताओ कि ऐसी कौन-सी मुसीबत आ पड़ी है जिसके कारण तुम अपनी ज़िंदगी को खत्म करने पर तुले हुए हो ?'

उसने कहा–'कोई नयी घटना तो घटित नहीं हुई है, पर मैं संसार से ऊब चुका हूं। दैनिक जीवन के कामों की एकरसता से उकता गया हूं। एक ही काम को बार-बार करने से तंग आ चुका हूं। वातावरण की नीरसता ने मुझे यह सोचने पर विवश कर दिया है कि जीवन का कोई उद्देश्य नहीं, कोई लक्ष्य नहीं, और फिर जब मुझे अंत में इस संसार से चले ही जाना, है तो जितनी जल्दी जा सकूं, बेहतर है। कहते हैं मौत के बाद का जीवन सनातन है। उस जीवन में कोई मुसीबत नहीं, कोई परेशानी नहीं।' इसके बाद वह चुप हो गया और किसी गहरी सोच में डूब गया।

मैंने कहा–'क्या इस संसार का जीवन मुसीबतों का द्योतक है ? नहीं, ऐसा नहीं है तुम गलती पर हो। जीवन ऐसा नहीं जैसा कि तुम समझते हो। तुम्हारा यह विचार क्षणिक और अस्थायी है। इस समय तुम सत्य से हट चुके हो।'

उसे क्रोध आ गया। उसने कई बार पहलू बदले। फिर बड़े रुंधे और व्यग्र स्वर में कहा–'इससे बढ़ कर अन्य क्या कष्ट होगा कि लोग इस जीवन में एक दूसरे के साथ शत्रुता रखते हैं और बिना किसी कारण के दिल तोड़ने का प्रयत्न करते हैं। मेरा ही उदाहरण ले लो। प्रायः मिलने-जुलने वाले ऐसे हैं जो मेरे साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते और मेरी उन्नति के मार्ग में बाधाएं डालने का प्रयास करते हैं। मैंने किसी का दिल नहीं दुखाया। किसी के साथ बुरा व्यवहार नहीं किया। आखिर वे क्यों मुझसे वैर रखते हैं ? मेरे मस्तिष्क को क्यों परेशान करने पर तत्पर हैं ? उन्होंने जीवन का दायरा मुझ पर तंग कर रखा है। मैं उनके इस रवैये से सख्त तंग हूं। मेरे दिल में उनके विरुद्ध ईर्ष्या, द्वेष और प्रतिशोध की भावनाएं प्रवहमान होती हैं। उन भावनाओं से मुझे बहुत कष्ट और यातना का अनुभव होता है! क्या इससे बड़ी कोई अन्य मुसीबत है ? निश्चय ही नहीं है। जहां तक मित्रों का संबंध है, वे तो खुशी के साथी हैं। थोड़ी देर हमारे साथ मुसकराते हैं और फिर मुंह मोड़ लेते हैं।'

'इंसान दुनिया में बिलकुल अकेला है। काश ! अकेला ही रहता ! पर फिर भी कई लोग ऐसे है जो भिड़ों की तरह उससे चिमट कर उसे डंक मारते हैं। उसके साथ बैठकर खाते हैं, पर जिस थाली में खाते उसी में छेद करते हैं। तुम स्वयं सोचो और अपने ईमान से कहो, क्या जीवन को खत्म कर देने के लिए यह पर्याप्त नहीं। मेरी समझ में नहीं आता कि इस संसार में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहने का क्या आनंद है। कौन-सी चीज़ ऐसी है जिसकी प्राप्ति से हमें स्थायी खुशी प्राप्त हो सकती है। हम प्रतिदिन सुबह से शाम तक कोल्हू के बैल की तरह चलते रहते हैं, पर किसी मंज़िल पर नहीं पहुंचते।

'हां, यदि मैं उच्चाधिकारी होता और मेरे पास साधन होते तो मुझे पता चल सकता कि संसार में खुशी किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है। कितने खेद की बात कि इस संसार में खुशी केवल रुपये से खरीदी जा सकती है और मेरा तो हाथ खाली है। जेब में फूटी कौड़ी ही नहीं। आखिर क्या कर सकता हूं! किस प्रकार संसार की खुशी में शामिल हो सकता हूं। मेरे भाग्य में तो यही दर-दर की ठोकरें, मुसीबतें और कष्ट हैं।'

मैंने उठकर उसे गले से लगाया। हम दोनों की आंखों में आंसू तैरने लगे। वह जाने वाला था कि मैंने कहा– 'मुझे तुम्हारे फैसले पर कोई आपत्ति नहीं और न मैं उसमें अड़चन डालना चाहता हूं, पर चूंकि मरने का अवसर हर समय मिल सकता है और एक अवधि तक हम मिट्टी के नीचे मुरदा ही रहेंगे, इसलिये मेरा खयाल यह है कि तुम आत्महत्या का खयाल केवल दो दिन के लिए स्थगित कर दो। इस बीच में इस संसार और इस संसार में रहनेवालों से अपना बदला लो। यदि तुम इस बात पर राज़ी नहीं, तो कम से कम मेरी सांत्वना के लिए दो दिन और जीवित रह लो।'

उसने कुछ सोचकर उत्तर दिया–'यद्यपि मेरा मन नहीं चाहता तथापि तुम्हारा मन रखने के लिए मैं थोड़ा-सा कष्ट और उठाने को तैयार हूं।'

मैंने कहा–'अब जबकि तुमने अपने जीवन के लिए यह अंतिम दो दिन मेरे हवाले कर दिये हैं, इसलिये तुमको चाहिये कि जो कष्ट मैं तुम्हें देना चाहूं, उसे सहन करो।'

वह कहने लगा–'मुझे कोई आपत्ति नहीं। इस कष्ट को उठाते समय मुझे कम से कम यह तो मालूम होगा कि मैं क्यों और किस लिए कष्ट उठा रहा हूं।'

मैंने कहा–'कितने दुख की बात होगी कि तुम तो अपनी जान से जाओ और तुम्हारे दुश्मन तुम्हारे मरने पर खुशी प्रकट करें। इसलिये तुम्हें चाहिये, उनका मन प्रसन्न करने का प्रयत्न करो, चाहे यह प्रयत्न कुछ क्षणों के लिए ही हो। इस उद्देश्य के लिए उनसे मुलाकात करो। उस व्यक्ति की तरह जो नोक-झोंक के बाद अपने प्रेमिका से सुलह करता है। तुम मन में चाहे कुछ भी रखते हो, किंतु प्रकट में बड़े खिले मन से उनसे मिलो। अपनी अच्छी-अच्छी बातों से उनका मन मोह लेने का प्रयास करो। चूंकि तुम्हें ज़िंदा रहने का खयाल नहीं है, इसलिये यदि कोई तुमसे कहे कि तुम्हारी सज्जनता का तुम्हें फल मिलना चाहिये तो तुम उससे कह देना कि आपकी इस हमदर्दी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

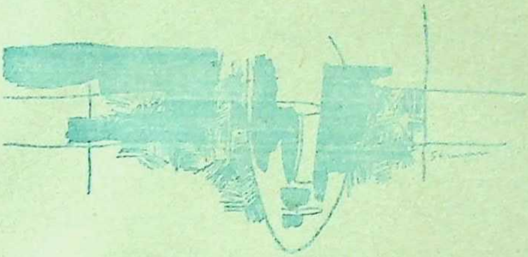

चित्र : श्रवण कुमार

का धन्यवाद। इन बातों से मेरा मतलब असल में यह है कि जब तुम मर जाओ तो दुश्मनों को तुम्हारी मौत पर बगलें बजाने का अवसर न मिल सके। बल्कि उन के मन में तुम्हारे लिए खेद की भावना उत्पन्न हो।

'फिर मित्रों से मिलो। उनके साथ भी खिले मन से पेश आओ। कुछ अपनी सुनाओ, कुछ उनकी सुनो। यों समझ कर प्रत्येक से मिलो कि तुम किसी के मोहताज नहीं हो। इसलिये स्वयं को उसके बराबर समझो। मित्रों का कोई काम तुम्हारे योग्य हो तो उसे पूरा कर दो। इसका परिणाम यह होगा कि जब तुम इस दुनिया में नहीं रहोगे तो वे तुम्हें याद करके दुखी होंगे।

'एक अन्य काम तुम्हें करना है। चूंकि तुम्हारी ज़िदग़ी का यह अल्पा विराम अब मेरे अधिकार में है, इसलिये जो कुछ मैं कहूं, उसे कार्यरूप देने का प्रयास करो।

'कल प्रात:काल उठकर अपने मकान की छत पर चढ़ो। बसंत की ऋतु है। सर्दी भी कोई खास नहीं। यह खयाल रखना कि सूर्य निकलने से कोई घंटा भर पहले तुम छत पर जाओ और जब तक सूर्य न निकले, नीचे न उतरो। तुम्हारे हृदय में जो क्रोध हो, उसे हृदय के अंदर ही दबाने का प्रयत्न करो। फिर मुझे याद करके पौ फटने का दृश्य देखना और देखना कि हवा कितने रंग बदलती है। प्रकृति के सुंदर दृश्यों से आनंदित होना और पक्षियों की चहचहाहट सुनना।

'मेरा सिद्धांत, अपितु आस्था है कि प्रात:काल का प्रकाश एक ऐसा प्रकाश है जो स्नेह की भावना उभरने से मन में चमकता दमकता है। यह मित्रता की सहृदयता है। प्रेम के उद्यान की सुखदायक हवा है। अश्रुओं की सफाई है जो हम दूसरों के दुर्भाग्य पर बहाते हैं। आहों की तरलता है, जो दीन व्यक्तियों की दशा पर हमारे दिलों से निकलती है। हृदय की पवित्रता है जो असहायों की सांत्वना में मग्न रहती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। उन क्षणों की स्वतंत्रता है जिनमें हम स्वयं को भूल जाते हैं।

'इन तथ्यों पर विचार करो और देखो कि आया तुममें भी मेरी तरह उनका एहसास पैदा होता या नहीं।

'जब सूर्य उदय होने का दृश्य देख लो तो अपने काम-काज में लग जाओ और दिनचर्या के कर्त्तव्यों को पूरा करने में व्यस्त हो जाओ। पर इस तरह नहीं, जिस तरह अब तक करते रहे हो, बल्कि अपनी सेवाएं कुछ इस ढंग से पूरी करो कि तुम्हारे मरने के बाद लोग हसरत और खेद प्रकट करें। उनका दिल तुम्हारे वियोग को तीव्रता से अनुभव करे।

'इस बीच लोगों के साथ हंसो-मज़ाक करो। कुछ अपनी कहो। कुछ उनकी सुनो। प्रेम और सहानुभूति प्रकट करो। किसी चीज़ पर नाक-भौंह न चढ़ाओ। दो दिन के जीवन में आलोचना अच्छी नहीं होती। मतलब यह कि कुछ ऐसा रवैया अपनाओ कि तुम्हारे मरने के बाद उनके दुख की कोई सीमा न रहे।

'अवकाश के समय में कुछ अध्ययन करो। जो पुस्तक तुम्हारे पास हो, उसे पढ़ना शुरू कर दो। तो दूसरे दिन भी मेरी खातिर यही क्रिया जारी रखना। तीसरे दिन जो तुम्हारा दिल चाहे करना।'

मेरा मित्र मुसकराया और कहने लगा–'तुम व्यर्थ मुझे भ्रम में ग्रस्त करना चाहते हो।' मेरे चेहरे का रंग कुछ परिवर्तित हुआ। मैंने कहा–'हां, तुम ठीक कहते हो। मैं तुम्हें भ्रम में ग्रस्त करना चाहता हूं, पर चूंकि तुमने मुझे वचन दिया है, इस लिये मेरे नियम का कठोरता से पालन करो। इसके सिवा तुम्हारे पास अन्य कोई उपाय नहीं।'

उसने महसूस किया कि वाद-विवाद का कोई अवसर नहीं अत: पिस्तौल उठाई और 'खुदा हाफिज़' कहकर चला गया।

तीसरे दिन मैं तैयार होकर उसके घर पहुंचा। उसने खिली मुस्कान से मेरा स्वागत किया। मैंने यूं ही कहा–'मैं तो यहां शोक और मातमपुरसी के लिए आया हूं।' वह हंसा और बोला–'मरने के लिए बहुत समय पड़ा है। मैं चाहता हूं कि कुछ दिन और तुम्हारे नियमों पर कार्य करूं।'

हम दोनों एक दूसरे से लिपट गये और खुशी के आंसू हमारी आंखों से बहने लगे।

□

प्रसिद्ध वैज्ञानिक, सर जेम्स सिंपसन ने प्रकृति की बहुत-सी रहस्यमयी बातों का पता लगाया है, और कई महत्वपूर्ण खोजें की हैं।

एक बार किसी ने उनसे पूछा, 'आपकी सबसे बड़ी खोज कौन-सी है?'

सिंपसन को सोचने की ज़रूरत नहीं पड़ी। उन्होंने बड़े सहज भाव से कहा, 'मेरी सबसे बड़ी खोज है कि ईश्वर मेरा मुक्तिदाता है।'

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उजली चादर — अंधकार के धब्बे

□

सामने मैदान में
पसरी हुई चांदनी
इस छोर से
उस छोर तक
उजली धुली सी
देवकन्या कोई
उनींदी अलसाई सोई
क्वांरी अनछुई !
वृक्षों की टहनियों से
पत्रों—फुनगियों से
छन रहीं रजत-बूंदें
सारा शहर डूबा
ज्योत्सना के सैलाब में !
खिड़कियों से
दरवाज़ों की झिर्रियों से
चांदनी की किरणें
आड़ी तिरछी
झांक रहीं
कमरों में बन्द
सोयी चेतनाओं के मुख !
बेखबर जो
ज्योति के झरते
जल-निर्झर से
आकाश से बरसतीं
थिरकतीं संगीत की
ध्वनियां !
बन्द नेत्र चलती सांसें
देख रहीं
अनगिन सपने
विचरतीं अपने
अलग-थलग संसार,
छिटके जगह-जगह
अंधकार के धब्बे
चल रहे जहां
अमानवीय व्यापार !
कुछ वहशी जानवर
खोजते शिकार
निस्तब्धता को चीरतीं
कुछ फुसफुसाहटें
कराहें—दबे चीत्कार
हो गयी गदली गंगा
मैली धुली चदरिया
बिखर गये कुछ
रक्त सने छींटे
धरती से आकाश तक फैली
उजली साड़ी पर !

—डा. सुधा जैन
१०३५, सैक्टर २४ बी., चण्डीगढ़—२३

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महादेवी वर्मा : हमारी आलोकजीवी संस्कृति

□

ज्ञानपीठ-पुरस्कार-विजेता, तथा शीर्षस्थ कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा को निःसंकोच हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ जीवित लेखिका, कहा जा सकता है। पिछले दिनों उन्होंने अनेक माध्यमों 'दिनमान', 'रविवार' आदि से साहित्यकारों तथा बुद्धिजीवियों की भूमिका से लेकर साहित्यिक पुरस्कारों, युवा वर्ग, सांस्कृतिक मूल्यों का संकट, नारी-मुक्ति-आन्दोलन, औद्योगीकरण आदि विषयों पर अपने सुसंतुलित विचार व्यक्त किये। यहां प्रस्तुत है-- उनके ताज़े विविध विषयी विचारों की मंजूषा।

भारत की संस्कृति आलोकवाहिनी है, और उसके मूल कारणों में एक ऋग्वैदिक ऋषियों की वह देव-सृष्टि भी है, जिसने सूर्य को विशेष महत्त्व दिया। अग्नि और सूर्य आज भी उतने ही महत्व-पूर्ण हैं, जितने वेद-काल में थे, क्योंकि दोनों प्रत्यक्ष और जीवन के अनिवार्य संगी हैं। इसी से ऋषि कहता है, 'सूर्य चन्द्रमसौ धाता यथापूर्व म कल्पयत।'

संपूर्ण देव-सृष्टि में वरुण. मरुत, इन्द्र, आदि भौगोलिक रूप में इतने प्रत्यक्ष नहीं हैं जितना सूर्य। आलोकदान के अतिरिक्त, सूर्य के अनेक कार्य भी जीवन के लिए आवश्यक हैं। वह धरती को तप्त भी करता है, और समुद्रों को तपाकर बादल का सृजन कर, वर्षा से शीतल भी करता है। उससे युग-कल्प से लेकर क्षणों तक का काल विभाजन भी होता है, और आलोक-अंधकार का क्रम से आविर्भाव भी। दूसरे लोकों को प्रकाशित करने के लिए वह एक लोक से विदा लेता है। अतः उसका आग-मन और गमन, उदय और अस्त, दोनों प्रणम्य माने जाते हैं।

आदिम मनीषा ने जब अरणियों के संघर्षण से अग्नि उत्पन्न करने में सफलता पायी, तब मानो सूर्य का प्रतिनिधि उन्होंने धरती पर उतार लिया। 'अग्निमीडे पुरोहितम्' कहकर उसकी वंदना की। वह देवता उनकी शत्रुपुरी को भस्म भी कर सकता था, और उनकी कुटिया या गुफ़ा को आलोकित भी कर सकता था। वह देवताओं को यज्ञ में आहूत भी कर सकता था, और आहुति द्वारा उनका भाग उन तक पहुंचा भी सकता था। वह अन्न को सिद्ध करके खाद्य भी बना सकता था, और फिर जठराग्नि के रूप में उसे रस और रक्त में भी परिवर्तित कर सकता था। जन्म से मृत्यु तक अग्नि से मनुष्य का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविच्छिन्न संबंध रहा। उसके सब कर्म-काण्ड, सब संस्कार, जन्म, उपनयन; विवाह आदि में अग्नि ही साक्षी और पुरोहित रहा, तथा आज भी उसके अभाव में जीवन संभव नहीं है। मंदिर में भी धूप-दीप के बिना पूजन की कल्पना नहीं की जा सकती। आज के युग में भी विद्युत्‌जीवी मानव अग्नि के बिना नहीं जी सकता।

सूर्योपासक, अग्निपूजक भारत की संस्कृति यदि विशिष्ट आलोकजीवी हो, तो इसे स्वाभाविक ही कहा जायेगा। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की गूंज भारत के धर्म, दर्शन, साहित्य, कला, जीवन-पद्धति आदि में निरंतर गूंजती रहती है।

मेरा अन्तर्जगत तथा परिवेश इसी आलोकोत्सव में निर्मित हुआ है, अतः प्रकाश के प्रति मेरा आकर्षण आरंभ में बहुत कुछ वैसा ही रहा, जैसा सामान्य बालक का होता है। परन्तु, दीपक के प्रति रागात्मक दृष्टि बनने के कारण और भी रहे, जिनका विश्लेषण आज कठिन है। यह कारण कुछ संस्कारगत और कुछ परिवेशगत भी रहा।

(राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली द्वारा कवयित्री के शीघ्र प्रकाश्य संकलन 'दीपगीत' की भूमिका से।)

०००

इंदिरा (प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी) को मैं बचपन से जानती हूं, तभी जब वह इलाहाबाद में वानर सेना का काम देखती थीं। अब अंतर सिर्फ़ इतना

श्रीमती महादेवी वर्मा

हुआ है कि तब इंदिरा छोटे वानरों के बीच थीं, और आज बड़े-बड़े वानरों के बीच घिर गयी हैं। (१८ मई, १९८३ को लखनऊ में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के तत्त्वावधान में रवींद्रालय में पुरस्कार-वितरण के अवसर पर, जब श्रीमती महादेवी वर्मा ने अपने भाषण के दौरान, यह बात कही, तो उनकी इस टिप्पणी पर श्रीमती गांधी भी मुस्करा उठी थीं।)

०००

एक लाख के 'भारत भारती' पुरस्कार से श्रीमती गांधी के हाथों पुरस्कृत होने के बाद, श्रीमती वर्मा ने जो भावपूर्ण भाषण दिया, उसके कुछ अंश इस प्रकार थे :

बहुत से साहित्यकारों के दबाव के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण ही, मैं यह पुरस्कार लेने यहां तक आयी हूं। बादल सागर से जल लेते हैं, और उसे फिर सागर को लौटा देते हैं। साहित्यकार बीमार होते हैं, संकट में पड़ते हैं, तो सरकार से सहायता की अपील करते हैं। सरकार भी साहित्यकारों को सहायता देती ही है। इस बार बहुत से साहित्यकारों और शोधकर्त्ताओं ने कहा कि आप पुरस्कार का यह पैसा लेकर हमें दे दीजियेगा। मैंने कहा कि अगर मेरे जाने से ही यह धन मिल सकता है, तो चलिये, कुछ साहित्यकारों का ही भला होगा।... १९३४ में इंदौर साहित्य सम्मेलन में महात्मा गांधी के हाथों 'सेकसरिया पुरस्कार' में दान में चांदी का एक कटोरा लिया था, तभी मैंने प्रतिज्ञा कर ली थी कि मैं पुरस्कार के लोभ और मोह से ऊपर उठ जाऊंगी। मैंने अपनी सारी चल-अचल संपत्ति का एक न्यास बना दिया है–'साहित्य सहकार-न्यास'। पुरस्कार की यह एक लाख रुपये की राशि भी मैं, इसी न्यास को अर्पित कर दूंगी। इस न्यास की स्थापना संकटग्रस्त साहित्यकारों की सहायता और शोधकर्त्ताओं के प्रोत्साहन के लिए की गयी है।

०००

देश में चरित्र व मूल्यों में जिस तरह की गिरावट आयी है, उसे रोकने के लिए, और देश का सुधार करने के लिए राजनीति सक्षम नहीं है। राजनीतिकों के वर्ग को जनता से मिलना होगा। उन्हें साहित्यकारों से मिलकर, इस विराट समस्या का कोई निदान ढूंढना होगा, वरना किसी बड़ी शक्ति का निर्माण हो ही नहीं सकता। साहित्यकार कभी संपन्न नहीं हो सकता। वह विपन्नता में जीता है, लेकिन उसमें संवेदना की गहराई होती है। साहित्यकार ही एक दीपक की भांति इस देश के अंधेरे को आलोकित कर सकता है। हम दो चट्टानों की तरह, दूर-दूर और अलग-अलग रहकर, एक सुंदर देश का निर्माण नहीं कर सकते। हमें गंगा की धारा की तरह मिल-जुल कर एक हो जाना चाहिये।

०००

आज के भारतीय समाज में जो चीज मुझे सबसे ज़्यादा परेशान करने वाली लगती है, वह है, मूल्यहीनता। जीवन के मूल्यों का जो एकदम बिखराव दिखायी पड़ रहा है, वही सबसे ज़्यादा परेशान करने वाला है। क्योंकि मूल्य ही न हों, तो इसका मतलब है, कोई लक्ष्य ही नहीं है। फिर क्या करेंगे आप? और जिसको आप मूल्य कहते हैं, उसमें स्वतंत्रता भी आती है, स्वाधीनता भी आती है, स्वच्छंदता भी आती है। तंत्र कहते हैं, शासन को, सो स्व-तंत्रता, तो हमें मिल गयी। लेकिन, जो दूसरी चीज़ है–स्वाधीनता आत्मा का स्व का अनुशासन, अपने विवेक को जागृत रखना, जिसके अनुसार, हम काम कर सकें, वह तो हमें मिली नहीं। अब रह गयी, स्वच्छंदता, अर्थात् आदमी के मन में जो आये, वह करे। इस तरह वास्तव में हमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन के जो मूल्य मिलने चाहिये थे, वे नहीं मिले। तो फिर राष्ट्र कैसे बने ? कोई भी राष्ट्र बिना लक्ष्य के, बिना जीवन-मूल्यों के कैसे बन सकता है ? हमारा संकट यही है। मुझे ऐसा लगता है, कि राजनीति में ऐसे व्यक्तियों के हावी होने पर, जिन्होंने कुछ झेला नहीं है, यह मूल्यहीनता आयी है। बिना रक्तदान के कोई राष्ट्र नहीं बनता।

ooo

आशा का जो केन्द्र अब है, मेरे मन में, यह है देश का युवा वर्ग। लेकिन उसे न विश्वास मिला, न स्नेह मिला। और न किसी बड़े का कोई मार्गदर्शन। मिली है तो सिर्फ़ बेकारी... बेकारी... और बेकारी। अगर हम इस वर्ग को जगा दें, तो बहुत कुछ हो सकता है। मुझे लगता है कि अब इस देश में साधारण जन ही कुछ कर सकता है। वह अशिक्षित होगा, लेकिन असंस्कृत नहीं। सोना जितना जलेगा, वह थोड़ा घटेगा, लेकिन सोना तो सोना ही है। तो, हमारे ग्रामीण और हमारे तरुण इन्हें जगाने का हम उपाय करें। और यह काम राजनीति नहीं कर सकती।

ooo

मेरा बचपन इन्दौर की छावनी में बीता, जहां लैम्प ही जलाये जाते थे। पिताजी को बहुत प्रकार के कलात्मक लैम्प अच्छे लगते थे, और उन्होंने बहुत रंगों के ग्लोब वाले, आकर्षक और कलात्मक लैम्पों का संग्रह घर में किया था। स्वभावतः, उनका आकर्षण मेरे लिए भी बहुत अधिक था। जब तक संध्या समय लैम्प जलाये, तथा प्रत्येक कमरे में पहुंचाये जाते, तब तक मैं रामा के साथ घूमती रहती थी, और किस कमरे में किस रंग के ग्लोब वाला लैम्प रखा जायेगा, यह भी मुझे याद रहता था। आरती के दीपक की लौ छूकर माथे से लगाने की हम सबमें होड़ रहती थी, और लौ को छूने की इच्छा में अनेक बार मेरी उंगलियां भी जल जाती थीं। लौ में पतंगों को जलते देखना मुझे सदा कष्ट देता था, और आज भी देता है, पर उन्हें रोकने का उपाय न तब था, न आज है। मां की पूजा-आरती के अतिरिक्त तुलसी चौरे पर भी दीपक रखा जाता था। विशेष पर्वों पर हमें चौराहा, कुएं की जगत, बाहर के किसी मंदिर में तथा वट, पीपल आदि के नीचे घी के चौमुख दिये रखने पड़ते थे।

ooo

नारी-मुक्ति की समस्या पर मैंने काफ़ी सोचा और लिखा है। मेरे विचार से इस समस्या का मुख्य मुद्दा यह है कि जब पुरुष ही मुक्त नहीं है, तो नारी तो दासानुदास है। जहां तक पश्चिम की नारी का सवाल है, तो वह शरीर की पूजा करती है। मुक्ति चाहिये उसे शरीर की। शरीर की मुक्ति भी यह नहीं है कि आप अपने शरीर को बेचिये, अंग-प्रदर्शन कीजिये। मुक्ति तो समाज में ही होती है। तो, समाज जब टूट रहा हो, तो फिर मुक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का सवाल ही कहां उठता है ।

आज की नारी हमें नहीं बता पाती कि नारी-मुक्ति से उसका अभिप्राय क्या है ? हमारे युग में सती प्रथा, विधवा विवाह आदि के मामलों पर आंदोलन चला । इस दिशा में गांधीजी का योगदान बहुत बड़ा था । उन्होंने नारियों को वस्तु से व्यक्ति बनाया । उस समय तक स्त्री पुरुष की संपत्ति थी । कितनी स्त्रियों ने आज़ादी की लड़ाई में भाग लिया । किसी से अनुमति नहीं ली, न पिता से पूछा, न पति से आज्ञा ली । यह बहुत बड़ी बात थी । पढ़ी-लिखी सरोजिनी नायडू भी आयीं, और अनपढ़ कस्तूरबा भी ।

शरीर की पूजा कोई बड़ी स्वतंत्रता नहीं है । आज की नारी कहती है, उसे स्वतंत्रता चाहिये, पर किस लिए चाहिये, यही उसे पता नहीं है । पहले, वह व्यक्ति तो बने । मैं अपनी छात्राओं से कहती हूं कि पहले व्यक्ति की अस्मिता प्राप्त करो। परिवार और समाज का नया स्वरूप बनेगा, पर मानवीय संबंध कहां जायेंगे ? उसे तोड़ देती हो, तो कटी पतंग की तरह उड़ जाओगी । माता है, पिता है, भाई है, बहन है, पति है, पुत्र है, तो जो मानवीय संबंध हैं, वे ही तो मनुष्य बनाते हैं । जो पशु हैं, वे ही पूर्णतः मुक्त हैं । किस पक्षी को पता है कि उसके मां-बाप कहां हैं ? किस पशु को याद है कि उसकी मां कौन है ? सिर्फ़ मनुष्य को याद है । तो, मानवीय संबंध तोड़कर, आप समाज कैसे बनायेंगे ? रूढ़ियां जाने दीजिये, अंधविश्वास जाने दीजिये, लेकिन जो संबंध हैं, वे तो रहेंगे न ! मनुष्य की गरिमा इतनी बड़ी थी कि आपके परमात्मा को भी मनुष्य के रूप में आना पड़ा । पूरा अवतारवाद मनुष्य की गरिमा ही तो है ।

०००

चूंकि हम पश्चिम का अनुकरण कर रहे हैं, अतः उन्होंने हमें गिरवी ही रख लिया है। पूरा देश अरबों-खरबों पर गिरवी है कि नहीं ? विकास की इस रणनीति के कारण भारत में संपन्न अधिक संपन्न हुआ, विपन्न अधिक विपन्न हुआ । हमें दूसरी तरह चलना चाहिये । हमारी चिंता उस वर्ग के लिए होनी चाहिये, जो एकदम नीचे है । अब अगर हम चाहें कि उनके लिए पश्चिम की तरह कारखाने बनायें, तो यह उचित न होगा । बापू कहते थे, ऐसा नहीं हो सकता ।

नकल से ही हमारा विघटन हो रहा है । स्वतंत्रता के बाद सब कुछ बदलना चाहिये । जैसे शिक्षा को ही लें । वह तो अंगरेजों की चलायी हुई है न ! उन्हें ऐसे व्यक्ति चाहिये थे, जो उनके शासन को चलायें । हमें दूसरी तरह का व्यक्ति चाहिये । पर कहीं कुछ नहीं बदला, ज़रा भी नहीं बदला । जीवन में कोई मूल्य नहीं रह गये हैं। सो, आज आदमी नहीं बन रहे हैं । जब आदमी ही नहीं बनेंगे, तो समाज कैसे बनेगा ?

०००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा में भी मुझे 'आलोक की पुकार' ने ही आकर्षित किया है। 'तमसो मा ज्योतिर्गमय', 'आत्मदीपो भव' आदि में दीप ही बोलता है। अविद्या अंधतमस है, और ज्ञान आलोक का ही पर्याय है। शिव के आग्नेय तीसरे नेत्र के समान ही, प्रत्येक मानव के पास भी आग्नेय तीसरा नेत्र है, जो जल उठे, तो गहन आवेग-जनित तमिस्रा ध्वस्त हो जाती है। यह तारों पर दौड़ने वाली बिजली न होकर, मनुष्य के स्पंदन के चमत्कार में ही है।

भारत के कला, अलंकरण, आस्था, ज्ञान, सौंदर्यबोध, तथा साहित्य आदि में दीपक का प्रतीक विशेष, महत्त्व रखता है। मेरे निकट भी, वह प्रतीक इतना आवश्यक है कि मैं उसके माध्यम से बुद्धि और हृदय दोनों की बात सहज ही कह सकती हूं। काव्य में प्रतीक कवि के चरित्र और संघर्ष दोनों का संकेत देते हैं। मेरा यह प्रतीक मेरा कैसा परिचय देता है, यह दूसरे ही बता सकते हैं।

मैंने बृजभाषा में जो तुकबंदियां करना आरंभ किया था, उसमें भी दीपक और फूल की चर्चा अधिक है। फूलों को खिला देना तो मेरे हाथ में नहीं था, न मैं उन्हें मुर्झाने से रोक सकती थी, किंतु दीपकों को बुझाना जलाना तो मेरे हाथ में था। स्वभावतः दीपक की झिलमिलाहट का आकर्षण मेरे लिए विशेष था। पढ़ने के समय भी, मुझे अक्षरों से अधिक रंग-बिरंगे ग्लोब के शीशों में झिलमिलाती लौ का पड़ना, और हवा के हर झोंके पर उसका देखना अच्छा लगता था। आज भी मुझे बिजली के लट्टुओं से सयत्न सजाये, बदंनवार से दीपकों की झलमलाती पंक्ति अधिक आकर्षित करती है। इसी से हर दीपावली के पर्व पर मेरे घर सैकड़ों बत्तियां बनायी जाती हैं, और कई प्रकार के दीपक मगाये जाते हैं।

०००

जब किसी तालाब का पानी ख़राब होने लगता है, तो उसमें चाहे आप दूध डालिये, दही डालिये, या शहद डालिये सब बेकार है। तो आज का जो लेखक है, वह इसी वातावरण से आया है। और राजनीति ने उसे एकदम बहका दिया है। अब वह निरालाजी की तरह भूखा रहकर मरना नहीं चाहता। निरालाजी ने इतना अभाव झेला कि कभी-कभी गंगाजल पीकर लेट जाते थे। जो व्यक्ति इतना लिख सकता था, जिसने 'राम की शक्ति-पूजा' लिखी, उसके पास लिखने का काग़ज तक नहीं था। वह प्रसादजी को लिखते थे कि आप चिट्ठी भेजते हैं, तो काग़ज भी भेज दीजियेगा। टूटा हुआ निब, टूटा हुआ होल्डर, बच्चों जैसी दावात। लेकिन आज के युग में इतना प्राणदान कौन देगा? आज का लेखक देखता है कि राजनीतिज्ञ कितने आराम से रहता है, तो वह भी उसी की तरह रहना चाहता है। राजनीतिज्ञ नौकरी देता है, पुरस्कार देता है, तो उसी के इशारे पर लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घूमता है। अगर वह किसी राजनीतिज्ञ का अभिनंदन कर देता है, तो सब कुछ हो जाता है, नहीं करता, तो भूखों मरना पड़ता है। पहले की भांति, अब मरने को कोई तैयार नहीं। हमारे लेखकों में, जिन्होंने उस युग से प्रेरणा नहीं ली है, जो आज की राजनीति से घिरे हुए हैं, उससे हर तरह का लाभ उठाते हैं, वे वैसा, ही लिखते हैं। संकट तो है बहुत बड़ा, क्योंकि इस चक्रव्यूह से निकलने का उपाय तो यही है–प्राणदान।

अब चक्रव्यूह में प्रवेश तो कर गये; अभिमन्यु की तरह, पर निकलने का रास्ता नहीं। तो, समझौता कीजिये। अब राज्य कितने पुरस्कार देता है? पुरस्कार का क्या मतलब है? यह तो सामंती युग की बात है। बिहारी ने एक दोहा सुना दिया, तो दो लाख दे दिये। हमारे यहां जो पचास करोड़ लोग गरीबी रेखा से नीचे रहते हैं, उनको देखने कौन जाता है? जब मस्तक हमारा ही ऊंचा नहीं है, तो हमारी सरस्वती का क्या होगा? तो, यह संकट टूटेगा–निश्चय ही। ऐसी कोई रात है, जिसका सवेरा न हो? महाप्रलय की रात का भी सवेरा होता है। लेकिन, अब जो आयेगा, वह बिलकुल नीचे से आयेगा। ऊपर से नहीं आ सकता।

०००

यह अंधकार का युग है। हर क्रांति के साथ ऐसा होता है। आज बापू की बात मानी जाती, तो यह स्थिति नहीं आती। बापू ने कहा था कि स्वतंत्र भारत के मंत्री छोटे-छोटे घरों में रहें, सादगी से रहें। मैंने उन्हें मृत्यु के कुछ दिन पूर्व देखा था। वे व्यथा में डूबे हुए थे। जब आधी रात को हमें स्वतंत्रता मिली, वे कलकत्ता में सांप्रदायिक शांति स्थापित करने की कोशिश कर रहे थे। वस्तुतः स्वतंत्र होने पर देश में जो अस्मिता जागनी चाहिये थी, जो वर्चस्व जागना चाहिये था, वह नहीं जागा। तो, यह अंधेरे का युग है।

□

अमरीकी फौज का एक अधिकारी चीन में कोढ़ियों की एक बस्ती देखने गया।

वहां उसने एक जवान, सुंदर, अमरीकी नर्स को कोढ़ियों के ज़ख्मों पर पट्टियां बांधते हुए पाया, तो उसका मन इस कदर घिन से भर गया कि वह उसी समय वहां से चला गया।

दफ्तर में पहुंचकर उसने उस नर्स से मिलने की इच्छा प्रकट की। नर्स आयी, तो बातचीत के दौरान अधिकारी ने पूछा, 'आखिर तुम ऐसा घिनौना काम कैसे कर सकती हो? मुझे तो कोई एक हज़ार डालर भी दे, तो भी मैं यह काम न करूं।'

'और मैं इसे दस हज़ार डालर पाकर भी न करूं,' नर्स ने कहा। फिर, उसने अपने गले में लटक रही सलीब उसे दिखाई। 'पर जिन्होंने इस सलीब पर आत्मबलिदान दिया था, उनके लिए मैं कुछ भी कर सकती हूं।'

–सु॰

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्योति की जय

भर हृदय में नेह का भंडार अक्षय
प्राण की लघु वर्तिका होगी अभय
द्वार तम के गा सहज निर्धूम जलकर,
ज्योति की जय
ज्योति की जय
ज्योति की जय।

मृत्तिका का देह धारण ही दिया है
वर्तिका ने स्नेह का अमृत पिया है
और चुकने के प्रहर तक क्षार होकर
दीप ने विश्वास दिनकर को दिया है
विश्व में क्यों हो?
तिमिर का व्याप्त भय?
ज्योति की जय
ज्योति की जय
ज्योति की जय।

घूंट विष के घूंट शव चैतन्य शिव है
चीर तम का वक्ष पुंजीभूत रवि है
यज्ञ में समिधा प्रसादी में बने हवि,
ज्योति की आराधना का नाम कवि है

सत् असत् का द्वंद्व
ही है कवि हृदय
ज्योति की जय
ज्योति की जय
ज्योति की जय।

– आत्म प्रकाश शुक्ल
वाणी विहार, अलीगंज, एटा, उ. प्र.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीर्तिस्वरूप रावत का शोध-परक लेख

मृतात्माओं से संदेश-प्राप्ति कितनी विज्ञान सम्मत है?

३ सितंबर १९६७ कनाडा के टोरेन्टो टेलीविज़न का स्टूडियो और मृतात्मा से सन्देश-प्राप्ति की बैठक का आयोजन यद्यपि दोनों का संगम अटपटा लगता है, लेकिन यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि इस संगम ने आधुनिक बौद्धिक जगत को एक बार फिर इस प्रश्न पर गहराई से सोचने को बाध्य कर दिया कि वास्तव में मृत्यु जीवन का अन्त है अथवा नहीं !

१७ सितंबर को जब यह कार्यक्रम टेलीकास्ट किया गया हज़ारों दर्शकों ने देखा कि किस प्रकार से एक अमेरिकन माध्यम, आर्थर फोर्ड ने, तन्द्रा में बोलते हुए, अपने समक्ष बैठे कैलीफोर्निया के एक भूतपूर्व बिशप जेम्स. ए. पाइक को एक के बाद एक अनेक मृतात्माओं के सन्देश प्रेषित किये । इनमें उनके उस पुत्र की मृतात्मा भी सम्मिलित थी जिसने २२ वर्ष की अल्पायु में ही, कोई डेढ़ वर्ष पूर्व, न्यूयॉर्क के एक होटल में स्वयं को गोली मारकर आत्महत्या कर ली थी। अन्य अनेक बातों के साथ, अपने कुकृत्य पर खेद प्रकट करते हुए पुत्र ने कहा : 'मैं (जीवन से) बाहर जाना चाहता था लेकिन मैंने जाना है कुछ भी (जीवन से) बाहर नहीं है ।'

स्वयं पाइक ने सभी प्रकार की वैकल्पिक संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए निर्णय दिया : 'मैं समझता हूं यह सारी घटना इस विचार की पुष्टि करती है कि मृत्यु के बाद व्यक्ति का अस्तित्व रहता है।'

एक बार जब यों ही माध्यम, आर्थर फोर्ड, अनेक व्यक्तियों को मृतात्माओं का सन्देश देकर जब स्वयं मंच से उतर कर आये तो श्रोताओं में से एक नवयुवक उनके पास आया और बोला : 'मेरे पिताजी की मृतात्मा से सन्देश देने में आपसे भूल हो गयी, मि. फोर्ड, मेरे पिताजी तो अभी जीवित हैं । आइये, में आपकी उनसे मुलाकात कराऊं ।' निकट खड़ा वृद्ध कुलबुलाने लगा । फुसफुसाते हुए उसे अपने पुत्र पर यह रहस्य खोलना ही पड़ा कि वह उनकी गोद ली हुई संतान था, और उसके पिता की वास्तव में मृत्यु हो चुकी थी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाद में इस घटना की चर्चा करते हुए स्वयं फोर्ड ने स्वीकारा कि इस घटना से कई प्रश्न उठ सकते हैं : यह सूचना उन्होंने दूसरे पिता के मन से स्वयं ग्रहण की या कि उसके अचेतन मन ने उन्हें प्रेषित की, अथवा यह वास्तव में पहले पिता की मृतात्मा ही थी जिसने यह रहस्य खोला था ?

इसी तरह एक बार सुविख्यात लेखक सिनक्लेयर को आर्थर फोर्ड ने एक बैठक में एक बच्ची की मृतात्मा का सन्देश देते हुए कहा कि वह चाहती है कि यह सन्देश उसकी माता के पास पहुंचा दिया जाये। बच्ची ने अपना नाम भी बताया। यह महिला सिनक्लेयर की मित्र थी और सिनक्लेयर ने कहा कि वे अच्छी तरह जानते हैं कि इस महिला के कभी कोई बच्ची नहीं हुई थी। लेकिन जब उन्होंने महिला को इस सन्देश की बात कही तो उसके आंसू की झड़ी लग गयी। उसने बताया उसके एक बार गर्भपात हुआ था, और गर्भस्थ शिशु को वह उसी नाम से पुकारा करती थी जो नाम उसने बैठक में बतलाया था।

श्रीमती एस्टीली रोबर्ट्स ने भी अपनी आत्मकथा में इससे मिलते-जुलते एक प्रकरण का जिक्र किया है।

एक व्यक्ति की मृतात्मा ने अपनी पत्नी को अन्य अनेक बातें बताते हुए यह भी कहा कि अब वह अपने भाई के साथ है। पत्नी ने एस्टीली को बतलाया कि

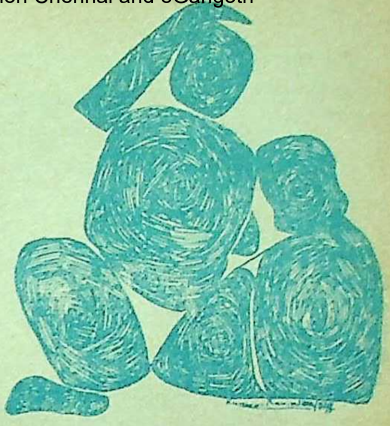

चित्र : कुंवर रवीन्द्र

उनके पति के तो कभी कोई भाई था ही नहीं। दुविधा भरे मन से उसने अपनी सास को पत्र लिखकर पूछा कि क्या वास्तव में उनके कोई और पुत्र भी था। कुछ दिन बाद पत्र के उत्तर में सास ने लिखा कि वास्तव में उन्होंने इस व्यक्ति को एक अनाथालय से लाकर अपने पुत्र के रूप में पाला था। जिस समय इसका जन्म हुआ था—उसके एक बड़े भाई को एक अन्य दम्पति ने गोद लिया हुआ था, अस्तु, यह बात उससे जीवन पर्यन्त छुपा रखी गयी थी। सास ने प्रश्न किया कि वह राज जो उसने चालीस वर्ष से गुप्त रखा था, उसे उनकी पुत्र-वधू को कैसे पता चल गया ?

चाहे कितनी ही क्षीण संभावना क्यों न हो आलोचक यह कह सकते हैं कि श्रीमती रोबर्ट्स ने संभवतः सूचना मृतक की माता के अचेतन मन से टैलीपेथी द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञात कर ली हो। लेकिन निम्न प्रकरण में तो इस बात की लेशमात्र भी संभावना नहीं है, क्योंकि प्राप्त सूचना को जानने वाला कोई भी जीवित ही नहीं बचा था।

कामनवैल्थ के एक वकील को, जो माध्यमों के कटु आलोचक थे, एक बैठक में उनकी माता की मृतात्मा ने बताया कि उसके पास उसके दो बच्चे—एक पुत्र व एक पुत्री थी जिनकी मृत्यु इन सज्जन के जन्म से पूर्व हो गयी थी। वकील महोदय बहुत बौखलाये और बोले कि उनके तो कोई भी भाई-बहिन नहीं था—लेकिन माता की मृतात्मा अडिग रही। वास्तव में सत्य क्या है इसका पक्का प्रमाण प्राप्त करने हेतु वकील साहब ने अपने वर्तमान निवास स्थल से कोई ५०० मील दूर अपन जन्म स्थान के 'जन्म-मृत्यु पंजीयक' को पत्र लिखा। कुछ दिनों में पंजीयक के दफ्तर से उनके पास दो बच्चों, एक लड़का व एक लड़की, के प्रमाण-पत्र आ गये।

निस्सन्देह किसी जीवित प्राणी को यह सूचना ज्ञात नहीं थी अस्तु टैलीपेथी से माध्यम को यह जानकारी मिली हो इस बात की संभावना नगण्य हो जाती है। लेकिन अभी भी कम से कम तार्किक रूप से इस बात की संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता कि माध्यम ने दिव्य दृष्टि द्वारा पंजीयक के दफ्तर की फाइल देख ली हो।

इस तरह हम देखते हैं कि माध्यमों द्वारा प्राप्त लगभग सभी सूचनाओं की व्याख्या अतीन्द्रिय प्रत्यक्षण शक्ति द्वारा संभव हो जाती है। अस्तु अन्वेषकों के समक्ष भी यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि वास्तव में मृतात्माओं द्वारा ही सूचना प्रेषित की जाती है इसका प्रमाण क्या हो सकेगा। इस प्रश्न का पूर्णत: संतोषजनक उत्तर आज तक नहीं मिल पाया है, लेकिन लेखक के विचार से यदि कोई परा-सामान्य सूचनाएं देनेवाला सन्देश ऐसा मिलता हो जिसके पीछे प्रेषक की वैयक्तिकता, प्रयोजन व किसी विशिष्ट भावाभिव्यक्ति का प्रमाण मिलता हो तो उसे बहुत अंश तक 'प्रमाण' माना जा सकता है।

गार्डनर मर्फी ने अपनी पुस्तक में एक ऐसे प्रकरण का विवरण दिया है जिसमें कि उन्हीं के शब्दों में, 'सूचना के प्रेषक की स्मृति ही लगभग पूर्णत: निश्चित रूप से सूचना का स्रोत प्रतीत होती है।'

श्रीमती लियोनार्ड नामक एक माध्यम की बैठक में एक महिला—श्रीमती लिलि टैलबोट को अपने पति की मृतात्मा से अनेक प्रकार की सूचनाएं मिलीं। टैलबोट ने ऐसी बहुत-सी बातों का जिक्र किया जो उन दोनों के अतिरिक्त किसी भी अन्य व्यक्ति को ज्ञात नहीं थीं। कई बार बहुत छोटी-मोटी मामूली-सी वस्तुओं का उल्लेख भी किया गया। अपने आप में ये वस्तुएं महत्वहीन थीं लेकिन उनके साथ ही टैलबोट के जीवन की कुछ व्यक्तिगत बातें जुड़ी हुई थीं। ऐसा लगता था कि श्री टैलबोट अपनी पत्नी को इस बात से पूर्णत:

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आश्वस्त करना चाहते हैं कि वे स्वयं उपस्थित हैं। उन्होंने बार-बार यह आश्वासन दिया कि मृत्यु वास्तव में मृत्यु नहीं थी और अब जीवन पहले से बहुत अधिक भिन्न नहीं है। वे अभी भी वैसे ही हैं।

लेकिन, इस सबके बाद भी जब श्री टैलबोट ने कहा कि वे अच्छी तरह जानना चाहते हैं कि उनकी पत्नी यह विश्वास कर रही है कि नहीं कि ये सब बातें वास्तव में उनके पति की मृतात्मा ही बता रही है तो श्रीमती टैलबोट मात्र यह कह सकीं : 'निश्चित रूप से तो नहीं, लेकिन लगता है यह सब सच होना चाहिये।'

अब अकस्मात श्री टैलबोट ने एक पुरानी कापी का विवरण देना प्रारम्भ कर दिया उसका रंग व आकार बतलाते हुए कहा कि वह गहरे लाल रंग की है और ८-१० इंच लंबी व ४-५ इंच चौड़ी है। श्रीमती टैलबोट से कहा गया कि वे इस कापी का बारहवां या तेरहवां पृष्ठ देखें। उस पर कोई ऐसी बात लिखी हुई है जो कि उस सारे वार्तालाप के बाद बहुत दिलचस्प लगेगी। कापी के सम्बन्ध में जब बार-बार बहुत सी बातें दोहराई गयीं तो श्रीमती टैलबोट की वार्तालाप में रुचि कम हो गयी। उन्हें लगा कि यह सब प्रयोजनहीन है। उन्हें इस बात का भी पूरा विश्वास नहीं था कि उन्हें वह कापी ढूंढ़ने पर भी कहीं मिल पायेगी अथवा नहीं, क्योंकि उन्हें याद आया कि कई बार उसे फिजूल समझकर वे फेंकना चाह रही थीं। इसलिये या तो उसे फेंक ही दिया गया होगा अथवा वह बहुत से अटाले के साथ किसी अंधेरे बंद कमरे में कहीं पड़ी होगी। अस्तु जब उन्हें कहा गया कि वे वह कापी देखें तो उन्होंने आधे मन से कह दिया कि वे कोशिश करेंगी। लेकिन श्री टैलबोट को इस उत्तर से शान्ति नहीं मिली। उन्होंने फिर उस कापी का विवरण देना प्रारम्भ कर दिया। इस बार उन्होंने यह भी बतलाया कि उस कापी के कवर पर विभिन्न भाषाओं की एक तालिका बनी हुई है। उन्होंने इन विभिन्न भाषाओं के नाम भी बतलाये। इस तरह बार-बार वे कापी का वर्णन करते रहे और फिर कहा कि श्रीमती टैलबोट उसका बारहवां या तेरहवां पृष्ठ अवश्य देखें। उन्होंने कहा कि वे इस बात का पक्का वायदा करें कि वे अवश्य ही ऐसा करेंगी। श्रीमती टैलबोट अब अत्यधिक 'बोर' होकर परेशान सी हो गयी थीं। उन्हें लगा कि, जैसा उन्होंने पहले सुन रखा था, बैठक के अन्त तक आते-आते माध्यम ने थकान के कारण व्यर्थ की बातें करना प्रारम्भ कर दिया है। अस्तु श्रीमती टैलबोट ने तुरन्त ही वायदा कर लिया। इसी के साथ वार्तालाप एकदम बन्द हो गया। श्रीमती टैलबोट ने चैन की सांस ली।

घर लौटने पर, कुछ घंटों पश्चात् जब श्रीमती टैलबोट ने पुरानी पुस्तकों की अलमारी खोली तो उन्हें ऊपरी खाने में पुस्तकों के पीछे एक कापी मिली। यह हूबहू बैठक में दिये गये विवरण के अनुरूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : डा. विष्णु भटनागर

थी । उसी रंग-रूप व आकार की । यहां तक कि उस पर विभिन्न भाषाओं की तालिका भी बनी हुई थी ।

श्रीमती टैलबोट की अब आतुर अंगुलियों से कापी को खोला, तेरहवें पृष्ठ पर एक पुस्तक से लिया गया यह उद्धरण लिखा हुआ था :

'मुझे कुछ ऐसी फुसफुसाहटों से जिनके बारे में यह सोचा गया होगा कि ये मुझे सुनाई नहीं देंगी और कुछ उत्सुकता या करुणापूर्ण दृश्यावलोकन से, जिसके बारे में यह अनुमान लगाया गया होगा कि मैं देख नहीं सकता हूं, मुझे पता चला कि मैं मृत्यु के निकट था . . .

'तुरन्त ही मेरा मन उस प्रसन्नता में ही गोते नहीं लगाने लगा जो कि मुझे मिलने वाली थी, बल्कि जिससे अब मैं वास्तव में अभिभूत था । मैंने बहुत पहले के भूले हुए दृश्य, मित्र, सहपाठी, यौवन एवं वृद्धावस्था के अपने साथियों को देखा । ये सभी मुझे देखकर मुस्करा रहे थे । इनकी मुस्कान में करुणा नहीं थी, इसकी अब मुझे आवश्यकता भी नहीं थी, लेकिन उसमें एक प्रकार का सौहार्द था जिसका कि समान रूप से प्रसन्न व्यक्ति एक-दूसरे से आदान-प्रदान करते हैं । मैंने अपने माता-पिता और बहनों उन सभी को जो मुझसे पहले मर चुके थे, देखा । ये लोग बोले नहीं, लेकिन फिर भी इन्होंने मुझे अपने अपरिवर्तित एवं अपरिवर्तनीय प्यार का संदेश प्रेषित कर दिया । जिस समय ये लोग दिखलाई दिये मैंने अपनी शारीरिक स्थिति को महसूस करने का एक प्रयत्न किया यानी कि मैंने इस बात की कोशिश की कि मेरी आत्मा मेरे घर में बिस्तर पर पड़े मेरे शरीर से जुड़ जाये . . . प्रयास असफल रहा। मैं मर चुका था . . .'

(ब्लैकवुड एंड संस, १८८१)

उपरोक्त घटना में निःसंदेह मृतात्मा ने अपनी वैयक्तिक पहचान का स्पष्ट प्रमाण देने की चेष्टा की है । गार्डनर मर्फी ने अपनी पुस्तक में इसे एक महत्वपूर्ण साक्ष्य माना है । ('चैलेंज ऑफ साइकिकल रिचर्स, न्यूयार्क १९६१)

१९ वीं, शताब्दि के उत्तरार्द्ध में, जबकि ऐसा लगता था कि मानो भौतिक विज्ञानियों ने यह लगभग सिद्ध कर दिया है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारी सृष्टि का और उसके साथ ही साथ मानव का भी कतिपय यांत्रिक नियमों द्वारा संचालन होता है । इंग्लैंड के कुछ शीर्षस्थ वैज्ञानिकों, दार्शनिकों एवं अन्य विद्वानों ने इस बात की वैज्ञानिक विधि से जांच प्रारम्भ करने का विचार किया । वास्तव में परा-सामान्य समझी जानेवाली घटनाएं जिनका सदियों से विश्व की लगभग संस्कृतियों में उल्लेख मिलता है, मात्र अंधविश्वास या ढकोसला ही है अथवा उनके पीछे कहीं कोई सत्यता भी है । इसी से सूत्रपात्र हुआ विश्व में एक सुनियोजित एवं सुसंगठित परा-मनोविज्ञानिक शोध कार्य का । १८८२ में इंग्लैंड में पहले शोध संस्थान की स्थापना हुई । इस संस्थान के प्रथम अध्यक्ष बनाये गये हेनरी सिजविक जो कि निर्विवाद रूप से एक उच्च कोटि के विद्वान ही नहीं थे वरन् जिनकी सत्य-निष्ठा व चरित्र की सर्वत्र धाक थी । इनके प्रमुख सहयोगी हुए श्री फेडरिक मायर्स और एडमंड गर्नी । दोनों ही क्लासिकी के विद्वान थे । बाद में विलियम बैरेट, लार्ड रेले व विलियम कुक्स जैसे विश्वविख्यात वैज्ञानिक भी इस संस्थान से आ जुड़े । इनमें से अधिकांश लोग जीवन पर्यन्त जीवन-मृत्यु की अनसुलझी गुत्थियों से जूझते रहे । इन्हीं में से एक प्रमुख समस्या यह भी थी कि मृत्यु के बाद जीवन रहता है अथवा नहीं ?

पिछली शताब्दी के अन्तिम दशक में गर्नी का, अन्तिम वर्ष में सिजविक का और इस शताब्दी के पहले ही वर्ष में मायर्स का देहावसान हो गया । देहावसान तो हो गया लेकिन आजीवन जिस गुत्थी को सुलझाने में ये लोग संलग्न रहे थे, वह तो मानवता के समक्ष अभी भी प्रश्नचिह्न बनी हुई थी । क्या मृत्यु के बाद भी इन उत्साही, कर्मठ व लगनशील, अन्वेषकों ने अपने प्रयत्न नहीं छोड़े और नवीन प्रकार के परीक्षण प्रारम्भ करके गुत्थी सुलझाने की चेष्टा की ।

इस प्रश्न का एकदम सुनिश्चित उत्तर तो नहीं दिया जा सकता, किन्तु उस समय की विश्व भर की, लगभग सभी सर्वश्रेष्ठ माध्यमों से प्राप्त, सामग्री से ऐसा ही प्रतीत होता है ।

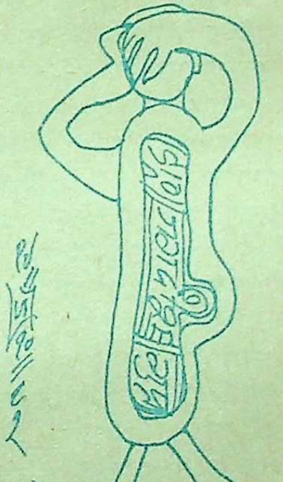

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात बड़ी विचित्र लगती है कि स्वयं मृतात्माओं द्वारा अपने अस्तित्व की पुष्टि हेतु नये प्रकार के परीक्षणों का सूत्रपात करना।

लेकिन कदाचित् हुआ यही जैसा हम पहले स्पष्ट कर चुके हैं। मृतात्माओं से प्राप्त सन्देशों को प्रमाण मानने में सबसे बड़ी अड़चन यह आ खड़ी हुई थी कि इनको अतीन्द्रिय प्रत्यक्षण शक्ति द्वारा भी व्याख्या संभव है। उपरोक्त तीनों अन्वेषकों की मृत्यु के कुछ ही समय बाद माध्यमों के द्वारा सन्देश प्राप्ति की एक नितांत नयी प्रकार की ऐसी श्रृंखला प्रारम्भ हुई जिसकी समुचित व्याख्या, अनेक अन्वेषकों के मतानुसार, मात्र अतीन्द्रिय प्रत्यक्षण शक्ति द्वारा नहीं की जा सकती। परा-मनोवैज्ञानिक साहित्य में इस श्रृंखला को 'क्रास-कारेस-पोंडेंस' (प्रतिपूरक-सादृश्य) कहा गया है।

मायर्स की मृत्यु (१९०१) के कुछ ही समय बाद इंग्लैंड में श्रीमती वैराल के स्वचालित लेखन में ग्रीक व लेटिन भाषा में अनेक बातें लिखी हुई प्राप्त हुईं। इस लेखन में धीरे-धीरे बड़ी गंभीर बातें प्रकट होने लगीं और इन पर हस्ताक्षरकर्ता के रूप में 'मायर्स' का नाम आने लगा। कोई एक वर्ष बाद अमेरिका में श्रीमती पाइपर के माध्यम से जो बातें लेखन में आयीं उनमें उन बातों का सन्दर्भ मिलने लगा जो कि इंग्लैंड के श्रीमती वेराल के लेखन में प्रकट हो रही थीं। और, इनके प्रणेता ने भी अपना नाम 'मायर्स' बतलाया। फिर एकाध वर्ष बाद श्रीमती वैराल की पुत्री कुमारी हेलन वेराल के स्वचालित लेखन में यही बात होने लगी। इसके लेखन में उन विषयों का सन्दर्भ उभरने लगा जो कि श्रीमती वेराल व पाइपर के माध्यम से प्रकट हो रहे थे। इधर, भारत में रह रही, विख्यात लेखक रूडयार्ड किपलिंग की बहिन, श्रीमती फ्लेमिंग (जो कि 'श्रीमती हॉलैण्ड' के नाम से जानी जाती हैं) ने स्वचालित लेखन के प्रयोग प्रारम्भ किये। कुछ ही दिनों में मायर्स इनके लेखन में भी प्रकट होने लगे। एक लेखन में उन्होंने श्रीमती हॉलैण्ड को निर्देश दिया कि वे अपना लेखन (स्क्रिप्ट) श्रीमती वेराल को ५, सेल्विन गार्डन्स, कैम्ब्रिज के पते पर भेज दें। श्रीमती हॉलैण्ड यद्यपि श्रीमती वेराल के नाम से परिचित थीं लेकिन न तो वे कभी कैंब्रिज गयी थीं न ही, उन्होंने कम से कम सचेतन रूप में सेल्विन गार्डन्स का नाम सुना था। अस्तु, श्रीमती हॉलैण्ड ने अपने कागजात ब्रिटिश शोध संस्थान की सचिव मिस एलिस जॉन्सन को भेज दिये। बाद में प्राप्त लेखन-सामग्री को भी वह इसी तरह उन्हें ही भेजती रहीं। श्रीमती वेराल, श्रीमती पाइपर, व कुमारी वेराल को प्राप्त सामग्री के साथ-साथ कुमारी जॉन्सन के पास श्रीमती हॉलैण्ड की सामग्री भी एकत्रित होने लगी। लेकिन कुछ वर्षों बाद ही यकायक कुमारी जॉन्सन का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ कि इन सभी माध्यमों द्वारा प्रेषित लेखन में मायर्स,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्नी व सिजविक किसी सुनियोजित रूप से अपने अस्तित्व की निरंतरता का प्रमाण देने की चेष्टा कर रहे हैं। धीरे-धीरे इस परीक्षण में कई और माध्यम आ जुड़ीं। इधर इन सभी माध्यमों द्वारा प्राप्त सामग्री का गहराई से वैज्ञानिक अध्ययन करने हेतु विद्वानों का एक समूह आ जुटा इसमें सर ओलिवर लॉज, श्रीमती सिजविक, कुमारी जॉन्सन और जे. ई. पिड्डिंगटन आदि प्रमुख थे।

इस तरह, परीक्षणकर्ताओं का एक समूह मृत्यु के उस पार था, और इस पार था एक समूह माध्यमों का जिन्हें स्वयं यह ज्ञात नहीं होता था कि उनके माध्यम से जो सामग्री आ रही है उस सबका अर्थ क्या है। सामग्री का अर्थ-निर्वचन व प्रयोजन आदि को आंकने हेतु था एक तीसरा समूह अन्वेषकों का जिसका ज़िक्र हमने ऊपर किया है।

अनेक विद्वानों का जिन्होंने कि इस सामग्री का गहराई से अध्ययन किया है यह मानना है कि ये प्रयोग निश्चित रूप से मृतात्माओं से सन्देश-प्राप्ति की संभावना की पुष्टि करते हैं। लेकिन कुछ विद्वानों ने इस संभावना की ओर पुनः इंगित किया है कि इन सभी प्रयोगों का प्रणेता श्रीमती वेराल का अचेतन मन ही रहा हो, न कि मायर्स आदि की मृतात्माएं, और उन्हीं के अचेतन मन से टुकड़ों-टुकड़ों में टैलीपेथी द्वारा अन्य माध्यमों ने सूचनाएं प्राप्त कर ली हों।

लेखक की अपनी मान्यता यह है कि अभी तक के सभी प्रयोगों-परीक्षणों के आधार पर इस गुत्थी का उत्तर सुनिश्चित 'हां' या 'ना' में नहीं दिया जा सकता है। कोई भी संभावना मात्र 'आंशिक' ही हो सकती है।

अंश की मात्रा हमारे विचार से इस बात पर निर्भर करनी चाहिये कि कथित मृतात्माओं से प्राप्त सामग्री कितनी मात्रा में निम्न तीन विशेषताओं को प्रकट करती है :

१. मृतक की पहचान हेतु उसकी वैयक्तिकता की अभिव्यक्ति,

२. सन्देश के पीछे प्रयोजन, व

३. मृतक द्वारा जिसे सन्देश भेजा गया है उसके प्रति किसी विशेष भाव (जैसे, प्यार, कृतज्ञता आदि) की अभिव्यक्ति।

किस प्रकरण में इनकी कितनी मात्रा में अभिव्यक्ति हुई है यह भी अधिकांशतः एक व्यक्तिनिष्ठ मूल्यांकन की बात ही हो सकती है। फिर भी, यह बतलाना उचित होगा कि यद्यपि कुछ विद्वान् अभी भी स्थिति को 'ड्रा' मानते हैं, अधिकांश शोधकर्ताओं की मान्यता यह है कि तराजू का पलड़ा मृतात्माओं से सन्देश प्राप्ति की संभावना के पक्ष में ही अधिक झुका हुआ है। वैज्ञानिक रूप से सुनिश्चित उत्तर के लिए अभी और गहन व गंभीर शोध की आवश्यकता है।

—राम भवन, पाली बाजार,
ब्यावर, राजस्थान

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जेम्स जॉयस कृत 'द डैड' का हरिमोहन शर्मा द्वारा सरल - संक्षित हिंदी रूपान्तर

मृत्युंजयी प्रेम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८२२ में डब्लिन (आयरलैण्ड) के निकट जन्मे जेम्स जॉयस का अधिकांश जीवन फ्रांस और स्विट्ज़रलैण्ड में (जहां १९०१ में उनका निधन हुआ) निर्वासित व्यक्ति के रूप में बीता। जीवन भर वे अंधता और निर्धनता के विरुद्ध संघर्ष करते रहे, और इस संघर्ष-काल में उन्होंने अंग्रेजी साहित्य को जो अपूर्व कथाएं और उपन्यास दिये, उन्होंने मेरुदंड के तुल्य उसे एक नयी सामर्थ्य और समृद्धि तो प्रदान की ही, उसमें नये-नये आयामों को भी जोड़ा। प्रस्तुत उपन्यास में रूमानी संवेदना और कसकभरी निराशा के बारीकी से तराशे हुए, उनके अनेक बिंब-विधान, मृत्युंजयी प्रेम स्पंदित हैं।

मेहमानों का तांता लगा हुआ था। लिली एक को अन्दर ले जाती तो इस बीच दो-तीन मेहमान और आ जाते। जैसे ही कोई नया मेहमान आता, अपने कमरे में बैठी कुमारी केट और कुमारी जूलिया उससे पूछती, 'कौन आया ?' और, लिली नये मेहमानों का परिचय देकर, अन्य अभ्यागतों के स्वागत के लिए दरवाज़े की ओर बढ़ जाती।

मोरकन परिवार का वार्षिक नृत्य-समारोह हर वर्ष बड़ी धूमधाम से मनाया जाता था। मोरकन परिवार के सब मित्र और परिचित इसमें बिला नाग़ा भाग लेते थे। यह क्रम पिछले तीस वर्षों से चला आ रहा था, तब से जब से अपने भाई पैट की मृत्यु के बाद, केट और जूलिया ने अपनी भांजी मेरी जेन के साथ मिस्टर फुलहैम के लंबे-चौड़े घर को किराये पर लेकर उसमें रहना आरंभ किया था। मेरी की नृत्य और संगीत में गहरी रुचि थी, और उसने संगीत अकादमी से इन दोनों कलाओं का विधिवत प्रशिक्षण भी प्राप्त किया था।

प्रायः सभी मेहमान आ चुके थे, गैब्रियल और उसकी पत्नी को छोड़कर। तीनों—केट, जूलिया और मेरी बार बार लिली से पूछ लेती थीं, 'अभी गैब्रियल और उसकी पत्नी आये या नहीं ?' और जब लिली 'ना' कहती, तो उनकी चिन्ता बढ़ जाती।

अंत में जब गैब्रियल कॉनराय अपनी पत्नी ग्रैटा के साथ आया, तो लिली का चेहरा खुशी से खिल उठा। वह बचपन से गैब्रियल से परिचित थी, और उसे वे क्षण अच्छी तरह याद थे, जब गैब्रियल उसकी गुड़ियाओं को सजाने-संवारने में उसकी मदद किया करता था। वह गैब्रियल को बहुत चाहती थी, और गैब्रियल भी उसे बहुत चाहता था। वह जब आता था, उसके लिए कोई न कोई भेंट अवश्य लाता था। इस बार भी उसने उसे एक बढ़िया उपहार दिया।

केट और जूलिया को भी गैब्रियल को देखकर बहुत खुशी हुई। वह उनकी मृत बहन एलैन का एकमात्र पुत्र था, और इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों मौसियों का बहुत आदर करता था।

'इतनी देर क्यों लगा दी ?' जूलिया ने गैब्रियल से पूछा।

'अरे, कुछ पूछो मत, जूलिया मौसी ! बाहर देखिये, कितनी बर्फ पड़ रही है। रास्ते में ग्रैटा को शौक़ चर्राया कि वह थोड़ी देर नंगे पांव बर्फ़ पर चलेगी। बस, इसी चक्कर में देर हो गयी, और ऊपर से ग्रैटा को ठंड भी लग गयी। देखिये कैसी कांप रही है ?'

'यह क्या बचपना है, ग्रैटा !' जूलिया ने ग्रैटा के नंगे पांवों पर एक निगाह डालते हुए, ऐसे पूछा, मानो ग्रैटा ने कोई बहुत बड़ा अपराध कर दिया हो। 'तुम्हारे मोजे कहां हैं ? ठंड तो लगेगी ही।'

'आप भी किसकी बातों पर विश्वास कर रही हैं, मौसी ! बर्फ़ पर मैं नहीं, ये खुद चले थे,' ग्रैटा ने मुस्करा कर कहा।

'मगर तुमने ऐसी ठंड में मोजे क्यों नहीं पहन रखे हैं ? इसीलिये तो ठंड के कारण कांप रही हो।'

'ठंड की वजह से नहीं, हर्ष की पुलक में कांप रही हूं, मौसी ! आप तो जानती ही हैं कि इस वार्षिक समारोह में भाग लेकर मुझे कितनी प्रसन्नता होती है !'

०००

'तुमसे ज़्यादा प्रसन्नता तो हमें होती है, बेटी ! इस समारोह में इतने लोग आते हैं, लेकिन जब तक तुम दोनों नहीं आते, मुझे संतोष नहीं होता। तुम्हारे आने पर ही, हमें राहत मिलती है,' केट ने कहा !

ये लोग आपस में बात कर ही रहे थे कि हॉल में अनेक जोड़ों ने नाचना शुरू कर दिया था। कुछ मेहमान पीने में लगे थे, और कुछ पार्टनरों को अपने साथ नाचने के लिए पटाने में। एक कोने में मेरी पियानो पर हाथ फेर रही थी; अभ्यास पूरा करके वह सबके सामने अपने 'सोलो'-गायन का प्रदर्शन करने वाली थी।

गैब्रियल ने सब उपस्थित महिलाओं पर एक नज़र डालकर, कुमारी आयवर्स को अपने साथ नाचने के लिए चुना। इस चुनाव का एक कारण यह भी था कि कुमारी आयवर्स को साहित्य में रुचि थी, और उसे आशा थी कि वह उसके उस साहित्यिक कॉलम को अवश्य शौक़ से पढ़ती होगी, जो वह नियमित रूप से 'डेली एक्सप्रेस' के लिए छद्म नाम से लिखता था, और जो स्वयं उसके मतानुसार, पाठकों में काफी लोकप्रिय था।

नाचने के बाद जब उसने अपने कॉलम के प्रति कुमारी आयवर्स की प्रतिक्रिया जानने के उद्देश्य से, हल्के से उसका ज़िक्र किया, तो आयवर्स सहसा गंभीर होकर बोली, 'अच्छा, तो वह कॉलम लिखने वाले व्यक्ति आप ही हैं !

'हां। क्यों, तुम्हें वह प्रकाशित कॉलम पसंद नहीं है ?'

'कॉलम तो ठीक-ठाक है, मगर वह अखबार एकदम घटिया है। ऐसे घटिया अखबार के साथ जुड़ने पर आपको शर्म आनी चाहिये।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गैब्रियल को आयवर्स से ऐसी गुस्ताख टिप्पणी की आशा न थी। उसे पता नहीं चला कि आयवर्स 'डेली एक्सप्रैस' को घटिया पत्र क्यों बता रही थी? क्या इसलिये कि वह आयरलैण्ड की शासन-नीति की आलोचना करता रहता था? मगर, अखबारों की आलोचनाओं से क्या होता है? वह तो 'डेली एक्सप्रैस' में यह कॉलम इसलिये लिखता था कि उसे अपने विचार व्यक्त करने की पूरी आज़ादी थी, और इस बहाने उसे अच्छी-अच्छी किताबें आलोचना के लिए मुफ्त मिलती रहती थीं, और थोड़ी आमदनी भी हो जाती थी। वह आयवर्स को बताना चाहता था कि साहित्य का राज-नीति से कोई लेना-देना नहीं है, लेकिन कुछ सोचकर चुप रह गया। हां, इतना उसने दबे स्वर में अवश्य कहा कि उसका लेखन राजनीति से असंबद्ध होता है। इस पर, आयवर्स ने अपना गंभीरता का नक़ाब फेंक कर कहा, 'अरे, आप तो मेरे मजाक का बुरा मान गये,' और यह कहकर उसने ग्रैब्रियल का हाथ दबा दिया। फिर वह अपने कॉलेज की राजनीति का जिक्र करने लगी। इस चर्चा में गैब्रियल ने बड़े उत्साह के साथ भाग लिया, क्योंकि वह भी आयवर्स की भांति कॉलेज में पढ़ाता था। लेकिन, उसने पाया कि आयवर्स अनेक पूर्वाग्रहों से ग्रस्त है, और ज़रूरत पड़ने पर झूठ बोलने से भी बाज़ नहीं आती। वह जल्दी ही उससे ऊब गया, और बातें करने के लिए किसी और साथी की तलाश करने लगा।

तभी, उसने अपनी पत्नी को अपनी ओर आते देखा। उसने गैब्रियल के पास आकर, उसके कान में कहा, 'तुम्हें हंसों को जिबह करने के लिए रसोईघर में बुलाया जा रहा है।'

'जाता हूं।'

'आयवर्स के साथ तुम्हारा क्या झगड़ा हुआ था?'

'झगड़ा? आयवर्स के साथ? नहीं तो।'

'क्या मालूम? वह सबके सामने ऐसा ही कुछ कह रही थी। ख़ैर, मैं आर्की के पास जाती हूं, उसे गाने के लिए मनाने के लिए।'

'हां, अब याद आया। आयवर्स एक यात्री-दल के साथ पश्चिम आयरलैण्ड में गैलवे के सफ़र पर जा रही थी। वह चाहती थी कि हम दोनों भी उसके साथ चलें। मैंने मना कर दिया। शायद इसीलिये......'

'मना क्यों कर दिया? चलो न बड़ा मज़ा रहेगा।'

'तो तुम उसके साथ चली जाओ, मज़ा लूटने के लिए।'

ग्रैटा ने क्षण भर के लिए अपने पति को देखा, और कुछ कहना चाहा, मगर न जाने क्या सोचकर रुक गयी, और फिर कुछ दूर पर खड़ी मिसेज़ मॉलिन्स के पास जाकर कहने लगी, 'आप कितनी खुशकिस्मत हैं, मिसेज मॉलिन्स! कितने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नम्र और समझदार हैं आपके पति!'

सुनकर, मिसेज़ मॉलिन्स चकित रह गयीं। और उनसे भी अधिक चकित-स्तब्ध थे स्वयं उसके पति—गैब्रियल! वे एक लंबी और ठंडी सांस लेकर रह गये। यह अनुभव उनके लिए नया नहीं था। सबके सामने उन्हें ज़लील करने की ग्रैटा की आदत थी। जब भी मौक़ा मिलता, वह खुले आम उन्हें अपमानित करने से बाज़ नहीं आती थी। वह चिड़चिड़ा होने लगा।

०००

उसने देखा कि बाकी सब मेहमान भी उसी के समान चिड़चिड़े हो रहे थे। लेकिन, उनके चिड़चिड़ेपन का कारण यह था कि वे सब बहुत भूखे थे; भोजन का समय कभी का हो चुका था, और भोजन अभी तक तैयार नहीं हुआ था।

जूलिया, केट और मेरी ने उन्हें नये और पुराने गायकों के बारे में बातें करके उलझाना चाहा, मगर जिस तरह भूखे भजन नहीं होता, वैसे ही, भूखे संगीत-चर्चा भी अच्छी नहीं लगती।

आख़िर वह घड़ी भी आयी, जब यह ऐलान हुआ कि भोजन परसा जाने वाला है, और सब मेहमान डिनर-टेबुल पर अपने-अपने स्थान ग्रहण कर लें।

भोजन परसने की जिम्मेवारी ग्रैटा ने अपने ऊपर ले ली थी, और वह इस जिम्मेवारी को बड़े चाव और जोश से अंजाम दे रही थी। युवकों और विशेष रूप से अविवाहित युवा-मेहमानों पर उसकी विशेष कृपा थी। ये युवा-मेहमान भी उससे बड़े स्नेह और मुग्ध भाव से बातें कर रहे थे। गैब्रियल यह सब ध्यान-पूर्वक देख रहा था।

मेहमानों में गैब्रियल को छोड़, प्रायः सभी आर्की का, जो एक अच्छे गायक थे, और जिनकी आवाज़ बहुत सुरीली थी, गायन सुनने के लिए उत्सुक थे। लेकिन, तभी जूलिया ने ग्रैब्रियल के भाषण की घोषणा कर दी, और सब गैब्रियल की ओर देखने लगे। पहले नृत्य-समारोह में ग्रैब्रियल ने अपनी इच्छा से मेज़बानों की प्रशंसा में एक छोटा सा भाषण दिया था; तब से उसका भाषण प्रति वर्ष होने वाले नृत्य-समारोह का एक अनिवार्य अंग बन गया था।

गैब्रियल ने खंखार कर, चारों ओर देखा, और फिर कहना आरंभ किया, 'देवियो और सज्जनो! यह पहला अवसर नहीं है, जब हम सब इतने प्रेमल और सत्कारशील मेज़बानों के मेहमान हुए हैं।' (इस प्रशंसात्मक उद्गार पर खूब तालियां बजीं, और उसे सुनकर, खुशी के मारे, जूलिया, केट और मेरी के चेहरे लाल हो गये।) 'जैसे जैसे समय बीतता जाता है, ऐसे हार्दिक और मेहमान-नवाज़ लोग कम होते जाते हैं। केवल, ब्रिटेन में ही नहीं, विदेशों में भी ऐसी सुखकर और अंतरंग परंपराओं का अंत होता जा रहा है, जो निश्चय ही एक शुभ लक्षण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र : श्रवण कुमार

नहीं है। नयी पीढ़ी जिन नये आदर्शों और सिद्धांतों से प्रेरित है, वे हम पुरानी पीढ़ी वाले लोगों को सर्वथा अपरिचित और विचित्र लगते हैं। वे सुनने में बौद्धिक और शानदार भले ही लगें, लेकिन वे मानवीयता और सहृदयता से सर्वथा रहित हैं। ऐसे में इस सच्ची और हार्दिक मेहमान-नवाज़ी को देखकर, आशा बंधती है कि घृणा और तिरस्कार के इस युग में भी ऐसे कोने मौजूद हैं जहां निष्कलंक स्नेह की मधुरिमा व्याप्त है।'

फिर तालियां बजीं। जूलिया की आंखें नम हो आयीं।

ग्रैब्रियल ने कुछ क्षण चुप रहकर, फिर कहना शुरू किया, 'लेकिन इस वर्ष इस नृत्य-समारोह में भाग लेकर, मुझे यह देखकर बहुत दुख हुआ कि दो मेहमान, जो पिछले वर्ष के नृत्य-समारोह में उपस्थित थे, इस वर्ष, निधन के कारण, दुर्भाग्य से हमारे बीच मौजूद नहीं हैं। यह दुख यह सोचकर और अधिक बढ़ जाता है कि धीरे-धीरे इस समारोह में भाग लेने वाले मेहमानों की संख्या घटती ही जायेगी। और, शायद वह दिन भी आ जायेगा, जब यह सुखद वार्षिक समारोह एक याद बन कर रह जायेगा। लेकिन, जब तक वह अभागा दिन आये, हमें जी खोलकर इस समारोह के प्रत्येक क्षण का छककर उपयोग करना चाहिये। अंत में, मैं अपने सभी साथी मेहमानों से प्रार्थना करता हूं कि वे उठकर अपने तीनों मेज़बानों के उत्तम स्वास्थ्य, लंबी आयु और समृद्धि का जाम पीकर, उनके लिए भगवान से प्रार्थना करें।' जैसे ही ग्रैब्रियल ने अपना भाषण पूरा किया, सब मेहमान उठकर गाने लगे,

'फॉर दे ऑर जॉली गे फैलोज़ !
फॉर दे ऑर जॉली गे फैलोज़,
फॉर दे ऑर जॉली गे फैलोज़,
विच नोबडी कैन डिनाय !'

यह जयघोष क़रीब दस मिनट तक चलता रहा।

००००

हालांकि रात काफ़ी हो चुकी थी, और बाहर बर्फ़ भी खूब पड़ रही थी, तथापि कई मेहमान जाने को उद्यत थे। जूलिया, केट और मेरी ने उन्हें रोकने की खूब कोशिश की, लेकिन उनका तर्क था कि उन्हें दूर नहीं जाना है, और जाने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए उन्हें बंद घोड़ागाड़ियां बंगले से बाहर निकलते ही मिल जायेंगी। तीनों मेजबान-महिलाओं ने ऐसे मेहमानों को जाने दिया। लेकिन ग्रैब्रियल, ग्रैटा, आर्की (गायक) तथा अन्य कुछ चुने हुए मेहमानों को, उन्होंने उनके बहुत इसरार करने के बावजूद नहीं जाने दिया।

जब तीनों मेज़बान-महिलाएं हॉल के दरवाजे पर खड़ी होकर मेहमानों को विदा कर रही थीं, ग़ैब्रियल एक अंधेरे कोने में खड़ा, सीढ़ी के एक अंधेरे कोने में खड़ी एक महिला को देख रहा था। यह महिला थी उसकी पत्नी ग्रैटा जो हर तरफ़ से बेख़बर होकर, ध्यानपूर्वक गायक आर्की के एक शोकपूर्ण गीत को सुन रही थी। उसे यह देखकर आश्चर्य हो रहा था, क्योंकि एक तो उसकी पत्नी की संगीत में रुचि नहीं थी, और शोकपूर्ण संगीत में तो बिलकुल नहीं। उसे हल्का-फुल्का संगीत, और चटपटे गाने ही पसंद आते थे। वह एक आमोदप्रिय महिला थी, जिसे हंसना-खेलना और गपशप करना ज़्यादा भाता था। इसलिये, गंभीर प्रकृति के अपने पति के स्वभाव के साथ उसका स्वभाव मेल नहीं खाता था।

ग्रैब्रियल को अपनी पत्नी की आमोद-प्रियता में कभी-भी छिछोरापन लगने लगता था, क्योंकि वह स्वयं गंभीर प्रकृति का आदमी था, और उसे हंसी-मज़ाक भी शाइस्ता ढंग का पसंद था। लेकिन, इस समय उसे अपनी पत्नी बड़ी गरिमामयी और साथ ही बड़ी रहस्यमयी भी लग रही थी, और वह बड़े मुग्ध भाव से उसे देख रहा था। उसे वह, इस समय, एक महिला या पत्नी न लगकर एक रहस्यमय प्रतीक लग रही थी। यदि वह कलाकार होता, तो अपने कैनवेस में उसके इस अनोखे रूप को हमेशा-हमेशा के लिए क़ैद कर लेता। इस क्षण, वह सचमुच एक कलाकृति ही लग रही थी, ऐसी कलाकृति, जिसका शीर्षक 'लवलीना' भी उसे सूझ गया था।

मेहमानों को विदा करके तीनों मेज़बान-महिलाएं वापस लौट रही थीं। तीनों खिलखिलाकर हंस रही थीं, शायद किसी मेहमान द्वारा किये गये मज़ाक को लेकर। लेकिन, ग्रैब्रियल का ध्यान उनकी ओर न गया। वह अभी तक अपनी पत्नी को देखने में लगा था, जो सीढ़ियों के उस पार से आते शोकपूर्ण गीत में खोयी खड़ी थी।

हॉल का दरवाज़ा बंद हो जाने की वजह से, अब गायक और पियानो दोनों के स्वर पूर्वापेक्षा अधिक स्पष्ट सुनायी दे रहे थे। दोनों ही स्वर गैब्रियल को बेमेल और उखड़े-उखड़े से लग रहे थे, और उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि आख़िर उस गीत में ऐसा क्या है, जिसने उसकी पत्नी को इतना बांध रखा है?

अभी तक उसने गीत के शब्दों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया था; अब, पहली बार, उसने पूरा ध्यान लगाकर, आर्की के भर्राये हुए कंठ से निकलते इन शब्दों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को सुना :

'ओह ! वर्षा की बूंदें मेरी लटों पर पड़ रही हैं,

और ओस मेरी त्वचा को भिगो रही है; लेकिन

मेरा प्रेम ख़ामोश सोया पड़ा है !'

अरे, यह तो आयरलैण्ड का बहुत पुराना लोकगीत 'आग्रीम की लड़की' है, जिसे वह बचपन से, लड़कियों के मुंह से सुनता चला आ रहा है। गीत शोकपूर्ण अवश्य है, लेकिन ऐसे अनेक शोकपूर्ण लोकगीत आयरलैण्ड में प्रचलित हैं। लोग उन्हें सुनते हैं, और फिर भुला देते हैं।

तभी, ग्रैब्रियल ने मेरी को कहते सुना, 'कमाल है ! आर्की को गाने के लिए यह बेकार का गाना ही मिला। मैं अभी जाकर उससे कोई अच्छा गाना गाने को कहती हूं।'

'हां, गाना मुझे भी अच्छा नहीं लगा,' केट ने मेरी की बात का अनुमोदन किया।

मेरी तेज़ी से सीढ़ियों की ओर बढ़ी, लेकिन वह बीच में ही थी कि गाना भी बंद हो गया, और पियानो भी।

गैब्रियल जैसे एक नींद से जागा।

०००

'क्या हुआ ? गाना क्यों रुक गया ?' मरी ने सीढ़ियों के एक अंधेरे कोने में खोयी सी खड़ी ग्रैटा को देखकर, उससे पूछा।

'आर्की ऊपर ही आ रहे हैं।' ग्रैटा ने बताया।

आर्की को अपने दो-तीन प्रशंसकों के साथ ऊपर आते देखकर, मेरी ने उनसे कहा, 'आपने गाना क्यों बंद कर दिया, मिस्टर आर्की ? कितना अच्छा तो गा रहे थे आप ! मैं ऊपर आकर आपका गाना सुनने वाली थी।'

'मैं अब और अधिक नहीं गा सकता,' आर्की ने भर्राये हुए स्वर में कहा, 'जुकाम और ठंड की वजह से मेरा गला बैठा हुआ है।'

'इसीलिये तो हमने भी ज़्यादा इसरार नहीं किया,' उनकी एक प्रशंसिका कुमारी कैलघन ने चिंतित स्वर में कहा।

'काश ! आप एक-दो गाने सुना देते ! आप तो जानते ही हैं कि मैं आपके गायन की कैसी दीवानी हूं।' मेरी ने इतराते हुए कहा।

'आपको गाना सुनने की पड़ी है, और यहां मैं बेमौत मरा जा रहा हूं,' आर्की ने ओवरकोट पहनकर, हॉल के बाहर जाते हुए कहा। उनके इस रुखे और अशिष्ट उत्तर को सुनकर, किसी की हिम्मत न उन्हें रोकने की हुई, और न दुबारा गाना सुनाने की प्रार्थना करने की।

मगर, दरवाज़े के बाहर जाते ही मिस्टर आर्की की खांसी और बढ़ गयी। अब उन्हें वापस हॉल में आने को मजबूर होना पड़ा। गैब्रियल ने उनके पास जाकर, हमदर्दी भरे स्वर में कहा, 'आप कुछ देर आराम करें, मिस्टर आर्की ! एक-दो घंटे बाद, सुबह हो जायेगी, और फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं और मेरी पत्नी भी आपके साथ चलेंगे। लेकिन, फिलहाल आपको आराम की सख्त ज़रूरत है। खांसी का एक अचूक इलाज है—पूर्ण विश्राम।'

खांसी के इस नायाब इलाज के बारे में सुनकर, सब खांसी के अपने-अपने इलाजों के बारे में बताने लगे। जब इन इलाजों का ब्यौरा ख़त्म हुआ, तो केट ने कहा, 'इस साल सर्दी भी तो बहुत पड़ी है, कमबख़्त ! इतनी बर्फ़ मैंने पिछले तीस सालों में पहली बार देखी है।'

आर्की दो-दो कंबलों में लिपट कर, एक कमरे में आराम करने चले गये। शेष व्यक्तियों को नींद नहीं आ रही थी, इसलिये वे अंगीठी के पास बैठकर, बातें करते हुए, सुबह का इन्तज़ार करने लगे। गैब्रियल को यह देखकर खुशी थी कि ग्रैटा की खोयी हुई खुशियां और मस्ती वापस लौट आयी थीं, और अब वह, अन्य महिलाओं के साथ, हस्ब-मामूल बातें कर रही थी। अंगीठी की रोशनी में उसका खुशी से दमदमाता हुआ चेहरा गैब्रियल को और भी प्यारा और मोहक लग रहा था। उसे देखकर गैब्रियल को अपने अंदर एक अपूर्व साहस, गौरव और हर्ष की अनुभूति हो रही थी। वह एक ऐसी कोमलता भी अनुभव कर रहा था, जो उसने पहले कभी अनुभव नहीं की थी।

०००

सुबह होने पर, जब वह आर्की और अपनी पत्नी के साथ ट्रेन पकड़ने के लिए स्टेशन की ओर जाने लगा, तो उसने ग्रैटा को ठीक अपने सामने, और आर्की के साथ-साथ चलते पाया। ग्रैटा उसे इस समय भी बड़ी मोहक और आकर्षक प्रतीत हो रही थी, और उसका मन हो रहा था कि आर्की की पर्वाह किये बिना, वह आगे बढ़कर अपनी पत्नी को पीछे से दबोच ले, और उसके गालों और होठों पर चुंबनों की झड़ी लगा दे। अपने को रोक पाना उसके लिए बड़ा कठिन लग रहा था, और वह यही सोचकर अपने को मना रहा था कि घर पहुंच कर जब वे दोनों अकेले होंगे तब वह उसे जी भर कर प्यार कर सकेगा।

चलते-चलते, उसकी आंखों के सामने वे दृश्य बार-बार घूम जाते थे, जिनमें उसने ग्रैटा को जी भर कर प्यार किया था और उसने भी उतनी ही उमंग के साथ इस प्यार का प्रतिदान किया था।

स्टेशन पर आर्की, गैब्रियल और उसकी पत्नी से विदा लेकर, अपनी ट्रेन में चला गया, और वे दोनों प्लेटफार्म पर अकेले रह गये। ठंड बहुत थी, लेकिन ग्रैटा की निकटता जैसे उसे जला रही थी—अंदर से भी, और बाहर से भी। जब उसने ग्रैटा को टिकट पकड़ाये, तो उसे लगा, जैसे वह अपनी पत्नी को पहली बार छू रहा है; बिजली की करंट जैसा 'शॉक' लगा उसे। पहली बार उसने यह सोच कर हर्ष और गर्व अनुभव किया कि ग्रैटा उसकी पत्नी है, उसकी अपनी है। वह उसे छिप-छिप कर देख रहा था, जैसे वह उसकी पत्नी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, अज्ञात प्रेमिका हो। उसे देखते ही, उद्दाम वासना की एक लहर न जाने कहाँ से आकर उसे सराबोर कर जाती, और उसमें भीगने के बाद वह पाता कि उसके चारों ओर मधुर संगीत की लहरियाँ प्रवाहित हो रही हैं।

वह कल्पना करने लगा कि कुछ देर बाद, जब वे कमरे में अकेले होंगे, तब वह उसके साथ कैसे पेश आयेगा? वह उसके पास जाकर मृदुता से कहेगा, 'ग्रैटा!' और वह चूंकि कपड़े बदल रही होगी, इसलिए एकदम उसकी अस्फुट आवाज़ नहीं सुन पायेगी। उसका ध्यान अपनी व्यग्रता की ओर आकर्षित करने के उद्देश्य से कई बार अस्फुट स्वर में उसका नाम लेकर पुकारना होगा। और तब वह मुड़कर उसकी ओर देखेगी, और फिर...

...अपने घर के निकट के स्टेशन पर उतर कर, उन्होंने जल्दी घर पहुंचने के लिए, एक घोड़ागाड़ी की। गाड़ी पुरानी थी, और हिचकोले खाती हुई चल रही थी। अच्छा ही हुआ, क्योंकि इसके कारण गैब्रियल को अपनी पत्नी से बातें करने का अवसर ही नहीं मिला। इसके अलावा, उसने महसूस किया कि उसका दिल बुरी तरह से धड़क रहा है, और इस वजह से ग्रैटा से कुछ भी नहीं कर पायेगा, और कुछ कहेगा भी तो ग्रैटा को लगेगा कि वह जुनून में कुछ बक रहा है। रास्ते भर वह बदहवास रहा।

लेकिन गाड़ी से उतरते समय, जब ग्रैटा ने नीचे उतरने के लिए हल्के से उसकी बांहों का सहारा लिया, तो उसे मौका मिला, और उसने ज़ोर से उसके हाथों को दबा दिया। तब उसे जो सुखानुभूति हुई, वह अवर्णनीय थी। इसी सुखानुभूति में उसने गाड़ीवान को एक पौण्ड टिप दे डाला।

घर में प्रवेश करते-करते उसे एक और विचित्र अनुभूति हुई। उसे लगा, ग्रैटा उसकी नयी-नवेली प्रेमिका है और वह उसे भगाकर अपने घर लाया है और पहली बार उसका आलिंगन करेगा, पहली बार उसके होंठों को चूमेगा। अचानक एक सभ्य प्रोफेसर से वह एक असभ्य और जंगली हब्शी बनने लगा... अपने ऊपर से उसका नियंत्रण खोता जा रहा था, और एक पागलपन-सा उस पर सवार होता जा रहा था।

०००

लेकिन ग्रैटा को उसकी मनःस्थिति के बारे में कुछ पता न था। उसने घर में आते ही अपने पति से पूछा 'गाड़ीवाले को एक पौण्ड टिप देने की क्या जरूरत थी? तुम तो ऐसे मामलों में महा कंजूस हो। इतने उदार कब से बन गये?'

'आदमी जब प्रेम में होता है तो अपने आप उदार बन जाता है। और आज प्रेम मेरे हृदय कपाट खोलकर सीधा अंदर घुस आया है। मैं तुमसे प्रेम करता हूं, ग्रैटा!' कहते-कहते उसका स्वर कांपने लगा, और चेहरा लाल हो आया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतिदेव शायद क्रिसमस के 'मूड' में आकर बहक रहे हैं, यह सोचकर ग्रैटा ने गैब्रियल की बातों पर ध्यान नहीं दिया। लेकिन, पति के इस मूड और उसकी उदारता को देखकर वह बहुत खुश थी और अपनी इस खुशी का इजहार उसने अपने पति के होठों का हल्के से चुंबन लेकर किया।

जिस मूड में गैब्रियल था, उसमें उसे अपनी पत्नी के इस प्रतीकात्मक चुंबन का कुछ और ही अर्थ लिया। उसने बड़ी मृदुता के साथ ग्रैटा के बालों को सहलाना आरंभ कर दिया। ग्रैटा के चुंबन ने उसके दिल की धड़कनों को और ज़्यादा तेज़ कर दिया था. और वह चाहता था कि ग्रैटा का प्रेम का प्रतिदान इस चुंबन तक ही सीमित न रहे... उसे यह विश्वास हो गया था कि ग्रैटा ने उसकी उत्कट मिलन-कामना को भांप लिया है और वह भी उससे मिलन के लिए उतनी ही व्यग्र और इच्छुक है। लेकिन, उसे आश्चर्य हो रहा था कि ग्रैटा, जो प्यार के मामले में पूरी तरह अनिरोधित है, इतने संकोच से क्यों काम ले रही है ?

उसने ग्रैटा का एक हाथ अपने हाथ में लेकर उसे झुलाना शुरू कर दिया। फिर, धीरे से उसे अपनी ओर खींचते हुए प्यार से पूछा, 'क्या सोच रही हो, ग्रैटा डियर ?'

ग्रैटा ने कोई उत्तर नहीं दिया, और शून्य में ताकती रही।

'क्या बात है, ग्रैटा ?' उसने फिर बड़ी नरमी से पूछा, 'बताओ न ! वैसे, मैं शायद जानता हूं कि बात क्या है ?'

ग्रैटा ने तत्काल कोई उत्तर नहीं दिया, और फिर, सहसा, फूट-फूटकर रोने लगी। फिर सुबकते-सुबकते बोली, 'मुझे वह गीत याद आ गया था—'आग्रीम की लड़की।' और वह जाकर, बिस्तर पर पड़ गयी, और तकिये में मुंह छिपाकर रोने लगी।

'लेकिन उस गीत को याद करके, रोने की क्या वजह थी ? गीत शोकपूर्ण अवश्य था, लेकिन...'

ग्रैटा ने कोई उत्तर नहीं दिया और लगातार रोती ही रही। कुछ देर बाद वह उठी, और उल्टे हाथ से ऐसे आंसू पोंछने लगी, जैसे छोटे बच्चे पोंछते हैं। जब वह कुछ स्वस्थ हुई, तो गैब्रियल ने फिर नरमी से पूछा, 'बताओ न ग्रैटा, तुम्हारी आंखों में आंसू क्यों आये ?'

'मुझे एक नौजवान की याद आ गयी थी, जो इस गीत को गाया करता था। बेचारा !'

०००

'कौन था वह नौजवान ?' मुस्कराकर गैब्रियल ने पूछा।

'वह तब मेरे जीवन में आया था, जब मेरा विवाह नहीं हुआ था, और मैं अपनी दादी के साथ गैलवे में रहा करती थी।'

गैब्रियल के चेहरे से मुस्कराहट धीरे-धीरे गायब हो गयी, और एक अंधा क्रोध उसके अंदर अपना फन उठाने लगा। लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने भरसक अपना स्वर शांत रखते हुए पूछा, 'क्या तुम उसे प्यार करती थीं ?'

'उसका नाम माइकेल फुरे था । बड़ा कमज़ोर था बेचारा । लेकिन, गाता बहुत अच्छा था । यह गाना उसे ख़ास तौर पर पसंद था ।'

गैब्रियल जानबूझकर चुप रहा । वह नहीं चाहता था कि ग्रैटा को लगे कि उस कमज़ोर नौजवान में उसकी कोई रुचि है । उधर, खयालों में खोयी ग्रैटा कह रही थी, 'कितनी बड़ी-बड़ी, सुंदर और भाव-बोधक आंखें थीं उसकी ! मैं तो उनमें डूबकर न जाने कहां पहुंच जाती थी ।'

'साफ़-साफ़ कहो न कि तुम उसे प्यार करती थीं ।'

'मैं उसके साथ घूमने जाया करती थी । वह भी गैलवे में रहता था । उसे घूमने का तो शौक़ था, लेकिन बातें करने का नहीं । बातें मैं ही करती थी, और वह चुपचाप मेरी चटर-पटर सुनता रहता था । खामोश तबियत थी उसकी ।'

'ओह ! तो तुम इसीलिये गैलवे जाने की इच्छुक थीं !'

'क्या कह रहे हो तुम ?' आश्चर्य से ग्रैटा ने पूछा ।

'यही कि तुम गैलवे जाकर उससे मिलने की इच्छुक थीं !'

उसने गैब्रियल की ओर से मुंह मोड़ लिया, और कई मिनट तक चुप रहने के बाद, धीरे-धीरे कहना शुरू किया, 'वह मर चुका है । सिर्फ़ सत्रह वर्ष की आयु में ही मर गया था ।'

'करता क्या था ?' गैब्रियल का गुस्सा अभी तक उफन रहा था ।

'वह गैस कंपनी में काम करता था ।'

जिस अपनेपन से ग्रैटा गैस कंपनी में काम करने वाले इस नौजवान को याद कर रही थी, उससे गैब्रियल को अपने ऊपर शर्म आने लगी । श्रेष्ठता के जो नक़ाब उसने ओढ़ रखे थे, वे एक-एक करके नीचे गिरने लगे, और उसे अपनी असली सूरत, जो काफ़ी अप्रिय और अरुचिकर थी, दिखायी देने लगी । वह एक ढोंगी, स्वार्थी और बेरहम इंसान से ज़्यादा कुछ नहीं था । उसे अपने अंदर का खोखलापन डराने लगा ।

लेकिन फिर भी उसका अहं उसे विनम्र नहीं बनने दे रहा था । उसने बेरुखी से कहा, 'ज़ाहिर है कि तुम दोनों एक दूसरे को चाहते थे ।'

'मुझे मालूम नहीं कि वह मुझसे प्रेम करता था या नहीं, लेकिन यह ज़रूर मालूम है कि मैं उससे प्रेम करती थी . . . आज भी करती हूं . . . और शायद यह प्रेम कभी नहीं मरेगा, कम से कम जब तक मैं जीवित हूं, तब तक तो नहीं ।'

०००

गैब्रियल की समझ में नहीं आया कि वह क्या कहे । आखिर उसने एक अटपटा सवाल पूछ डाला, 'इतनी कम आयु में कैसे चल बसा वह ? कमज़ोर था, इसलिये शायद क्षय-रोग से पीड़ित रहा हो ।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पढ़ें ग्राहक बनें रचनाएं भेजें

भवन का संस्कृत त्रैमासिक

'संविद'

२० वर्षों से नियमित प्रकाशित हो रहा है।

(इस समय २० वें वर्ष के अंक १ और २ उपलब्ध हैं।)

वार्षिक चंदा : १० रुपये

'संविद' के ग्राहक बनकर संस्कृत को प्रोत्साहन दें।

लिखें--संपादक 'संविद', भारतीय विद्या भवन,

के. एम. मुंशी मार्ग, बम्बई–४०० ००७.

दि ट्यूबरक्यूलोसिस एसोसिएशन ऑफ इंडिया, नयी दिल्ली

३४ वां क्षय मुद्रा अभियान

क्षय रोका जा सकता है। श्वास संबंधी नियम का पालन कर छूत-चक्र को नेस्तनाबूद करो। जब खांसी या छींक आये, मुंह हमेशा बंद रखो। चाहे जहां मत थूको।

क्षय से अपनी रक्षा करो। उसके लिए टी. बी. की मुद्रा खरीदो। अपने अभिनंदन-पत्रों या भेंट के पार्सलों पर उसे चिपकाओ। टी. बी. मुद्रा की कीमत मात्र २५ पैसे।

टी. बी. एसोसिएशन को मजबूत बनाने में सहायक बनें।

[भारतीय विद्या भवन के सौजन्य से स्थान समर्पित]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'नहीं, वह क्षय से नहीं मरा।'

'तो फिर ?'

'वह मेरी वजह से मरा,' और यह कहकर ग्रैटा फिर फूट-फूटकर रोने लगी।

लेकिन, ग्रैटा कहती रही, 'जब तक मैं गैलवे में रही, वह कभी मेरे पास खुद नहीं आया; मैं ही साथ घूमने के लिए उसे बुलाने जाया करती थी। अपनी ज़िन्दगी में वह सिर्फ़ पहली और आख़िरी बार मेरे पास आया था।'

'कब ?'

'जब उसे पता चला कि मैं गैलवे छोड़कर, आगे की पढ़ाई के लिए शहर जाने वाली हूं। मैं उसे स्वयं यह सूचना देना चाहती मगर उससे भेंट नहीं हो सकी थी। लिहाज़ा, मैं उसके नाम एक पत्र छोड़ आयी थी कि मैं जा रही हूं, और छह महीने बाद, छुट्टियों में एक महीने के लिए आऊंगी। और इस बीच वह अपने स्वास्थ्य की ओर ध्यान दे।... मैं सुबह जाने वाली थी, और रात को अचानक तेज़ बारिश शुरू हो गयी। मैं खिड़की बंद करने आयी, तो देखा, खिड़की के पास कोई खड़ा है। बत्ती जलायी, तो देखा, माइकेल बारिश में भीगता हुआ कांप रहा था। मैं सन्न रह गयी, और उसके पास जाकर बोली, 'तुम भीग क्यों रहे हो, माइकेल ? घर जाओ, नहीं तो...' उसने कहा 'मैं अब ज़्यादा जिऊंगा नहीं। मगर, तुम कहती हो तो चला जाता हूं।' एक सप्ताह बाद मुझे पता चला कि वह चल बसा।

वह देर तक सिसकती रही... सिसकती रही... और फिर थककर सो गयी। उसका हाथ गैब्रियल के हाथ में था।

उसके सो जाने के बाद, गैब्रियल ने धीरे से अपना हाथ उसके हाथ से अलग किया, और खिड़की के पास आकर कुछ सोचने लगा। वह सोच रहा था... ग्रैटा मुझसे ज़्यादा किस्मत वाली है कि उसके जीवन में सच्चा प्रेम आया और एक नौजवान उसकी ख़ातिर अपनी जान पर खेल गया। वह सम्पूर्ण जीवन जी चुकी है, जबकि उसके मुकाबले वह एकदम खोखला... और आधा-अधूरा है! उसे विश्वास था कि ग्रैटा ने अपनी कहानी अधूरी ही सुनायी है, और बहुत कुछ छिपा गयी है। फिर भी, यह प्रेम कभी उससे बहुत दूर नहीं था, उसने जिस 'मैं' को जमा कर रखा है, वह उसके नीचे दबा था। करुणा और प्रेम से वह द्रवित हो आया। वह जिस पवित्र अहंकार में जीता आया था, वह भाप की तरह उड़ गया। उसे लगा वह एकदम हल्का.. शून्य.. होता जा रहा था..! और उसे जो अपने को सर्वशक्तिशाली मानता था, लग रहा था कि इस अमर... मृत्युंजयी... प्रेम के आगे वह बिलकुल भी शक्तिशाली नहीं है।

बाद में वह ग्रैटा के साथ गैलवे गया। वहां उन्होंने माइकेल की कब्र देखी, जो मिट्टी और बर्फ़ के नीचे गहरी दबी थी। वे दोनों कई मिनट तक, चुपचाप उसे देखते रहे और फिर वापस लौट गये।

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-कथा :

अमावस की रात में पूनम का चंदा

□ शिवनारायण सिंह

रमेश और राकेश एक ही मुहल्ले में रहते थे। दोनों संग-संग स्कूल जाते और साथ-साथ खेलते-कूदते। दोनों में प्रगाढ़ मित्रता थी। रमेश से राकेश का कोई दु:ख देखा न जाता था और राकेश रमेश की कोई पीड़ा देख न सकता था। विद्यालय में रमेश को कोई छात्र पीटता तो राकेश बीच-बचाव करता। राकेश को कोई छेड़ता तो रमेश अपना हर कार्य छोड़कर दौड़ पड़ता। दोनों के प्यार भरे पारस्परिक संबंधों की सब जगह चर्चा होती। एक शाम रमेश राकेश के मकान की छत पर पतंग उड़ा रहा था कि तभी राकेश भी अपनी पतंग लेकर आ पहुंचा। पतंग उड़ाते हुए दोनों में कुछ कहा-सुनी हो गयी। तू-तू-मैं-मैं इस कदर बढ़ गयी कि दोनों मारपीट पर उतारू हो आये। दोनों में बोलचाल बंद हो गयी। विद्यालय में दीवाली का अवकाश घोषित किया गया। दीवाली की छुट्टियां होने पर दोनों प्रति वर्ष खुशी-खुशी संग-संग स्कूल से घर लौटते। पर आज दोनों अलग-अलग मार्ग से अपने-अपने घर आये। रमेश होमवर्क करने बैठा। मगर कुछ प्रश्नों के उत्तर उसे सूझ न रहे थे। बोलचाल बंद न होती तो वह फौरन राकेश से जाकर प्रश्नों के उत्तर पूछ आता और होमवर्क पूरा कर मौज-मजे करता। वह होमवर्क पूरा न हो सकेगा, इस फिक्र में घुलने लगा।

वह घर में इधर-उधर चक्कर काटते हुए कोने में पड़ा हुआ कैरम बोर्ड उठा लाया। पर अकेले कैरम कैसे खेला जाये? वह बैट-बाल ले आया। मगर जल्दी ही ऊब गया। मुहल्ले में उसकी आयु का और कोई लड़का भी न था, जिसके साथ वह खेलकर मन बहलाता। नये कपड़े दीवाली पर तैयार हो चुके थे। पटाखों-फुलझड़ियों के पैकेट मम्मी खरीद लायी थीं। पर रमेश को कुछ भी सुहाता न था। वह राकेश के मकान की छत पर पहुंचकर ही प्रतिवर्ष आतिशबाजी छोड़ा करता। उसे हर पल अहसास होता जैसे उसने राकेश से बैर मोल लेकर ठीक नहीं किया है। मम्मी उसके मन की बात पहले ही भांप चुकी थीं।

दीवाली के दिन नये कपड़े पहनकर वह उदास-सा इधर-उधर टहल रहा था कि तभी मम्मी खील-बताशे लायीं और मिठाइयों से सजी हुई प्लेट उसके हाथों में थमा दी और कहा—'बेटे!, जाओ, यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

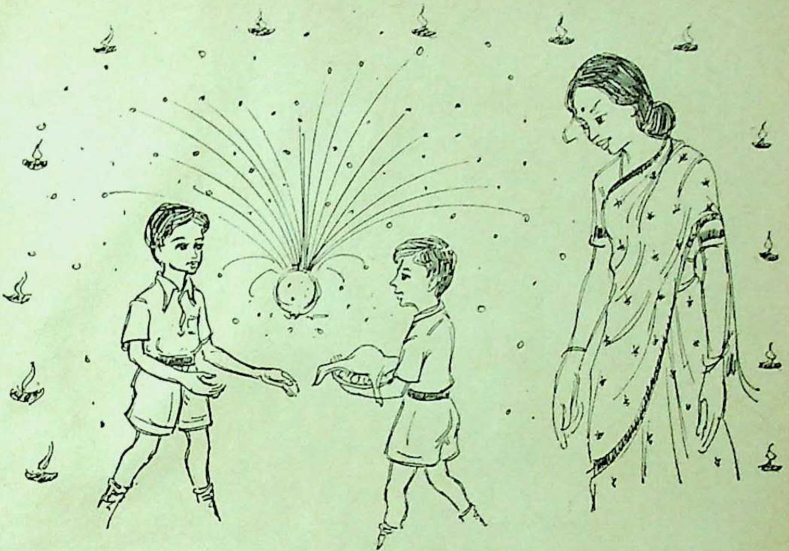

राकेश को दे आओ।' 'मगर . मगर... मैं... !' मम्मी बीच में ही बोल उठीं– 'हां-हां, यही न कि राकेश से बोलचाल बंद होने से तुम इस बार उसे मिठाइयां देने नहीं जाओगे ! बेटे ! बात-बात में लड़ाई-झगड़ा, मनमुटाव ठीक नहीं । हम अज्ञान-वश ही लड़ते हैं । अज्ञान के अंधकार पर ज्ञान के प्रकाश की विजय का पर्व है दीवाली । तुम ज़रा मिठाइयों से सजी प्लेट लेकर राकेश के पास पहुंचो तो सही ।'

रमेश ज्यों ही मिठाइयों वाली प्लेट लेकर राकेश के द्वार पर पहुंचा, उसे यह देख गहरा अचरज हो आया कि राकेश खड़ा मुस्करा रहा है। उसने दौड़कर रमेश को गले लगा लिया। स्नेहपूर्वक पास बैठाया और बोला–'मित्र ! वैर-भाव के अंधेरे को हम पुनः प्रीति की ज्योति जलाकर भुला दें और मित्रता कायम करें ।' दोनों खुशी-खुशी छत पर पहुंचकर आतिश-बाजियां छोड़ने लगे । दोनों ने अनुभव किया जैसे अमावस की अंधियारी रात में पूनम का चंदा निकल आया है ।

–४८ डी व्वायस बिल्डिग, २ रा महला, रूम नं. १, ग्वालिया टैंक, बम्बई-३६

□

'डाक्टर साहब, जरा घर चलकर देखिये तो मेरी पत्नी की आवाज़ बंद हो गयी है या वह ढोंग कर रही है ?'

'मेरे चलने की कोई ज़रूरत नहीं है । आज रात को देर से घर लौटिये, अपने आप पता चल जायेगा !'

–नरेशकुमार बंका

□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

111298

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख क्या है ?

सुख का एक द्वार बंद हो जाने पर दूसरा खुल जाता है। पर कभी हम बंद द्वार की ओर इतनी देर तक देखते रहते हैं कि खुला द्वार ही देख नहीं पाते। —हेलेन केलर

०००

मुझे गहन आश्चर्य है कि सुख की मनोकामना करना भी मेरे दुःख का एक अटूट भाग है। —खलील जिब्रान

०००

सुख देनेवाली चीजें पहले भी थीं और अब भी हैं। फर्क यह है कि जो व्यक्ति सुखों का मूल्य पहले चुकाते हैं और उनके मजे बाद में लेते हैं, उन्हें स्वाद अधिक मिलता है। जिन्हें सुख आसानी से मिल जाता है, उनके लिए सुख ही मौत है। —रामधारीसिंह दिनकर

०००

मनुष्य के सुख को व्यथा और आलस चौपट कर देता है। —शॉपनहावर

०००

सुख भाग्यवान व्यक्ति की परीक्षा लेता है और संकट महान व्यक्ति की। —प्लिनीद यंगर

०००

धरती पर के फूल एक दूसरे से जलते नहीं हालांकि उनमें एक दूसरे से ज्यादा खूबसूरत और खूबियों से भरा हो सकता है। वे सहृदयता के साथ एक-दूसरे के पड़ोस में रहते हैं और एक-दूसरे की खूबियों से सुख उठाते हैं। —जेकब बोह्मी

०००

वही मनुष्य सुखी है जो बिना कोई मानसिक अशांति के सच्चे सिद्धांत और आदर्शों पर चलते हुए अपनी मंजिल तय करता है। —ऐंस्ट्रेंज

०००

सुख को अच्छे गुणों के द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है और इसके लिए जरूरी है कि इसका निर्माण सत्य की आधार-शिला पर किया जाये। —कॉलरिज

०००

दूसरे को सुख देने में स्वयं हमको इतने सुख को प्राप्ति हो जाती है, हमें उसको धन्यवाद करने का मन हो जाता है। —हेनरी द मौंतरलां

[संकलन : रवींद्र बांगड़]

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुन्शी मार्ग, बम्बई-४००००७ के लिए प्रकाशित तथा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, ३६/४८ खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, बंबई—४०० ००४ में मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

111298

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुपर रिन की चमकार ज़्यादा सफ़ेद

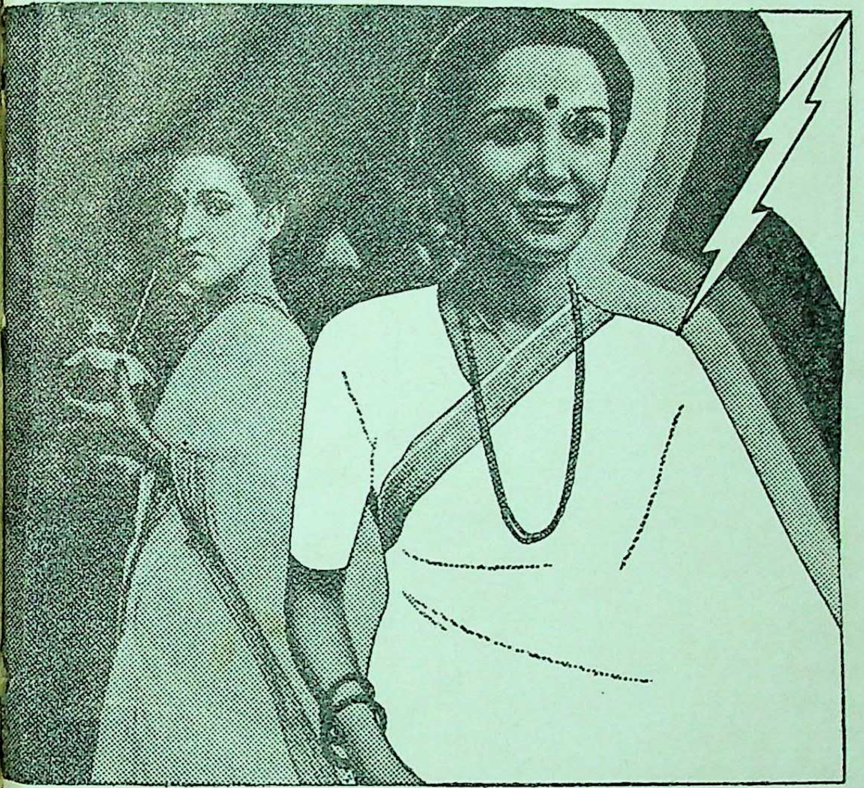

किसी भी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से ज़्यादा सफ़ेद

आज़माइए और फ़र्क देखिए. किसी दूसरी डिटर्जेंट टिकिया या बार के मुकाबले सुपर रिन कपड़ों को ज़्यादा चमकदार और सफ़ेद बनाता है. क्योंकि सुपर रिन में अधिक सफ़ेदी की शक्ति है जो आपके कपड़ों में ऐसी सफ़ेदी लाए कि फ़र्क सभी को नज़र आए!

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

LINTAS RIN 54 161 HI

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Regd. No. BYW 2

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

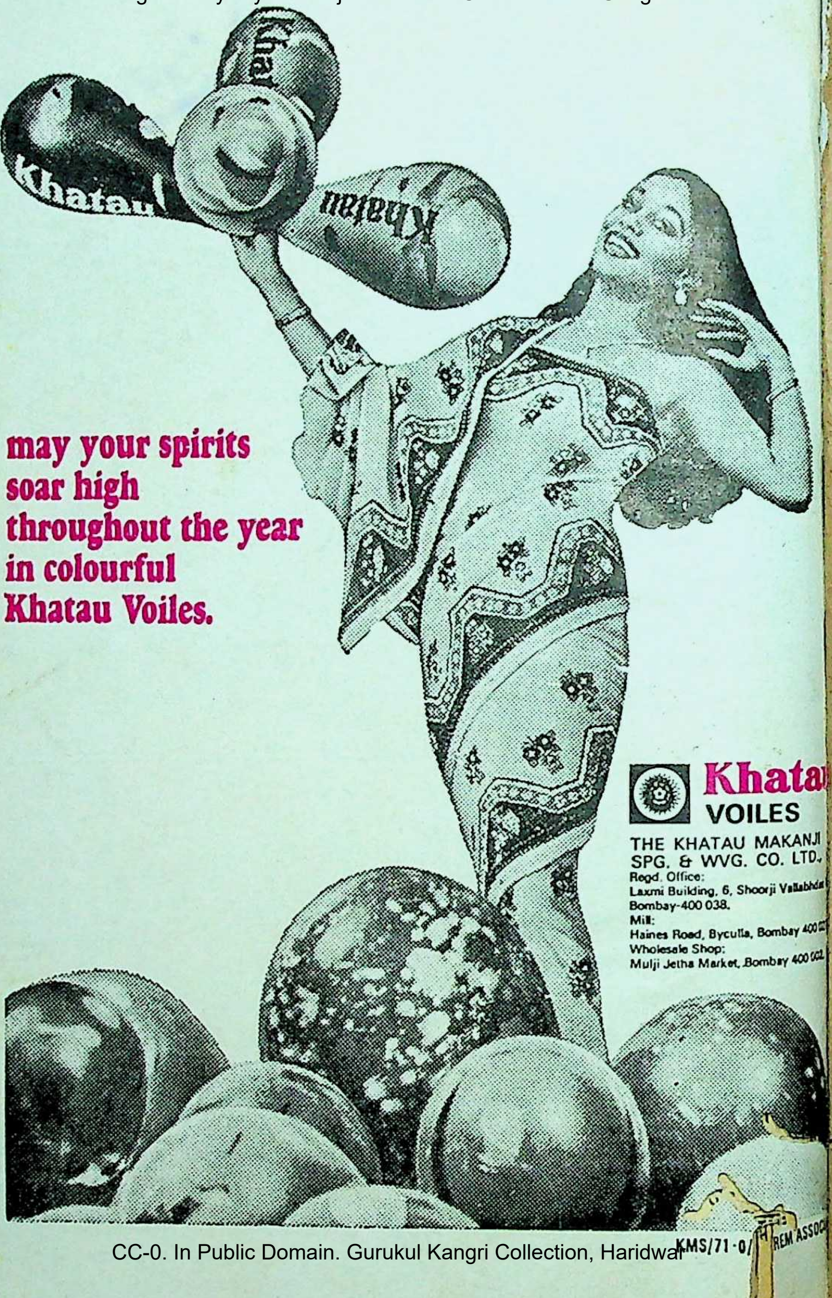

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri